पूंजीवाद की नैतिकता

आपके प्रोफेसर्स जो आपको नहीं बताएंगे

अन्य सम्मिलित
गुरचरन दास, लेखक, इंडिया अनबाऊंड
स्वामीनाथन अय्यर, प्रख्यात आर्थिक स्तंभकार
मारियो वर्गास लोसा, नोबेल पुरस्कार विजेता (साहित्य)
वरनॉन स्मिथ, नोबेल पुरस्कार विजेता (अर्थशास्त्र)
जॉन मैक्केय, सहस्थापक, व्होल फूड्स मार्केट
पार्थ जे शाह, प्रेसिडेंट, सेंटर फॉर सिविल सोसायटी

संपादन– टॉम जी पॉमर
अनुवाद – अविनाश चंद्र

पूंजीवाद की नैतिकता

आपके प्रोफेसर्स जो आपको नहीं बताएंगे

टॉम जी पॉमर द्वारा संपादित
अविनाश चंद्र द्वारा अनुवादित
स्टूडेंट्स फॉर लिबर्टी
एटलस नेटवर्क
सेंटर फॉर सिविल सोसायटी
लिबरल यूथ फोरम

AtlasNetwork.org **StudentsForLiberty.org**

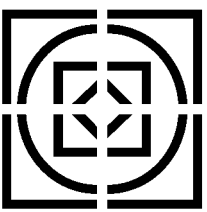

CCS.in

Friedrich Naumann STIFTUNG FÜR DIE FREIHEIT

southasia.fnst.org

सर्वाधिकार सुरक्षित / 2011

स्टूडेंट्स फॉर लिबर्टी व एटलस इकोनॉमिक रिसर्च फाउंडेशन द्वारा

स्टूडेंट्स फॉर लिबर्टी व एटलस नेटवर्क की साझेदारी में सेंटर फॉर सिविल सोसायटी द्वारा प्रकाशित

एटलस इकोनॉमिक रिसर्च फाउंडेशन द्वारा पुनर्मुद्रण की अनुमति प्रदत। इंस्टिट्यूट फॉर ह्यूमेन स्टडीज की अनुमति से लुडविग लैचमैन की "द मार्केट इकोनॉमी एंड द डिस्ट्रिब्यूशन ऑफ वेल्थ" का पुनर्मुद्रण। फाउंडेशन फॉर इकोनॉमिक एजुकेशन की अनुमति से वरनॉन स्मिथ की "ह्यूमेन बेटरमेंट थ्रू ग्लोबलाइजेशन" का पुनर्मुद्रण। जॉन टेम्पलटन फाउंडेशन की अनुमति से जगदीश भगवती की "डज द फ्री मार्केट कोरोड मोरल कैरेक्टर? टू द कॉन्ट्रेरी" का पुनर्मुद्रण। अन्य सभी निबंधों के प्रकाशन के लिए उनके लेखकों की अनुमति प्राप्त।

टॉम जी पॉमर द्वारा संपादित

अविनाश चंद्र द्वारा अनुवादित

आवरण डिजायन– सदफ हुसैन

संपादक इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए न केवल लेखकों और सर्वाधिकार धारकों का बल्कि स्टूडेंट्स फॉर लिबर्टी के सदस्यों विशेषकर क्लार्क रूपर, ब्रैंडन वासिस्को और अंकुर चावला का आभार व्यक्त करते हैं, जिनके अथक प्रयासों के फलस्वरूप निबंधों को प्रकाशन के अनुरुप तैयार करना संभव हो सका। आजादी के प्रति उनका समर्पण व उत्साह अपने आप में उत्साहवर्द्धक है।

अन्य जानकारी के लिए संपर्क करें–

सेंटर फॉर सिविल सोसायटी
ए– 69, हौजखास, नई दिल्ली– 110016
फोनः 91 11 26537456
ईमेल– ccs@ccs.in
वेबसाइट– www.ccs.in

विषय तालिका

प्राक्कथन पे. नं.

पूंजीवाद का धर्मः 07
गुरचरन दास

प्रस्तावना

पूंजीवाद की नैतिकताः 11
टॉम जी पॉमर

खंड एकः उद्यमशील पूंजीवाद के गुण

एक उद्यमी का साक्षात्कारः 25
जॉन मैक्केय से बातचीत (टॉम जी पॉमर द्वारा संचालित)

स्वतंत्रता और गरिमा द्वारा होती है आधुनिक दुनिया की व्याख्या 36
डेरद्रे एन मैकक्लोस्की

प्रतिस्पर्धा एवं सहकारिताः 40
डेविड बोआज

लाभ आधारित दवा और करुणा का उद्देश्यः 46
टॉम जी पॉमर

खंड दोः स्वैच्छिक वार्तालाप और स्वहित

विरोधाभासी नैतिकताः 51
माओ युशी (ज्यूड ब्लानसेटे द्वारा अनुवादित)

बाजार आधारित समाज में समानता और असमानता का नैतिक तर्कः 61
लियोनिड वी निकोनोव

एडम स्मिथ और लालच का मिथकः 67
टॉम जी पॉमर

आयन रैंड और पूंजीवादः नैतिक क्रांतिः 72
डेविड केली

खंड तीनः धन का उत्पादन व वितरण

भारत की चुनौतीः आर्थिक स्वतंत्रता का असमान वितरणः 87
पार्थ जे शाह

असमानता को लेकर चिंतित ना होंः 93
स्वामीनाथन एस अंकलेसरिया अय्यर

बाजार आधारित अर्थव्यवस्था और धन का वितरणः 97
लुडविग लैचमैन

राजनैतिक एवं आर्थिक स्वतंत्रता का संयोजन मानवता के चमत्कारों को जन्म देता हैः 103
तेम्बा ए नोलुत्शुंगु

खंड चारः वैश्विक होता पूंजीवाद

वैश्विक पूंजीवाद और न्यायः 109
जून अरुंगा

वैश्वीकरण के माध्यम से मानवता की उन्नतिः 113
वरनॉन स्मिथ

क्या मुक्त बाजार नैतिक चरित्र को विकृत करता है? एक विरोधाभासः 118
जगदीश भगवती

स्वतंत्रता की संस्कृतिः 121
मारियो वर्गास लोसा

मनोरंजन एवं लाभ हेतु कुछ और अध्ययन सामग्री (और उन्नत स्कूली दस्तावेज) 128

नोट्स 131

यथोचित नामों की सूची 137

फ्रेडरिक न्यूमन स्टिफटुंग फर डी फ्रेहाइट के बारे में 139

सेंटर फॉर सिविल सोसायटी के बारे में 139

प्राक्कथनः पूंजीवाद का धर्म

– गुरचरन दास

टॉम पॉमर ने बाजार के नैतिक पहलूओं से संबंधित सर्वश्रेष्ठ विचारों पर आधारित निबंधों को एक साथ पिरोने वाली अद्‌भुत श्रृंखला का संपादन किया है। प्राक्कथन के माध्यम से इस परिचर्चा में योगदान प्रदान करने का आमंत्रण पाकर मैं अपने आप को काफी सम्मानित महसूस कर रहा हूं।

यद्यपि सन् 1991 से भारत में आर्थिक सुधारों की शुभारंभ और मुक्त बाजार के साथ भारतियों के प्रेम प्रसंग को शुरू हुए दो दशक बीत चुके हैं, इसके बावजूद पूंजीवाद को भारत में अपना मुकाम पाने के लिए अबतक जद्दोजहद करना पड़ रहा है। अधिकांश लोगों की भांति भारतीय भी मानते हैं कि बाजार फलदायक तो है लेकिन नैतिक नहीं है। लेकिन मेरी राय इसके बिल्कुल उलट है। मेरा मानना है कि इंसान अनैतिक होता है और लोकतंत्र के तहत या राजतंत्र के तहत, समाजवादी व्यवस्था हो अथवा पूंजीवादी समाज, बुरा व्यवहार वही करता है। बाजार नामक संस्था अपने आप में अत्यंत नैतिक होती है, और इसकी इस नैतिक प्रवृति के बाबत जो चीज मुझे आश्वस्त करती है वह है भारतीय पारंपरिक धर्म के प्रति मेरा विश्वास। बाजारगत प्रणाली के मूल में स्व–हित से प्रेरित आम जन, जो बाजार में शांतिपूर्ण तरीके से अपने हित को आगे बढ़ाते हैं के मध्य आदान प्रदान की प्रक्रिया का उद्देश्य नीहित है। धर्म ही वह कारण है जो बाजार में दो अंजान व्यक्तियों को परस्पर एक दूसरे पर विश्वास करने योग्य बनाता है। यह एक अदृश्य श्लेष (चिपकाने वाला पदार्थ) के जैसा है, जो अंतर्निहित साझा नियमों पर आधारित होता है और यह सहयोग और लेनदेन के दौरान इस प्रक्रिया में शामिल लोगों को सुरक्षा की भावना प्रदान करता है।

यह विचार कि एक प्राचीन भारतीय अवधारणा पूंजीवादी प्रकृति को अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, विचित्र है। कॉलेज के दिनों में मैंने पश्चिमी विचारों का अनुभव किया और बिना सोचे बिचारे यह मान लिया कि पूंजीवाद का उद्‌भव पश्चिमी देशों में हुआ था। मैंने एडम स्मिथ, मार्क्स, जॉन लॉक व अन्यों को पढ़ा जिससे मेरा परिचय उदारवाद के साथ हुआ। लेकिन मुझे अपनी गलती का अहसास काफी बाद में हुआ जब मुझे दो हजार साल पुराने संस्कृत महाकाव्य 'महाभारत' को पढ़ने का मौका प्राप्त हुआ। यह महाकाव्य धर्म की अवधारणा से प्रभावित है और जैसे जैसे मैं इसे समझने की कोशिश करता गया, मुझे एहसास होता गया कि उदारवाद और बाजारी पूंजीवाद आधारित विचार की जड़ें गैर पश्चिमी भी हो सकती हैं और उदारवादी परंपराएं वास्तव में सार्वभौमिक हैं।

धर्म एक हताश कर देने वाला शब्द है (भारतीयों लोगों तक के लिए) और इसका पालन करना आसान काम नहीं है। कर्तव्य, परोपकार, न्याय, कानून व रीति–रिवाजों आदि का थोड़ा फर्क तो पड़ता है लेकिन यह मुख्य रूप से निजी व सार्वजनिक जीवन दोनों में उचित कार्यों को करने से संबंधित है। इसका मूल संस्कृत के 'धम्म' से उद्धृत है जिसका तात्पर्य है नींव की भांति अडिग रहना और उसे बरकरार रखना। यह वह नैतिक सिद्धांत है जो एक व्यक्ति, समाज और पूरी व्यवस्था को आपस में बांधे रखता है। 'अडिग

रहने' के अपने मूल से धर्म 'संतुलन' का लक्ष्य वहन करता है– यह सभी मानव जाति का संतुलन है जो ब्रह्मांड के संतुलन और व्यवस्था में प्रतिबिंबित होता है। जब लोग धर्म के अनुसार व्यवहार करते हैं तो समाज में व्यवस्था, संतुलन और विश्वास होता है।

धर्म बाजार की गतिशीलता को विशेष तौर पर और लोक नीतियों को सामान्य तौर पर समझने के लिए अनुकूल है क्योंकि यह नैतिक रूप से परिपूर्णता की तलाश नहीं करता। यह मानवजाति की व्यवहारमूलक दृष्टि पर आधारित है, जो इंसान को मिलनसार लेकिन अपूर्ण मानता है जिसके भीतर ढेरों इच्छाएं हैं और वह तमाम लालसाओं से युक्त है और उसे नियंत्रित करने के लिए धर्म की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणार्थ, एक राजा का धर्म समाज की उत्पादनशील शक्तियों का पालन पोषण करना है। "हे भरत, एक राजा को वैश्यों (व्यापारियों) और आमजन के प्रति सदैव इस प्रकार वर्ताव करना चाहिए जिससे कि उनकी उत्पादन शक्ति में वृद्धि हो सके। वैश्य राज्य की शक्ति को बढ़ाता है, कृषि में सुधार करता है और अपने व्यापार का विकास करता है। एक बुद्धिमान राजा उनसे हल्के कर वसूल करता है। (महाभारत XII.87) अत्यंत व्यवहारिक सुझाव देते हुए महाकाव्य आगे कहता है कि यदि ऐसा नहीं होता है तो व्यवसायी पड़ोसी राज्यों को चले जाते हैं।"

इस प्रकार धर्म, समाज को एक मूल संहिता (नियमावली) प्रदान करता है जिसे लोगों द्वारा आमतौर पर धारण किया जाता है, और जो लोगों को परस्पर सहयोग करने की अनुमति प्रदान करता है। यह शासक और शासित दोनों वर्गों के लिए बाध्यताओं और कर्तव्यों का निर्धारण करता है। बाजार में यह खरीददारों और विक्रेताओं के लिए कुछ निषेधों का निर्धारण भी करता है। चूंकि हम एक साझा धर्म का पालन करते हैं इसलिए मैं आपके द्वारा प्रदान किए गए चेक को सहर्ष स्वीकार कर लेता हूं। एक कैब (किराए का वाहन) चालक मुझे बतौर यात्री अपनी गाड़ी में बैठा लेता है क्योंकि वह जानता है कि मैं धर्म की बाध्यता के कारण यात्रा के समापन पर उसे उसके पैसे दे दूंगा। मैं अपने फल विक्रेता के उस दावे पर यकीन कर लेता हूं जो इस सप्ताह आमों के अपेक्षाकृत अधिक महंगे होने का कारण उसकी उच्च गुणवत्ता बताती है। यदि आम खराब निकलते हैं तो मैं उसे उसके धर्म का पालन न करने का दोषी ठहराऊंगा और उसे इसकी सजा मैं, आगे से उसके प्रतिस्पर्धी फल विक्रेता के पास से फल खरीद कर दूंगा। वह ना सिर्फ बतौर ग्राहक मुझे खो देगी बल्कि बातों से फैली बुराई के कारण अन्य ग्राहकों को भी खो देगी– वह धर्म का अनुपालन ना करने वाले के तौर पर पहचानी जाएगी। महाजन उसका विश्वास नहीं करेंगे, वह अच्छे कर्मचारियों को भी अपने यहां कार्य करने के लिए आकर्षित करने योग्य नही रह जाएगी। दूसरी ओर उच्च धर्म वाले व्यक्ति को पुरस्कार स्वरूप ख्याति प्राप्त होती है और उसे ग्राहकों, महाजनों और कर्मचारियों की संतुष्टि का लाभ प्राप्त होगा।

अंततोगत्वा, बाजार प्रणाली कानून पर नहीं बल्कि लोगों के स्वतः नियंत्रण की प्रक्रिया पर निर्भर करता है। धर्म की अवधारणा अधिकांश समाजों के ऐसे बहुसंख्य लोगों को नियंत्रित करती है जो परस्पर सम्मान का व्यवहार करने में विश्वास रखते हैं। हालांकि सभी समाजों में कुछ ऐसे धूर्त लोग होते हैं जो धर्म के बंधन में विश्वास नहीं रखते, और इसलिए कानून और उसके अनुपालन की आवश्यकता पड़ती है। महाभारत में मिलने

वाले वर्णन के मुताबिक राजा युद्धिष्ठिर को निर्देश देते हुए भीष्म कहते हैं कि राजा को अधर्मी लोगों को दंडित करने के लिए नियमन और दंड (राजदंड) की आवश्यकता पड़ती है।

इस प्रकार, यह कहना कि भारत का आर्थिक उदय मुक्त व्यापार के सहारे होगा कदाचित आश्चर्यजनक प्रतीत नहीं होता है। बाजार का इसका लंबा इतिहास रहा है। प्राचीन काल से ही व्यापारी समाज का एक सम्मानित सदस्य रहा है। भारत को हमेशा से ही कमजोर शासन और मजबूत समाज प्राप्त हुआ है, जबकि चीन को परंपरागत तौर पर मजबूत शासन और कमजोर समाज प्राप्त हुआ है। इसलिए भारत का इतिहास युद्धरत राज्यों वाला रहा है जबकि चीन का इतिहास साम्राज्य वाला। चीन में सम्राट कानून का स्त्रोत और व्याख्या करने वाला माना जाता था जबकि इसके उलट भारत में राजा की शक्तियों को धर्म भी सीमित करता था। भारत में धर्म उस राजा से भी बड़ा होता था, जिससे कि धर्म के पालन की आशा की जाती थी। यहां धर्म का व्याख्याता राजा की बजाए ब्राह्मण होता था जिससे कि प्राचीन भारत में सरकार की शक्तियों पर अंकुश लगाया जाता था।

इस प्रकार, 1950 से 1990 के दौर की संरक्षणवादी समाजवादी सरकारें भारतीय इतिहास के हिसाब से बेकायदे वाली रहीं। भारत ने सरकारी एजेंसियों के माध्यम से सार्वजनिक क्षेत्र को सर्वोपरि रखते हुए और निजी उद्योगों पर दुनियां में सबसे बुरी तरह नियंत्रण रखते हुए औद्योगिकीकरण करने की कोशिश की, जिसे लाइसेंस राज के नाम से जाना गया। हैरत की बात नहीं कि यह असफल हो गया। भारत सरकार के पास इस सर्वोपरि अर्थव्यवस्था को संभालने की न तो क्षमता थी, और ना ही देश के विकेंद्रीकृत ऐतिहासिक स्वभाव का ख्याल रखने वाली केंद्रीयकृत नौकरशाही सरकार। दिवालिया होने की कगार पर पहुंचकर देश ने वर्ष 1991 में आर्थिक सुधारों की श्रृंखला के साथ 'यू टर्न' लिया और समाजवादी व्यवस्था को ध्वस्त कर बाजार आधारित व्यवस्था की स्थापना की। महज बीस वर्ष की पूंजीवादी विकास ने भारत को विश्व की दूसरी सबसे तेज गति से बढ़ती बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित कर दिया। अद्भुत व तकनीकतंत्र के कारण असाधारण बुनियादी ढांचा तैयार करने वाले चीन की 'उपर' से लिखी गई सफलता के विपरीत भारत अपने इतिहास और स्वभाव के अनुरूप 'नीचे' से विकास कर रहा है।

आर्थिक गतिविधियों में एक उद्देश्य निहित होता है और भारत की प्राचीन कालीन सभ्यताएं अर्थ (धन) को संपन्नता का आधार बताते हुए इस बात से अच्छी तरह वाकिफ थीं। महाभारत हमें स्मरण कराता है कि अर्थ का संग्रह धर्म के अधीनस्थ है। दूसरे शब्दों में, धनोपार्जन के सही और गलत दोनों तरीके हैं। आज की भाषा में कहें तो अर्थ का अर्जन दुनियां को बेहतर स्थान बनाना है– गरीबों को गरीबी से बाहर निकालना है। इस प्रकार पूंजीवाद को नैतिक उद्देश्य समाज को विपन्नता से समृद्धि की ओर ले जाना है। असल समस्या तब शुरू होती है जब गरीबी पर विजय प्राप्त कर लिया जाता है और समाज समृद्ध और मध्यमवर्गीय हो जाता है। एक निश्चित बिंदु पर पहुंचने के बाद धन, लोगों को और अधिक खुश नहीं कर पाता है और लोग दूसरे लक्ष्यों की तलाश में जुट जाते हैं। पूंजीवाद का सफलता एक समय अपनी ताकत खोने लगती है जब बचत करने वाली एक पीढ़ी, खर्च करने के प्रति समर्पित पीढ़ी का स्थान ले लेती है। यह वह समस्या है

जिसका सामना आने वाली पीढ़ी के दौरान भारत और चीन को करनी पड़ेगी। गलाकाट प्रतिस्पर्धा मुक्त बाजार का दूसरा पहलू है जो संक्षारक हो सकती है। लेकिन प्रतिस्पर्धा आर्थिक उत्प्रेरक भी होती है जो परोपकार को प्रोत्साहित करती है।

अधिक की कामना करना मनुष्य की प्रकृति है। और धर्म सभी कामनाओं को उनके अस्तित्व के आधार पर सुसंगत तरीके से क्रमबद्ध करता है। चूंकि नियमन की तमाम संख्याएं भी धूर्त लोगों को धूर्तता करने से नहीं रोक सकती, इसलिए धर्म के नाम पर बाजार में शामिल सभी कारकों के लिए स्व नियंत्रण की आवश्यकता पड़ती है। नीति निर्माताओं के समक्ष गैर नियमित स्वतंत्र बाजारों और केंद्रीयकृत योजनाओं के बीच चयन का विकल्प नहीं बल्कि नियमन के सही मिश्रण प्राप्त करना होता है। वामपंथियों को छोड़कर भारत में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उत्पादकता पर सरकारी स्वामित्व चाहता हो जहां प्रतिस्पर्धा का आभाव सरकारी हस्तक्षेप को और अधिक बढ़ा देता हो। धर्म कभी भी नैतिक श्रेष्ठता कि ओर उन्मुख नही रहा है जो कि अनिवार्य रूप से धर्मतंत्र या तानाशाही की ओर ले जाता है। यह तो सीमित मात्रा में सुसंगत विश्व का प्रस्ताव रखता है, जो कि हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन के अत्यंत करीब है और इसीलिए बाजार की आदान प्रदान की प्रक्रिया के लिए उपयुक्त है। धर्म का एक अर्थ स्व नियंत्रण भी है और वह विश्वास जो समाज को स्व नियंत्रित करने में सहायता करता है, मेरे हिसाब से 'पूंजीवाद का धर्म' है।

– गुरचरन दास
नई दिल्ली, जनवरी 2012.

प्रस्तावनाः पूंजीवाद की नैतिकता

यह पुस्तक दार्शनिक रॉबर्ट नॉजिक के कथ्य 'पूंजीवाद, व्यस्कों के बीच आपसी सहमति से होने वाला कृत्य है' के नैतिक औचित्य के बाबत है। यह सहकारी उत्पादन प्रणाली और स्वतंत्र आदान प्रदान की प्रक्रिया के बारे में है जिसका चरित्र चित्रण ऐसे कार्यों की प्रबलता के द्वारा होता है।

कुछ शब्द शीर्षक के बारे में – पूंजीवाद की नैतिकता के बारे में, जो कि क्रमवार है। पुस्तक में शामिल निबंध पूंजीवाद की 'नैतिकता' के बारे में हैं, हालांकि इनका सार महज नैतिक दर्शनशास्त्र तक ही सीमित नहीं है और ये अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र, इतिहास, साहित्य व अन्य विषयों के साथ संबंधों की व्याख्या भी करते हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात कि, ये निबंध पूंजीवाद की नैतिकता के बारे में हैं, ना कि केवल स्वतंत्र विनिमय की नैतिकता के बारे में। 'पूंजीवाद' का संदर्भ केवल सेवाओं के आदान प्रदान वाले बाजार के लिए नहीं है, जो कि प्राचीनकाल से अस्तित्व में है, बल्कि इसका संदर्भ नवाचार की प्रणाली, धन के सृजन और उस सामाजिक परिवर्तन से है जिसने करोड़ों लोगों की जिंदगी को समृद्धि से भर दिया है जो कि उसकी पिछली पीढ़ी के लिए अकल्पनीय बात थी।

पूंजीवाद का संबंद्ध न्यायिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पद्धतियों से है जो समानता के अधिकार को आत्मसात करती है और प्रतिभा के लिए कार्य के मौके उपलब्ध कराती है। इससे विकेंद्रीकृत नवाचार और परीक्षण व गलतियां करने की प्रक्रिया को स्फूर्ति प्राप्त होती है। अर्थशास्त्री जोसेफ शुम्पीटर इसे बाजारी आदान प्रदान की स्वैच्छिक प्रक्रिया के माध्यम से होने वाला 'सृजनशील विध्वंस' की संज्ञा देते हैं। पूंजीवादी संस्कृति उद्यमशील, वैज्ञानिक, जोखिम उठाने वालों, अन्वेषक, सृजक का सम्मान करती है। पूंजीवाद के मूल में आध्यात्मिक और सांस्कृतिक उद्यम निहित है, यद्यपि दार्शनिकों व विचारकों (मुख्य रूप से मार्क्सवादियों) द्वारा भौतिकतावादी कहकर इसका माखौल उड़ाया जाता है जबकि वे स्वयं भौतिकतावाद को आत्मसात करते हैं। बतौर इतिहासकार जॉयसी एप्पलब्वॉय ने अपने हालिया अध्ययन 'द रेलेंटलेस रिवोल्यूशनः ए हिस्ट्री ऑफ कैपिटलिज्म' में लिखा है 'चूंकि पूंजीवाद एक सांस्कृतिक प्रणाली है न कि साधारण आर्थिक प्रणाली, इसलिए इसकी व्याख्या केवल भौतिक कारकों के आधार पर नहीं हो सकती।'

पूंजीवाद एक सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों की प्रणाली है। अर्थशास्त्री डेविड स्वैब व एलिनर ऑस्ट्रॉम ने मुक्त अर्थव्यवस्थाओं के रखरखाव के नियम और कायदों की भूमिका के बाबत एक उपयोगी खेल सिद्धांत में लिखते हैं, 'मुक्त बाजार उन मानदंडों पर मजबूती से टिके रहते हैं, जो हमें धोखाधड़ी से बचाते हैं और जो भरोसा कायम करने वाले होते हैं।' हितों के टकराव वाला नीतिहीन अखाड़ा बनने से इतर जैसा कि पूंजीवाद व्यवस्था को नीचा दिखाने या बर्बाद करने वालों द्वारा प्रायः इसकी व्याख्या की जाती है, पूंजीवादी संबंध नैतिक नियमों एवं मानदंडों पर आधारित एक अत्यंत ही संरचित प्रक्रिया है। वास्तव में, पूंजीवादी व्यवस्था उस आचार संहिता

पर टिकी है जो कि लूट पाट की नीति को नकारती है और जो अन्य अर्थव्यवस्थाओं और राजनैतिक प्रणाली में अपनायी जाती है जिससे कुछेक धनवानों को समस्त धन पर कब्जा जमाकर बैठने का मौका प्राप्त होता है। (वास्तव में आज भी अधिकांश देशों में, और मानव जाति के इतिहास के अधिकांश समय में यह माना जाता रहा है कि वे जो अमीर हैं, वे दूसरों का हिस्सा छीन कर और विशेषकर संगठित ताकतों जिसे आज सरकार कहते हैं– पर नियंत्रण रखकर अमीर बनते हैं। ऐसे कुलीन लुटेरे शक्तियों का इस्तेमाल एकाधिकार प्राप्त करने के लिए करते हैं और दूसरों के उत्पाद को करों के द्वारा रोकते हैं। वे सरकारी खजाने को भरते हैं और बदले में राज्य द्वारा थोपे गए एकाधिकार और प्रतिस्पर्धा पर रोक से फायदा उठाते हैं। जन सामान्य अपराधी बने बगैर धनी बन जाएं ऐसा सिर्फ पूंजीवादी शर्तों के तहत ही संभव है।)

अर्थशास्त्री व इतिहासकार डेरद्रे मैकक्लोस्की के कथ्य 'द ग्रेट फैक्ट' पर विचार कीजिएः "सन् 1700 या 1800 के लगभग के प्रति व्यक्ति आय की अपेक्षा वर्तमान में प्रति व्यक्ति वास्तवित आय काफी बढ़ गई है। उदाहरण के लिए, कम से कम 16वीं शताब्दी जैसे बड़े कारकों के कारण आधुनिक आर्थिक विकास का अनुभव कर चुके ब्रिटेन या अन्य देशों में।" मानव इतिहास में यह सब में अभूतपूर्व है। वैसे मैकक्लोस्की का यह आंकलन वास्तव में अनुदारवादी है। यह विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में हुई अदभुद प्रगति को ध्यान में नहीं रखता है जिसने पूरी दुनिया को हमारी उंगलियों की पहुंच तक सीमित कर दिया है।

पूंजीवाद मनुष्य की सृजनशीलता को सम्मान प्रदान कर और इसके उद्यमशील नवाचार; वह मायावी कारक जो हमारी आज की जीवनशैली और 19वीं शताब्दी के पूर्व के हमारे पूर्वजों की कई पीढ़ियों के पहले की जीवन शैली के बीच के फर्क की व्याख्या करता है, को प्रोत्साहित कर मानवता की ही सेवा में लगाता है। मानव जीवन को बेहतर बनाने वाले नवाचारों में केवल विज्ञान और तकनीकि के क्षेत्र के ही नवाचार शामिल नहीं हैं बल्कि इनमें संगठनात्मक नवाचार भी शामिल हैं। सभी प्रकार के नए व्यवसायिक प्रतिष्ठानों की स्थापन बड़ी तादात में लोगों के श्रम प्रयासों के साथ स्वैच्छिक तौर पर समन्वय स्थापित करके ही होती है। नए वित्तीय बाजार व इसके उपकरण बचत व निवेश के करोड़ों लोगों के निर्णय को एक दूसरे से दिन के चौबीसों घंटे जोड़ते हैं। दूरसंचार के नए नेटवर्क दुनिया भर के एक कोने से दूसरे कोने के लोगों को समीप लाने का काम करते हैं। (आज ही मेरी फिनलैंड, चीन, मोरक्को, यूनाइटेड स्टेट्स और रूस में रहने वाले मेरे मित्रों से बातचीत हुई है और यूनाइटेड स्टेट्स, कनाडा, पाकिस्तान, डेनमार्क, फ्रांस और किर्गिस्तान के मित्रों एवं परिचितों से फेसबुक के माध्यम से संदेशों का आदान प्रदान हुआ है।) नए उत्पाद हमें ऐशो आराम, खुशी और शिक्षा प्रदान करते हैं जो पिछली पीढ़ी के लिए अकल्पनीय हुआ करती थी। (यह मैं अपने एप्पल मैकबुक प्रो पर लिख रहा हूं।) इन बदलावों ने हमारे समाज में पूर्व के समाज की तुलना में नाटकीय परिवर्तन लाए हैं।

पूंजीवाद केवल वस्तुओं का निर्माण करना भर ही नहीं है जैसा कि समाजवादी तानाशाहों के द्वारा अपने दासों को "भविष्य के निर्माण" के लिए उपदेश दिया जाता था। पूंजीवाद का संबंध केवल कठिन परिश्रम करने अथवा त्याग करने अथवा व्यस्त रहने से नहीं

बल्कि मूल्यों का निर्माण करने से है। जो लोग पूंजीवाद को समझने में असफल रहते हैं वे रोजगार सृजन के लिए कार्यक्रमों को शुरू करने के प्रति खासे तत्पर रहते हैं। उन्हें काम की बात को लेकर गलतफहमी है और पूंजीवाद के बाबत और ज्यादा गलतफहमी है। एक बहुचर्चित कहानी के मुताबिक अर्थशास्त्री मिल्टन फ्रीडमैन को एशिया में बन रहे एक बहुत विशाल नहर के निर्माण कार्य को दिखाया जा रहा था। फ्रीडमैन का ध्यान एक बड़ी ही अजीब घटना की ओर गया। उन्होंनें देखा कि श्रमिक बड़े बड़े पत्थरों और मिट्टी के ढेर को मिट्टी खोदने के मशीनों की बजाए छोटे छोटे फावड़ों की सहायता से हटाने की कोशिश कर रहे थे। फ्रीडमैन द्वारा इसका कारण पूछने पर कहा गया कि, 'आप समझे नही, यह एक रोजगार सृजन का कार्यक्रम है।' इस पर फ्रीडमैन की प्रतिक्रिया थी, 'अच्छा! मुझे लगा कि आप लोग शायद नहर बनाने की कोशिश कर रहे हैं। यदि आप रोजगार का ही सृजन करना चाहते हैं तो आप फावड़ों के स्थान पर उन्हें चम्मच क्यों नहीं दे देते?'

स्वार्थी और हिमायती पूंजीवादी एच. रॉस पेरोट जब 1992 में यूनाइटेड स्टेट्स में राष्ट्रपति का चुनाव लड़ रहे थे तो अध्यक्षीय भाषण के दौरान विलाप कर रहे थे कि अमेरिकी लोग ताइवान से कम्प्यूटर चिप्स खरीद रहे हैं ताइवान के लोगों को आलू के चिप्स बेच रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पेरोट इस बात से शर्मिंदा थे कि अमेरिकी लोग महज आलू के चिप्स बेच रहे थे। वह लेनिन की विचारधारा को लेकर आए जिसके मुताबिक मूल्य वर्द्धन केवल फैक्ट्रियों में होने वाले औद्योगिक उत्पादों से ही होता है। स्टैंडफोर्ड यूनिवर्सिटी के अर्थशास्त्री माइकल बोस्किन ने ठीक ही कहा है कि जब आप एक डॉलर के मूल्य के कम्प्यूटर चिप्स की बात करते हैं या एक डॉलर की कीमत के आलू के चिप्स की बात करते हैं तो वास्तव में आप केवल डॉलर की कीमत के बारे में ही बात करते हैं। मूल्य वर्द्धन चाहे इदाहो में आलू पैदा करके हो या ताइपे में सिलिकॉन को तराश कर हो, मूल्य वर्द्धन हो रहा है। तुलनात्मक अनुकूल परिस्थितियां, विशेषज्ञता और व्यापार की कुंजी हैं और उत्पादन के मूल्यों में हीनता अथवा शर्मिंदगी जैसी कोई बात नहीं होती। भले ही वह किसान हो, या बढ़ई (आज अपने पुस्तकालय की साज सज्जा के लिए मैनें तीन बढ़ईयों से काम लिया और अधिक से अधिक पुस्तकों को समायोजित करने में सफलता प्राप्त की। इससे मुझे इस बात का भान हो गया कि उन्होंनें मेरे जीवन में कितने अधिक मूल्यों का वर्द्धन किया) या फिर फाइनेंसर अथवा कोई और पेशे से जुड़ा व्यक्ति। बाजार– न कि अभिमानी स्वार्थी राजनेता– हमें दिखाता है कि हम कब मूल्य वर्द्धन कर रहे हैं, लेकिन इसकी जानकारी मुक्त बाजार के बगैर नहीं हो सकती।

पूंजीवाद महज लोगों द्वारा स्थानीय बाजार में अंडों के लिए बटर खरीदना भर की ही प्रक्रिया नहीं है, जैसा कि सदियों से होता आ रहा है। यह मानवीय ऊर्जा और कौशल को बड़े पैमाने पर जुटाने और उनके मूल्य वर्द्धन करने की वह प्रक्रिया है जो मानवीय इतिहास में पहले कभी नहीं देखी गई। यह आम लोगों के लिए धन के सृजन की प्रक्रिया है जो अतीत में धनवानों, अत्यंत शक्तिशाली राजाओं, सुल्तानों और सम्राटों को चकाचौंध और आश्चर्यचकित कर देता। यह लंबे समय से मोरचाबंदी किए हुए सत्ता, प्रभुत्व और विशेषाधिकार की प्रणाली के क्षरण और प्रतिभा के लिए भविष्य के मौकों की उपलब्धता के बारे में है। यह ताकत को मान मनुहार से परिवर्तित करने के बारे में

है। यह ईर्ष्या को प्रशंसा से परिवर्तित करने के बारे में है। यह मेरे और आपके जीवन को संभव बनाने के बारे में है।

(यह केवल साधारण लोगों के उपर आधिपत्य और उन पर हुकूमत करने के बूते की बात है जो राजाओं, महाराजाओं और सुल्तानों के पास पुराने समय में हुआ करती थी और जो अब नहीं है। उनके पास दासों द्वारा निर्मित विशाल महल हुआ करते थे जो जनता से वसूले गए कर के पैसों से बनते थे, लेकिन घर के अंदर वातानुकूलित अथवा हीटर नहीं थें। उनके पास दास और नौकर हुआ करते थे लेकिन कपड़े और बर्तन धोने की मशीनें नहीं हुआ करती थी। संदेश वाहकों की फौज हुआ करती थी लेकिन सेलफोन या वाईफाई नहीं हुआ करते थे। उनके पास दरबारी वैद्य और विद्वान तो होते थे लेकिन दर्द से राहत दिलाने के लिए बेहोश (एनेस्थिसिया) करने वाले विशेषज्ञ नहीं थें। उनके पास संक्रमण को दूर करने वाले एंटीबायोटिक्स नहीं थे। वे ताकतवर अवश्य थे लेकिन हमारे आज के मानकों के अनुसार बेहद गरीब थे।)

शब्द का इतिहास

मुक्त बाजार में लोगों के बीच परस्पर आदान प्रदान की प्रक्रिया को सुपरिभाषित, कानूनी तौर पर सुरक्षित और संशाधनों की कमी की दशा में हस्तांतरण के अधिकार आदि को वर्तमान समय में धन के सृजन के लिए आवश्यक शर्त माना जाता है। लेकिन बतौर आर्थिक इतिहासकार डेरड्रे मैकक्लोस्की ने अत्यंत विश्वास के साथ दर्शाया है कि मुक्त बाजार की प्रक्रिया के लिए सिर्फ उपरोक्त प्रावधान ही काफी नहीं हैं। इसके लिए एक और चीज की जरूरत होती है और वह है स्वतंत्र आदान प्रदान और नवाचारों के माध्यम से धन के सृजन की प्रक्रिया के लिए एक आचार संहिता का होना।

पूंजीवाद शब्द के प्रयोग के अस्तित्व में आने के संबंध में कुछ बातें यूं हैं। सामाजिक इतिहासकार फर्नांद ब्रॉदेल द्वारा पूंजीवाद शब्द का प्रयोग बारहवीं और तेरहवी शताब्दी के दौरान "कोष, माल का भंडार, धन की मात्रा व ब्याज प्रदान करने वाले पैसों" के वर्णन के दौरान किया गया था। ब्रॉदेल द्वारा सूचीबद्ध सामग्रियों में पूंजीवाद शब्द के बारंबार प्रयोग में, बड़े ही रूखे तरीके से उन्होंने कहा है कि "इस शब्द का प्रयोग कभी भी मित्रवत भावना के साथ नहीं किया गया है।" उन्नीसवीं सदी में तो पूंजीवाद शब्द समान्यतः गाली के अर्थ में उभरा। जैसे, 'कुछ लोगों द्वारा पूंजी का विनियोग दूसरों के बहिष्कार के लिए किया गया।' कार्ल मार्क्स ने इसे 'उत्पाद की पूंजीवादी अवस्था' के रूप परिभाषित किया तो उनके प्रचंड चेले वर्नर सोमबार्ट ने 'पूंजीवाद' शब्द को 1912 में आयी अपनी पुस्तक 'डेर मोडर्नी कैपिटलिज्म्स' के माध्यम से इसे प्रचारित किया। (मार्क्स के सहयोगी फ्रेडरिक इंजेल्स का मानना था कि जर्मनी में मात्र एक ही चिंतक ऐसा है जो कि वास्तव में मार्क्स को समझता है और वह 'सोमबार्ट' है। वही सोमबार्ट जो आगे चलकर पूंजीवाद के विरोध की एक अन्य शैली नेशनल सोशलिज्म अर्थात् नाजी का झंडा बरदार बन गया।)

पूंजीवाद और उत्पादन की पूंजीवादी शैली पर अपने हमले में, मार्क्स और इंजेल्स ने देखा कि 'बुर्जुआओं' (उत्पादन के माध्यमों पर अपना अधिकार रखने वाले वर्ग के लिए

उनके द्वारा प्रयुक्त शब्द) ने दुनिया को पूरी तरह से बदल दिया है।

> बुर्जुआओं ने अपने सौ वर्षों के अपने अल्प शासन में इतनी जबरदस्त और चमत्कारिक शक्तियों का सृजन किया है जितना कि पूर्व की सभी पीढ़ियों ने मिलकर भी नहीं किया। प्राकृतिक शक्तियों का मनुष्य के अधीन आना, यांत्रिक कल पुर्जे, उद्योगों और खेती में रसायन का प्रयोग, भाप से संचालित नौ परिवहन, रेलवे, इलेक्ट्रिक टेलीग्राफ, खेती के लिए पूरे महाद्वीपों की सफाई, नदियों का नहरीकरण, समस्त आबादी का सम्मोहित होकर बाहर निकल पड़ना– जैसा कि पूर्व के सौ सालों का पूर्वाभास था कि ऐसी उत्पादक शक्तियां सामाजिक श्रम की गोद में आराम करती है।

मार्क्स और इंजेल्स केवल तकनीकि नवाचारों से ही अचंभित नहीं थे, बल्कि 'समस्त आबादी का सम्मोहित होकर बाहर निकल पड़ना' मृत्यु दर के कम होने, जीवन स्तर के ऊंचा उठने और जीवन काल में वृद्धि की व्याख्या करने का जबरदस्त तरीका है। इस अलंकरण के बावजूद, वास्तव में मार्क्स और इंजेल्स ने 'उत्पादन के पूंजीवादी शैली' की बर्बादी का आह्वान किया। सीधे सीधे शब्दों में कहें तो, उन्होंने सोचा कि पूंजीवाद स्वयं ही अपने को बर्बाद कर लेगा और एक नए प्रणाली की शुरुआत होगी जोकि बहुत ही अदभुत होगी। (वास्तव में, यह अक्रामक ढंग से अवैज्ञानिक था) हालांकि उन्होंने यह बताना बिल्कुल जरूरी नहीं समझा कि वह प्रणाली आखिरकार काम कैसे करेगी?

सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि, मार्क्स और इंजेल्स ने पूंजीवाद के आलोचना (एक ऐसी आलोचना, जो कि दुनिया भर के प्रबुद्धवर्ग के लोगों को असाधारण रूप से प्रभावित करने में सफल रही थी। इस तथ्य के बावजूद कि सभी साम्यवादी तरीकों को आजमाने के बाद भी यह अपने वादों को पूरा करने में कभी सफल नहीं रही।) की स्थापना व्यापक भ्रम की जमीन पर हुई है। वे यह स्पष्ट करने में असफल रहे हैं कि 'बुर्जुआ' शब्द से उनका आशय क्या था, बाद में उन्होंनें इसे 'उत्पादन की पूंजीवादी शैली' से जोड़ दिया। एक तरफ तो वे इस शब्द का प्रयोग 'पूंजी' के स्वामियों के तौर पर करते हैं, जो उत्पादक उद्यमों का संचालन करते हैं। वहीं दूसरी वे तरफ इसे सरकार और सत्ता से दूर रहने वालों के तौर पर करते हैं। जैसा कि मार्क्स ने राजनीति शास्त्र के बाबत अपने एक निबंध में कहा है:

> व्यापक और घनी फैली सरकारी मशीनरी की शाखाओं के रख रखाव के साथ फ्रेंच बुर्जुआओं के लिए भौतिक हित घनिष्ठ तौर पर कोराच्छादित होते हैं। यह वही मशीन है जो अधिशेष आबादी को नौकरी प्रदान करती है और जिस लाभांश की बचत मुनाफे, ब्याज, किराये और शुल्क के तौर नहीं कर सकती उसे वेतन के तौर पर प्रदान करती है। इसका राजनैतिक हित इसे प्रतिदिन किए जाने वाले दमन कार्यों को बढ़ाने, और इसके लिए संशाधनों व राज्य सत्ता में लोगों की वृद्धि करने को विवश करते हैं।13

इस प्रकार, एक तरफ तो मार्क्स बुर्जुआओ की पहचान उद्यमशीलों के तौर पर करते हैं जो, "सभी देशों में उत्पादन और उपभोग का सर्वदेशीय चरित्र हैं" और जो "राष्ट्रीय एकपक्षता और संकरी मानसिकता" को "अधिक से अधिक असंभव" बनाते हैं। जो

"वैश्विक साहित्य" की रचना करते हैं, जो "उत्पादन के सभी उपकरणों को शीघ्र अतिशीघ्र उन्नत करते हैं" और जो "संचार प्रक्रिया को बेहद सुगम बनाते हैं" और वो जो "असभ्य लोगों के द्वारा विदेशियों के साथ किए जाने वाले घृणित दुराग्रह" की समस्या से "अपने उत्पादों को सस्ते से सस्ता उपलब्ध कराकर" 14 पार पाते हैं। दूसरी तरफ उन्होंने 'बुर्जुआ' शब्द का प्रयोग उन लोगों के संदर्भ में किया है जो 'सार्वजनिक जमा खाते' (जैसे सरकारी कर्ज आदि) से दूर रहते हैं।

> समस्त आधुनिक धन बाजार व समस्त बैंकिंग व्यवसाय मुख्य तौर पर जनता के पैसे से घनिष्ठ रुप से गुथे हुए हैं। उनके व्यवसाय की पूंजी का एक हिस्सा आवश्यक रूप से निकाल कर ब्याज पर अल्पावधि सार्वजनिक कोषों में लगाई जाती है। लोगों का जमाधन; वह रकम जो व्यवसायियों व उद्योगपतियों द्वारा निपटारे के लिए उन्हीं लोगों के बीच वितरित कर दी जाती है, सरकारी बांड धारकों को लाभांस के रूप में थोड़ा थोड़ा प्रवाहित होता रहता है।15

मार्क्स, 'बुर्जुआओं' को सरकारी मशीनरी के नियंत्रण के खिलाफ संघर्ष कर लाभ कमाने और घनिष्टता से जुड़ा हुआ देखते हैं।

> राजनैतिक उथल पुथल इस मशीन को नष्ट करने की बजाए श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। महारत के लिए लड़ने वाले दल उन्हें विशाल राज्य भवन पर कब्जा इस प्रकार देते हैं मानों विजय के दौरान के लूट का माल।16

इतिहासकार शर्ले ग्रूनर के शब्दों में, 'मार्क्स को लगता था कि बुर्जुआ को पाकर उन्हें वास्तविकता पर पकड़ हो गई है, जबकि वास्तविकता यह थी कि इस अत्यंत फिसलन भरी परिभाषा को वह बमुश्किल ही समझ पाए थे।'17 कुछ लेखों में मार्क्स ने 'बुर्जुआ' शब्द का प्रयोग नवाचारों से युक्त उद्यमियों के संदर्भ में किया है जो उत्पादक उद्यमों का संचालन करते हैं और धन के सृजन के लिए निवेश करते हैं। जबकि दूसरी ओर उन्होंने इस शब्द का प्रयोग ऐसे लोगों के संदर्भ में किया है जो सरकार के ईर्द गिर्द झुंड बनाकर मंडराते रहते हैं, जो कराधान से दूर रहते हैं, जो प्रतिस्पर्धा की स्थिति पैदा करने के खिलाफ और व्यापार की स्वतंत्रता पर रोक लगाने के लिए लॉबिंग करते रहते हैं। संक्षेप में कहें तो ऐसे लोग जो निवेश तो करते हैं लेकिन धन के सृजन के लिए नहीं बल्कि सत्ता हासिल करने के लिए ताकि धन का पुर्नवितरण कर सकें अथवा दूसरों के धन को बर्बाद कर सकें। ताकि बाजार बंद करा सकें और गरीबों को अपने यहां रख सकें और समाज को अपने ठेंगे पर रख सकें।

मार्क्स और उनके अनुनायी सोम्बार्ट के प्रभाव के कारण ही 'पूंजीवाद' शब्द प्रचलन में आ सका। यह याद रखने वाली बात है कि पूंजीवाद शब्द को लोकप्रिय उन्हीं लोगों ने बनाया जिन्होंने न केवल दूसरों द्वारा वसूले गए करों से दूर रहने के नाम पर उत्पादक उद्यमशीलता और बाजारी आदान प्रदान को लेकर भ्रम पैदा किया, बल्कि उन्होंने संपत्ति, बाजार, धन, मूल्य, श्रम के विभाजन व समस्त उदारवाद के किलों (व्यक्तिगत अधिकारों, धार्मिक स्वतंत्रता, वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून के समक्ष समानता और संवैधानिक रूप से लोकतांत्रिक सरकार की सीमितता) को ढहाने की हिमायत भी की थी।

कुप्रथाओं से संबंधित अन्य शब्दों के विपरीत 'पूंजीवाद' शब्द को उन्हीं मुक्त व्यापार के हिमायती बुद्धिजीवियों द्वारा प्रयुक्त किया जाया जाने लगा, जिनके खिलाफ इसे तैयार किया गया था। वे लोग, जिन्होंने पूंजीवाद शब्द का प्रयोग, चाहे जिस भी चीज की हिमायत के लिए किया करते थे, या महज सामाजिक वैज्ञानिक परिचर्चा भर में एक निष्पक्ष शब्द के तौर पर प्रयुक्त किया करते थे, वे इस तथ्य के कारण घाटे में रहे क्योंकि 1) इस शब्द का प्रयोग संदिग्ध (मुक्त बाजार की उद्यमशीलता व करों से दूर रहने वालों और सरकार की सत्ता व सरपरस्ती दोनों स्थितियों के वर्णन के लिए) तरीके से किया जा रहा था और 2) इसका प्रयोग सदैव नकारात्मक ढंग से ही किया जा रहा था।

पूंजीवाद शब्द के परस्पर विरोधी अर्थ और वैचारिक मतभिन्नता के कारण कुछ लोगों ने इस शब्द के प्रयोग पर रोक लगाने की भी सलाह दी थी।[18] यह लुभावना अवश्य था लेकिन इसके साथ एक समस्या भी थी। आर्थिक प्रगति के लिए आवश्यक होने के बावजूद महज लोगों को स्वतंत्र रूप से व्यापार करते देना और लाभ, हानि से निर्देशित होने देने भर से आधुनिक विश्व के निर्माण के लिए पर्याप्त नहीं है। आधुनिक बाजार, लोगों के द्वारा मक्खन के लिए अंडों के लेन देन के स्वरूप का अतिक्रमण करने वाले संस्थागत, तकनीकि, सांस्कृतिक, कलात्मक एवं सामाजिक नवाचारों से उभरता भी है और उसे चक्रवात बनाने के लिए ऊर्जा भी प्रदान करता है। आधुनिक पूंजीवादी मुक्त बाजार अन्वेंषण करता है, लेकिन सदियों में पिघलने वाली हिमनदी की गति से नहीं बल्कि तेज बहुत तेज गति से– जिसे कि दोनों समाजवादियों (विशेषकर मार्क्स) और उनके सहयोगी व बाजार विरोधी संरक्षणवादियों को आधुनिक बाजार खौफनाक मानते थें। अपने 'पूंजीवाद, समाजवाद और लोकतंत्र' में जोसेफ शुम्पीटर उन लोगों की आलोचना करते हैं जिनके लिए "समस्या जो दिखायी जा रही है वह यह है कि किस प्रकार पूंजीवाद मौजूदा व्यवस्था को संचालित करता है, जबकि समस्या जो प्रासंगिक है वह यह है कि यह किस प्रकार यह उन्हें रचता है और बर्बाद करता है।"[19]

आधुनिक मुक्त बाजार महज वस्तुओं के आदान प्रदान करने की जगह नहीं हैं, जैसा कि पुराने समय के बाजार हुआ करते थे। आज इनका चरित्र चित्रण "रचनात्मक विध्वंस" की लहरों के तौर पर किया जाता है। दस वर्ष पूर्व जो चीजें नई थीं वे आज पुरानी हो चुकी हैं और नए परिष्कृत अवतारों, नए उपकरणों, संस्थागत व्यवस्थाओं, तकनीकियों और संपर्क करने के तरीकों जो सबके लिए अकल्पनीय थें, के द्वारा पीछे छोड़ दी गई हैं। यही चीजें आधुनिक मुक्त बाजारों को पुराने बाजारों से अलग करती हैं। आधुनिक विश्व के मुक्त बाजारों और इसके द्वारा पीछे छोड़े गए पुराने बाजारों के बीच जो चीज भेद पैदा करती है मेरे विचार से उसके लिए सर्वश्रेष्ठ उपलब्ध संज्ञा, "पूंजीवाद" ही है।

पूंजीवाद अव्यवस्था का क्रम नहीं है बल्कि यह नैसर्गिक अवस्था का क्रम है, जो एक निश्चित प्रक्रिया (कुछ विद्वान इसे अचानक होने वाली घटना कहते हैं) के साथ उभरता है। विधि नियमों व अधिकारों की सुरक्षा की पूर्वानुमानित स्थिरता ऐसे अन्वेंषणों को संभव बनाती हैं। जैसा कि डेविड बोआज "द फ्यूचरिस्ट" में लिखते हैं।

> लोगों को हमेशा ही स्वच्छंद ढंग से कार्यरत बाजार को व्यवस्थित क्रम में देखने में परेशानी होती है। यहां तक कि मूल्य प्रणाली भी संसाधनों को लगातार उनके

सर्वश्रेष्ठ प्रयोग की ओर खिसकाती है। सतह पर बाजार, व्यवस्था के बिल्कुल विपरीत प्रतीत होता है– व्यवसाय असफल हो रहे हैं, नौकरियां समाप्त हो रही हैं, लोग असमान गति से समृद्ध हो रहे हैं, निवेशों के बर्बाद होने का खुलासा होता है। बड़े– बड़े उद्यमों का जल्दी– जल्दी उद्‌भव और पतन और कुछ ही लोगों के पास दीर्घकालीन नौकरियों का होने के कारण तीव्र गति वाला नवाचार युग और ज्यादा अराजक प्रतीत होगा। लेकिन सक्षम परिवहन व्यस्था, संचार में वृद्धि के कारण पूंजीवादी बाजार दरअसल, औद्योगिक युग के बाजारों की उपलब्धियों की तुलना में ज्यादा बेहतर प्रदर्शन करते हैं। मसला अक्रामक सरकार को "अतिरेक को दूर करने" अथवा बाजार को वांछित परिणामों के लिए "रास्ता" दिखाने से रोकना है।20

मुक्त बाजार युक्त पूंजीवाद बनाम याराना (हिमायती) पूंजीवाद

समाजवादी बुद्धिजीवों के द्वारा "पूंजीवाद" शब्द के अस्पष्ट व गोलमोल प्रयोग के कारण उत्पन्न होने वाले संदेह की अवस्था से बचने के लिए "मुक्त बाजार युक्त पूंजीवाद" व दुनिया के तमाम देशों को भ्रष्टाचार व पिछड़ेपन के दलदल में फंसा कर रखने वाले "याराना पूंजीवाद" के बीच अंतर स्पष्ट करना अत्यंत आवश्यक है। अधिकांश देशों में यदि कोई धनी व्यक्ति है तो, अधिक संभावना होती है कि वहां की राजनैतिक सत्ता पर उसकी (धनी व्यक्ति की) अच्छी पकड़ हो, अथवा वह सत्ताधारियों का करीबी रिश्तेदार हो, मित्र हो अथवा समर्थक हो। दूसरे शब्दों में कहें तो उसका सत्ताधारियों के साथ "याराना" हो, जिससे कि उस व्यक्ति को धन उपयोगी वस्तु के उत्पादन के कारण नहीं बल्कि सत्ता द्वारा दूसरे लोगों की कीमत पर उसे उपलब्ध करायी गई सुविधाओं के कारण प्राप्त हो। यह दुखद है कि अमेरिका की अर्थव्यवस्था में भी असफल कंपनियों को संकट से उबारने के लिए सरकार द्वारा करदाताओं के पैसों को बेलआऊट के तौर पर प्रदान करने के "याराना पूंजीवादी" उपायों का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। जहां कि राष्ट्रीय राजधानी "पट्टे पर लेने वाले" लॉबीइस्टों (पैरवीकारों), नौकरशाहों, राजनेताओं, सलाहकारों व वेतनभोगियों से घिरे भारी भरकम धड़कते मधुमक्खी के छत्ते जैसी हो गई है। और जहां राजकोष विभाग और सेंट्रल बैंक (फेडरल रिजर्व सिस्टम) में नियुक्त अधिकारी कुछ फर्मों को पुरस्कृत व अन्यों को नुकसान पहुंचाने की जिम्मेदारी निभाते हैं। ऐसी भ्रष्टता व तुष्टीकरण को "मुक्त बाजार युक्त पूंजीवाद" समझने की गलती नहीं करनी चाहिए। "मुक्त बाजार युक्त पूंजीवाद" तो उत्पादन और आदान प्रदान की वह प्रणाली है जो कि, विधि सम्मत, सबके लिए समानता के अधिकार, चयन की स्वतंत्रता, व्यवसाय की स्वतंत्रता, नवाचार की स्वतंत्रता, लाभ व हानि का अनुशासन युक्त मार्गदर्शन, परिश्रम का फल भोगने, बचत करने, निवेश करने व उत्पादन की बजाए राजनैतिक सत्ता में निवेश करने वालों द्वारा अधिग्रहण व प्रतिबंध के भय की हीनता पर आधारित है।

मुक्त बाजार पूंजीवाद द्वारा लायी जाने वाली परिवर्तन की लहर के खिलाफ मोर्चेबंदी प्रायः अभिजात वर्ग के द्वारा ही की जाती है, क्योंकि वे दुनियाभर में अल्पसंख्यकों को उच्च वर्ग में तब्दील होते और निम्न वर्ग को नया स्थान पाते देखते हैं। उनके परिप्रेक्ष्य में, सबसे ज्यादा अचंभित करने वाली बात यह है कि मुक्त बाजार पूंजीवाद के तहत महिलाओं को भी दृढ़ता पूर्वक अपनी उयोगिता साबित करने का मौका प्राप्त होता है।

वर्ण व्यवस्था बीते दिनों की बात हो जाती है। लोग चयन और सहमति के आधार पर संबंध बनाते हैं ना कि जन्म अथवा वर्ण के आधार पर।21 संरक्षणवादी मुक्त बाजार पूंजीवाद से नफरत करते हैं, जिसका वर्णन मार्क्स ने अपने लेखों में बड़े ही स्पष्ट तरीके से किया है। ये लेख परिवर्तनों के बाबत उनकी नाराजगी को दर्शाता है, और प्रायः यह नाराजगी विशेषाधिकार खोने के कारण होती थी। लियो मेलामेड सीएमई ग्रूप (पूर्व नाम शिकागो मर्केंटाइल एक्सचेंज) के चेयरमैन एमेरिटस, जिनके स्वयं के जीवन की कहानी; जो गेस्टापो व केजीबी से बच निकलने और वैश्विक वित्त में क्रांति फूंकने की कहानी है व जो साहस और दूरदर्शिता से ओतप्रोत है, ने अपना अनुभव बयां करते हुए कहा कि "शिकागो के वित्त बाजार में यह बात मायने नही रखती कि आप कौन हैं?, आप किस वंश से हैं?, आपका पारिवारिक मूल क्या है? आपकी शारीरिक अक्षमता क्या है? आप का लिंग कौन सा है? बल्कि उपभोक्ता आपसे क्या उम्मीद रखता है और बाजार का रूख किधर है? यह परखने की क्षमता मायने रखती है। थोड़ी बहुत छोटी मोटी अन्य चीजें भी मायने रखती हैं।"22 मुक्त बाजार पूंजीवाद को गले लगाने का अर्थ है, परिवर्तन करने, नवाचार करने व अविष्कार करने की स्वतंत्रता को गले लगाना है। इसका तात्पर्य परिवर्तनों को आत्मसात करना और दूसरों की उस स्वतंत्रता का आदर करना जो कि उन्हें अपने पास की वस्तुओं का प्रयोग मनचाहे कार्यों में करने देता है। इसका तात्पर्य नए तकनीकों, नए वैज्ञानिक सिद्धांतों, कला के नए प्रारूपो और नई पहचान व नए रिश्तों के लिए जगह बनाना। इसका तात्पर्य धन का सृजन करने की स्वतंत्रता को आत्मसात करना है जो कि गरीबी को दूर करने का एकमात्र तरीका है। (धन का एक प्रयोजन होता है लेकिन निर्धनता का नहीं। निर्धनता, धन के उत्पादन न होने का परिणाम है। जबकि धन का होना निर्धनता के उत्पादन के न होने का परिणाम नहीं है।)23 इसका तात्पर्य मानवीय स्वतंत्रता का आनंद मनाना और मानवीय क्षमता पर भरोसा करना है।

वे लेखक जिनके निबंध यहां प्रस्तुत किए गए हैं, वे विविध देशों व संस्कृतियों और विविध पेशे और बौद्धिक विषयों से संबंद्ध रखते हैं। लेकिन सभी इस बात की प्रशंसा करते हैं कि किस प्रकार मुक्त बाजार में होने वाले आदान प्रदान नैतिकता में निहित हैं और नैतिक व्यवहारों को सुदृढ़ करते हैं। यह संग्रह कुछ छोटे, कुछ लंबे, कुछ बिल्कुल सुलभ और कुछ अत्यधिक शैक्षिक निबंधों का मिश्रण है। इसमें दो निबंध ऐसे भी शामिल हैं जो पूर्व में अंग्रेजी में उपलब्ध नहीं थे और इस संग्रह के लिए चीनी और रूसी भाषा से पहली बार अनुवादित किए गए हैं। इसमें दो नोबेल पुरस्कार विजेताओं एक उपन्यासकार व एक अर्थशास्त्री, के योगदान भी शामिल है। इसमें एक सफल उद्यमी का साक्षात्कार भी शामिल है जो उस बात के मुखर समर्थक हैं जिसे वे "जागरुक पूंजीवाद" कहते हैं। ये निबंध मुक्त बाजार पूंजीवाद के समर्थन में सभी तर्कों को मुहैय्या नहीं करते हैं, लेकिन ये एक बड़े ही समृद्ध साहित्य को जरूर मुहैय्या कराते हैं। (ऐसे साहित्य का छोटा सा नमूना पुस्तक के अंत में वर्णित संदर्भ ग्रंथ में सूचीबद्ध है।)

इस पुस्तक में केवल मुक्त बाजार पूंजीवाद का ही जोरदार बचाव करने वाली सामग्री क्यों शामिल है ? क्योंकि बाजार पर आधारित सैंकड़ों– दरअसल हजारों अभिप्रेरित किताबें ऐसी हैं जो तथाकथित "संतुलित" परिचर्चाएं प्रस्तुत करती हैं। लेकिन वास्तव में उनमें

कुछ और नहीं बल्कि आमतौर पर उद्यमशीलता, नवाचार, लाभ हानि आधारित प्रणाली के द्वारा धन के सृजन के काम और मुक्त बाजार पूंजीवाद पर आरोपों की भरमार ही होती है। मेरी शिक्षा यात्रा के दौरान पाठ्यक्रमों में शामिल सैकड़ों पुस्तकें मैनें स्वयं पढ़ी है, जिनमें से अधिकांश मुक्त बाजार पूंजीवाद की आलोचनाओं पर ही आधारित होती थीं। मैनें तर्कों पर विचार किया और उनकी खिलाफत की। इसके विपरीत, सामान्य तौर पर ऐसे आलोचकों का मिलना मुश्किल है, जिन्होंने मुक्त बाजार पूंजीवाद पर एक से अधिक ऐसे लेखकों को पढ़ा होगा जिन्होंने मुक्त बाजार पूंजीवाद के समर्थन में कुछ लिखने की जुर्रत की हो। एक लेखक, जो कम से कम आधुनिक एंग्लो सैक्सन बौद्धिक दुनिया में आम तौर पर उद्धृत होता है वह है, रॉबर्ट नॉजिक। इसके बावजूद उनकी एक पुस्तक के एक अध्याय को ही पढ़ा गया है, जिसमें उन्होंने मुक्त बाजार पूंजीवाद के विरोधियों की आजमाइश के लिए एक चुनौतीपूर्ण काल्पनिक विचार प्रयोग को प्रस्तुत किया है। अधिकांश समाजवादी महज एक निबंध को पढ़ना पर्याप्त मानते हैं और एक विचार प्रयोग का खंडन करने लगते हैं। 24 महज एक तर्क को पढ़कर और उसका खंडन कर मुक्त बाजार पूंजीवाद की भर्त्सना करने वाले, आलोचना को जारी रखने की भी सोचते हैं। हमेशा की तरह वे मिल्टन फ्रीडमैन या आयन रैंड या एफ. ए. हायक या एडम स्मिथ के एक या दो बयानों के विकृत संस्करण पर भरोसा कर लेते हैं।

हाल ही का एक ज्वलंत उदाहरण लेते हैं। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के एक प्रोफेसर माइकल सैंडल ने अपनी नई पुस्तक "जस्टिसः व्हाट ईज द राइट थिंग टू डू" में मुक्त बाजार पूंजीवाद के एक विचार का खंडन किया है। पुस्तक में रॉबर्ट नॉजिक के साथ ही साथ मिल्टन फ्रीडमैन और एफ. ए. हायक की भी आलोचना की गई है। हालांकि पुस्तक में लेखक ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि उन्होंने उन्हें पढ़ा नहीं है। उन्होंनें मिल्टन फ्रीडमैन द्वारा किए गए सवाल, "उसने (व्यक्ति जिसने सेवानिवृति के बाद के जीवन यापन के लिए कुछ भी बचत नहीं की) जिस काम को करने का विकल्प चुना है, क्या हम उसे ऐसा करने से रोकने हेतु बल के प्रयोग के लिए अधिकृत हैं?" 25 लेकिन उन्होंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया जिसका वर्णन फ्रीडमैन ने अगले ही पैराग्राफ में किया था। दरअसल, फ्रीडमैन ने इस बल के प्रयोग26 के कारण बताते हुए कहते हैं कि, "इस तर्क का महत्व स्पष्ट रूप से तथ्यों पर निर्भर करता है।"27 (फ्रीडमैन, "उदारवादी प्रकल्पना" 28 के प्रतिष्ठित उदारवादी सिद्धांतों का आह्वान कर रहे थे, न कि अधिकारों के बाबत कोई निर्णयात्मक बयान दे रहे थे, जैसा कि सैंडल ने गलत तरीके से वर्णित किया है।) सैंडल आगे भी कहते हैं कि "द कॉस्टिट्यूशन ऑफ लिबर्टी (1960) में ऑस्ट्रियन अर्थशास्त्री दार्शनिक फ्रेडरिक ए. हायक (1899–1992) ने तर्क दिया है कि व्यापक आर्थिक समानता लाने के लिए किया जाने वाला कोई भी प्रयास स्वाभाविक रूप से बलात व मुक्त समाज का विध्वंस करने वाला होता है।" यह ऐसा दावा है जो हायक ने कभी किया ही नहीं। दरअसल, वे कहते हैं कि "प्रगतिशील आय कराधान" (जहां आय के साथ साथ कर की दर में वृद्धि होती जाती है) कानून के तहत असंगत है, क्योंकि "सापेक्षता के विपरीत, प्रगतिशीलता ऐसा कोई सिद्धांत प्रस्तुत नहीं करती जो हमें यह बताए कि अलग अलग लोगों द्वारा वहन किया जाने वाला भार क्या होना चाहिए।"29 लेकिन यह ठीक वैसा नहीं है जैसा कि यह तर्क देना कि व्यापक आर्थिक समानता लाने वाला किसी भी प्रयास (मान लीजिए, अमीरों को मिलने वाले विशेष छूट और

विशेषाधिकार) का बलात होना अवश्यंभावी है। (सैंडल का त्रुटिपुर्ण दावा और उसकी व्याख्या दोनों यह दर्शाते हैं कि सैंडल नें हायक की पुस्तक को पढ़ने की जहमत तक नहीं उठाई थी। आश्चर्य होता है कि क्या वह एडम स्मिथ की पिन का उत्पादन कैसे होता है के बाबत पुस्तक 'एन इंक्वायरी इन्टू द नेचर एंड कॉज ऑफ द वेल्थ ऑफ नेशंस' की व्याख्या की होगी।)

संजीदा लोगों को बेहतर काम करना चाहिए। मैं आप (इस निबंध और पुस्तक के पाठकों) को बेहतर करने के लिए दृढ़ता पूर्वक प्रोत्साहित करता हूं। मुक्त बाजार पूंजीवाद से संबंधित श्रेष्ठ आलोचना को पढ़ें। मार्क्स को पढें, सोम्बार्ट को पढ़ें, रॉल्स को पढ़ें, सैंडल को पढ़ें। उन्हें समझें। उनके द्वारा कन्विंस होने को भी तैयार रहें। उनके बारे में विचार कीजिए। मैनें मुक्त बाजार पूंजीवाद के विरोधियों की तुलना में कहीं अधिक मुक्त बाजार पूंजीवाद विरोधी तर्कों को पढ़ा है। और मुझे लगता है कि मैं उनके केस को उनसे ज्यादा अच्छा बना सकता हूं क्योंकि मैं इसे अच्छी तरह जानता हूं। यहां बहस के दूसरे पहलू को प्रस्तुत किया गया है। वह पहलू जिसके अस्तित्व को मुश्किल से ही कभी संज्ञान में लिया गया है।

तो, आगे बढ़िए और एक बार आजमाइए। इस पुस्तक में प्रस्तुत निबंधों में दिए गए तर्कों से जूझिए। उनके बाबत विचार कीजिए। तत्पश्चात राय कायम कीजिए।

– टॉम जी पॉमर
वाशिंगटन, डी.सी.

खंड 1

उद्यमशील पूंजीवाद के सदगुण

एक उद्यमी का साक्षात्कार

जॉन मैक्केय से बातचीत

टॉम जी पॉमर द्वारा संचालित

इस साक्षात्कार में, साहसी व्यवसायी व व्होल फूड्स के सह– मुख्य कार्यकारी अधिकारी जॉन मैकेय "सचेत पूंजीवाद" के अपने दर्शन की व्याख्या करते हैं और मानव प्रकृति एवं प्रोत्साहन, व्यवसाय की प्रवृत्ति तथा मुक्त बाजार पूंजीवाद व "हिमायती पूंजीवाद" के बाबत अपने विचार साझा करते हैं।

जॉन मैकेय ने सन् 1980 में व्होल फूड्स मार्केट की सह स्थापना की। वह स्वास्थ्य वर्द्धक भोजन, जानवरों के साथ नैतिक व्यवहार व व्यवसायियों द्वारा सकारात्मक सामुदायिक सहभागिता के क्षेत्र के अगुवा रहे हैं। वह सचेत पूंजीवाद संस्थान के ट्रस्टी भी हैं।

– – – –– –

पॉमरः जॉन, व्यापार की दुनिया में आप (एक उद्यमी जो पूंजीवाद की नैतिकता का बेहिचक बचाव करता है) जैसे लोग काफी कम हैं। आप अपने इस कथन के लिए भी जाने जाते हैं कि पूंजीवाद के लिए महज स्व–हित का होना ही पर्याप्त नहीं है। इसका तात्पर्य क्या है?

मैकेयः स्व–हित के सहारे सबकुछ छोड़ना, मानव प्रवृत्ति के अत्यंत अपूर्ण सिद्धांत पर भरोसा करने जैसा है। यह मुझे कॉलेज के दिनों के एक वाद विवाद की याद दिलाता है जिसमें लोग यह तर्क देने कि कोशिश करते हैं कि जो कुछ भी आप करते हैं वह स्व–हित से प्रेरित होकर करते हैं। यदि स्वहित ना हो तो आप उस कार्य को नहीं करेंगे। वह अवस्था अकाट्य है, लेकिन अंततः तर्कहीन, क्योंकि यदि आप ऐसे काम भी करते हैं जो आपके स्वहित में नहीं था, इसके बावजूद लोग कहेंगे कि यह आपके हित में था अन्यथा आप इसे नहीं करते। अतः यह एक वृत्ताकार तर्क है।

पॉमरः स्वहित के अलावा अन्य प्रोत्साहन भी पूंजीवाद के लिए महत्वपूर्ण है, इसे आप किस तरह से देखते हैं?

मैकेयः मुझे ऐसे प्रश्न पसंद नहीं क्योंकि अलग अलग लोगों के लिए स्वहित की परिभाषाएं अलग अलग होती है और आप इस विषय पर चर्चा के दौरान पिछली बातों

पर ही बातचीत कर के रह जाते हैं। इसीलिए मैं यूनिवर्सिटी के दूसरे वर्ष के छात्र की बातचीत कि सबकुछ स्वहित से संबंधित होता है, जैसी परिचर्चा के बारे में बता रहा था। मैं जो सलाह देता हूं कि वह यह है कि इंसान की प्रवृति अत्यंत जटिल किस्म की होती है। और हम सबकी तमाम अभिप्रेरणाएं होती हैं जिनमें से एक स्वहित की अभिप्रेरणा है। हम उन तमाम चीजों के द्वारा अभिप्रेरित होते हैं जिनकी कामना करते हैं। इनमें स्वहित शामिल तो है लेकिन यह बस उतने तक ही सीमित नहीं है। मेरा मानना है संभवतः आयन रैंड व अन्य अर्थशास्त्रियों के मिश्रित प्रभाव के कारण, किन्हीं रास्तों से उदारवादी आंदोलन एक प्रकार के वैचारिक समापन की ओर बढ़ गया है और मुझे नहीं लगता कि यह व्यवसाय अथवा पूंजीवाद अथवा मानवीय प्रवृति के साथ न्याय है।

यदि आप अपने जीवन की उस अवधि के बारे में सोचें जब हम सबसे अधिक स्वार्थी थे, तो पाएंगे कि उस समय हम युवा और भावनात्मक तौर पर अपरिपक्व थे। अधिकांश बच्चे व किशोर अत्यधिक आत्म केंद्रित होते हैं। वे अपनी समझदारी के अनुसार स्वहित का काम करते हैं। जैसे जैसे हम परिपक्व होते जाते हैं, हम सहानुभूति, करुणा, प्यार और पूरी मानवीय संवेदनाओं से पूर्ण होते जाते हैं। लोग तमाम कारणों के वशीभूत हो काम करते हैं। स्वहित अथवा स्वार्थ और परोपकारिता के बीच प्रायः एक मिथ्या दुविधा उत्पन्न हो जाती है। मेरे लिए यह मिथ्या दुविधा है क्योंकि जाहिर तौर पर हम दोनों हैं। हम स्वार्थी हैं लेकिन हम केवल स्वार्थी भी नहीं हैं। हम दूसरों के बारे में भी चिंता करते हैं। हम बड़े पैमाने पर अपने परिवार के बारे में चिंता करते हैं। आम तौर पर हम अपने समुदाय के बारे में सोंचते हैं और उस समाज के बारे में सोचते हैं जिसमें हम रहते हैं। हम जानवरों के बारे में चिंता करते हैं और पर्यावरण की चिंता करते हैं। हमारे कुछ आदर्श होते हैं जो हमें दुनिया को बेहतर स्थान बनाने की कोशिश करने की प्रेरणा देते हैं। एक सख्त परिभाषा के द्वारा वे स्वहित का खंडन करते प्रतीत होते हैं जबतक कि आप उस वृताकार बहस में वापस नहीं लौट जाते जिसके अनुसार जो कुछ भी आप करना चाहते हैं या जिस चीज की चिंता करते हैं वह स्वहित के कारण होता है।

अतः मैं नहीं मानता कि स्वहित ही पर्याप्त है। मैं नहीं मानता कि मनुष्य प्रकृति की सभी गतिविधियों के लिए स्वहित एक अच्छा सिद्धांत है। मेरा मानना है कि पूंजीवाद और व्यवसाय, मनुष्य की जटिल प्रवृतियों को प्रदर्शित करता है। मैं यह भी मानता हूं कि पूंजीवाद व व्यवसाय की साख को यह बहुत अधिक नुकसान पहुंचाता है क्योंकि यह पूंजीवाद व व्यवसाय के विरोधियों को इसके स्वार्थी, लालची और शोषक के रूप में स्थापित करने का मौका प्रदान करता है। वास्तव में टॉम, यह बात मुझे भी परेशान करती है क्योंकि पूंजीवाद और व्यवसाय दुनिया की भलाई के लिए सबसे बड़ी ताकत है। कम से कम विगत तीन सौ वर्षों से यह ऐसा ही रहा है, लेकिन जो शानदार मूल्य उन्होंने सृजित किये हैं उसका पर्याप्त श्रेय उन्हें कभी नहीं मिला।

पॉमरः स्वहित, स्वार्थ अथवा लाभ साधने के अतिरिक्त व्यवसाय और क्या करता है?

मैकेयः आम तौर पर, सफल व्यवसाय मूल्य सृजित करते हैं। पूंजीवाद के बाबत सबसे खूबसूरत बात यह है कि यह लोगों द्वारा परस्पर लाभ के लिए स्वेच्छा से की जाने वाली आदान प्रदान की प्रक्रिया है। व्होल फूड मार्केट्स व्यवसाय का ही उदाहरण ले लो। हम अपने ग्राहकों को वस्तुएं और सेवाएं उपलब्ध करा कर उनके लिए मूल्य पैदा करते हैं।

उन्हें हमारे साथ व्यापार करने की जरूरत नहीं है। वे ऐसा करते हैं क्योंकि वे ऐसा करना चाहते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि यह उनके हित में है। इस प्रकार हम उनके लिए मूल्य सृजित कर रहे हैं। हम उन लोगों के लिए मूल्य सृजित करते हैं जो हमारे लिए काम करते हैं, जो हमारे कर्मचारी हैं। उनमें से कोई दास नहीं है। वे सभी स्वेच्छा से कार्य कर रहें हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि यह वही नौकरी है जो वे करना चाहते हैं। उनका वेतन संतोषप्रद है। व्होल फूड्स के लिए कार्य करते हुए वे मानसिक व आर्थिक, कई लाभ प्राप्त करते हैं। इस प्रकार हम उनके लिए मूल्य सृजित कर रहे हैं। हम अपने निवेशकों के लिए मूल्यों का सृजन कर रहे हैं, क्योंकि हमारा बाजार मूल्य 10 बिलियन डॉलर है जबकि हमने शुरूआत सिफर से किया था। इस प्रकार हमने अपने पिछले 30 वर्षों से अधिक समय के दौरान निवेशकों के लिए 10 बिलियन डॉलर का मूल्य सृजित किया है। हमारे किसी भी अंशधारक को हमारा समान खरीदने के लिए दबाव नहीं डाला जाता है। वे सभी ऐसा स्वेच्छा से करते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि हम उनके लिए मूल्य सृजित कर रहे हैं। हम अपने उन आपूर्तिकर्ताओं के लिए, मूल्य सृजित कर रहे हैं, जो हमारे साथ व्यवसाय करते हैं। मैनें उन्हें सालों से देखा है, उनके व्यवसाय को बढ़ते देखा है, उन्हें फलते फूलते देखा है। और सब कुछ स्वेच्छा से हुआ है। उन्होंने व्होल फूड्स को बेहतर बनाया और हमने उन्हें बेहतर बनने में मदद की।

पॉमरः आपने अपने दर्शन को 'सजग पूंजीवाद' का नाम दिया है। इससे आपका क्या तात्पर्य है?

मैकेयः हम इस शब्द का प्रयोग उन अन्य नामों से इसे अलग रखने के उद्देश्य से करते है जो जब एक साथ होते हैं तो अनेक भ्रम पैदा करते हैं। जैसे कि 'कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉसिबिलिटी' या बिल गेट्स का 'क्रियेटिव कैपिटलिज्म' अथवा 'सस्टेनेबल कैपिटलिज्म'। हमारे पास सजग पूंजीवाद की स्पष्ट परिभाषा है जो चार सिद्धांतों पर आधारित है।

पहला सिद्धांत यह कि व्यवसाय में उच्च उद्देश्यों की पूर्ति करने की क्षमता होती है जिनमें से एक उद्देश्य धन का सृजन करना भी होता है लेकिन यह इसी तक सीमित नहीं होता। इस प्रकार सभी व्यवसायों में उच्च उद्देश्यों की पूर्ति की क्षमता होती है। और यदि आप विचार करें तो पाएंगे कि समाज के सभी व्यवसायों के कुछ निहित उद्देश्य होते हैं जो उस सीमा के परे भी होते है जो मुनाफे को अधिकतम करने तक सीमित होत हैं। हमारे समाज में चिकित्सकों की कमाई सबसे ज्यादा होती है फिर भी उनका एक उद्देश्य होता है, लोगों का इलाज करना। और यह पेशे की नैतिकता होती है जिसे मेडिकल स्कूलों में पढ़ाया जाता है। ऐसा नहीं है कि दुनिया में लालची डॉक्टर नहीं होते लेकिन कम से कम कई डॉक्टर ऐसे होते हैं जो वास्तव में अपने मरीजों का ख्याल रखते हैं और जब वे बीमार होते हैं तो वे उनका इलाज करते हैं। मैं स्वयं कई ऐसे डॉक्टरों को निजी तौर पर जानता हूं। अध्यापकों का प्रयास लोगों शिक्षित करना होता है, आर्किटेक्ट भवनों का स्वरूप तैयार करते हैं और वकीलो का प्रयास एक बार यदि आप सभी चुटकुलों को समीरण से निकाल दें तो, न्याय को बढ़ावा देने और हमारे समाज में निष्पक्षता लाने का प्रयास करते हैं। सभी पेशों का एक उद्देश्य होता है जो लाभ को बढ़ाने के इतर भी होता है और ऐसा ही व्यवसाय के साथ भी होता है। व्होल फूड किराना व्यवसाय में है

इसलिए हम उच्च गुणवत्ता वाले प्राकृतिक और जैविक खाद्य पदार्थ बेचते हैं और उन्हें स्वस्थ और लंबी अवधि तक जीने में उनकी सहायता करते हैं।

पॉमरः और दूसरा सिद्धांत क्या है?

मैकेयः सजग पूंजीवाद का दूसरा सिद्धांत, जिसकी ओर मैंने पहले इंगित किया था, हिस्सेदारी का सिद्धांत है। जिसके बारें में आपको सोचना चाहिए कि विभिन्न हिस्सेदार, जिनके लिए व्यवसाय मूल्य सृजित करता है और जो व्यसाय को प्रभावित कर सकते हैं। सभी अंतर्निहित हिस्सेदारों जैसे ग्राहकों, कर्मचारियों, आपूर्तिकर्ताओं निवेशकों और समुदायों के लिए मूल्य सृजित करने के दौरान आपको अपने व्यवसाय कि जटिलता के बारे में भी सोचना चाहिए।

तीसरा सिद्धांत यह है कि एक व्यवसाय को नेतृत्वकर्ता की जरूरत होती है जो अत्यधिक नीतिपरक होना चाहिए और जो व्यवसाय के उद्देश्यों को सर्वप्रथम रखता हो। वे उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं और वे हिस्सेदारों के सिद्धांतों को भी समझते हैं। और इस प्रकार, व्यवसाय की जरूरतों की पूर्ति करते हैं।

और सजग पूंजीवाद का चौथा सिद्धांत यह है कि आपको एक ऐसी कार्य संस्कृति पैदा करनी होती है जो उद्देश्यों, हिस्सेदारों और नेतृत्व को समर्थन प्रदान करता होता है ताकि ये सभी एक साथ फिट हो सकें।

पॉमरः जब आप सुबह सोकर उठते हैं तो, क्या ये सिद्धांत व्यक्तिगत तौर पर आपको प्रोत्साहित करते हैं? आप क्या ये कहते हैं कि, "मैं और डॉलर कमाऊंगा" या ये कहते हैं कि "मैं अपने सिद्धांतों के प्रति इमानदारी बरतूंगा"?

मैकेयः मुझे लगता है कि मैं इस मामले में थोड़ा अलग तरीके का इंसान हूं। क्योंकि विगत लगभग पांच वर्षों से मैनें व्होल फूड्स से कोई वेतन नहीं लिया है। ना ही कोई बोनस लिया है। दुनिया भर के गरीब लोगों को छोटे छोटे ऋण देने के लिए हिस्सेदारी का विकल्प जिसके लिए मैं अधिकृत हूं, व्होल प्लानेट फाऊंडेशन को प्रदान किया जाता है। व्होल फूड्स के उद्देश्यों से मुझे बहुत ज्यादा प्रोत्साहन मिलता है बजाए इसके कि बतौर प्रतिपूर्ति मैं व्यवसाय से कितना अधिक से अधिक धन कमा पाता हूं। वैसे मेरे पास कंपनी द्वारा प्रदत्त स्टॉक्स की मदद से व्यक्तिगत तौर पर पर्याप्त धन एकत्रित हो गया है।

पॉमरः एक बार फिर आपसे जानना चाहेंगे कि आप उद्देश्यों को किस प्रकार परिभाषित करते हैं?

मैकेयः व्होल फूड का उद्देश्य है कि... उम्म.. यदि आप मुझे पर्याप्त समय दें तो मैं व्होल फूड्स के व्यापक उद्देश्यों के बारे में थोड़ा विस्तार से बताना चाहूंगा। लगभग दो सप्ताह पूर्व ही मैनें हमारे नेतृत्वकर्ताओं के समूह के समक्ष एक व्याख्यान प्रस्तुत किया था। एक मिनट के भीतर मैं जो कुछ भी आपको बता पाऊंगा वह यह है कि हमारी कंपनी सात मौलिक मूल्यों के ईर्द गिर्द संगठित है। हमारा पहला मौलिक मूल्य अपने ग्राहकों को संतुष्ट और खुश करना होता है। हमारा दूसरा मौलिक मूल्य उत्कृष्टता व दल के

सदस्यों की खुशी है। (वैसे, यह सब कुछ हमारी वेबसाइट पर भी मौजूद है, और हम यह सार्वजनिक तौर पर प्रदर्शित करते हैं) हमारा तीसरा मौलिक मूल्य, लाभ व तरक्की के माध्यम से धन का सृजन करना है। चौथा मौलिक मूल्य यह है कि, हम उस समुदाय में, जिसके साथ कि व्यवसाय करते हैं, उनके लिए अच्छा बन सकें। पांचवा मौलिक मूल्य पर्यावरण के प्रति निष्ठा प्रदर्शित करते हुए अपना व्यवसाय करना है। छठां मौलिक मूल्य यह है कि हम अपने आपूर्तिकर्ताओं को सहभागी के तौर पर देखते हैं और हमारी कोशिश दोनों पक्षों को लाभ प्रदान करने वाले संबंध स्थापित करते हुए उन्हें अपने साथ जोड़े रखना है। और सातवां मौलिक मूल अपने सभी हिस्सेदारों और सहभागियों को स्वस्थ भोजन और स्वस्थ जीवन शैली के बाबत शिक्षित करना है। इस प्रकार हमारा सबसे बड़ा उद्देश्य अपने मौलिक मूल्यों को प्रत्यक्ष तौर पर विस्तार देना है। जिनमें से एक है अमेरिका का ईलाज करना। हमारे लोग मोटे और बीमार हैं और हमारे खाने का तरीका अत्यंत ही खराब है और हम हृदय की बीमारियों से या कैंसर से या फिर मधुमेह आदि से ग्रसित होकर से मर रहे है। ये सारी जीवन शैली से जुड़ी हुई बीमारियां हैं, और ये सभी बीमारियां परिहार्य और प्रतिवर्ती हैं। इसलिए यह मौलिक मूल हमारी उच्च प्राथमिकता मे शामिल है। देश की कृषि प्रणाली को और अधिक धारणीय कृषि प्रणाली बनाने का मौलिक मूल, जो कि उत्पादकता के उच्च स्तर वाली भी हो, भी हमारे महत्वपूर्ण उद्देश्यों में शुमार है।

दुनिया भर से गरीबी मिटाने के प्रयास के तहत ग्रामीण ट्रस्ट व अन्य लघु ऋण संगठनों संपादकों के लिए सूचनाः ग्रामीण बैंक और ग्रामीण ट्रस्ट गरीब देशों में विकास की राह की तौर पर, लघु वित्त व्यवस्था को बढ़ावा देता है, विशेषकर महिलाओं के लिए, के साथ कार्य करना हमारे व्होल प्लानेट फाऊंडेशन से संबंधित तीसरा उच्च स्तरीय उद्देश्य है। हम अब 34 देशों (अगले दो वर्षों में हम 56 देशों में होंगे) में सक्रिय हैं और यह पहले से ही सैकड़ों हजारों लोगों पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ रहा है। हमारा चौथा सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य सजग पूंजीवाद का प्रचार प्रसार करना है।

पॉमरः आपने व्यवसाय के उद्देश्यों के बारे में बताया, तो ... फिर लाभ क्यों कमाना? क्या व्यवसाय एक लाभ कमाने वाला उद्यम नहीं है? क्या आप यह सब बिना किसी लाभ के नहीं कर सकते? क्या आप सिर्फ इतना नहीं कमा सकते जितने से कि आप का निवेश निकल आए?

मैकेयः इसका एक जवाब यह है कि, ऐसी दशा में आप ज्यादा प्रभावी नहीं रह जाते हैं। क्योंकि यदि व्यवसाय के माध्यम से आप केवल अपनी लागत निकालना चाहते हैं तो इस दशा में आपका प्रभाव अत्यंत ही सीमित दायरे मे सिमट कर रह जाता है। व्होल फूड्स का जितना प्रभाव तीस वर्ष पहले या बीस वर्ष पहले, या पंद्रह वर्ष पहले या फिर दस वर्ष पहले जितना था, उसकी तुलना में आज के समय में उससे बहुत ज्यादा है। क्योंकि आज हम बहुत ज्यादा मुनाफा कमाते हैं, क्योंकि हम तरक्की करने में सक्षम रहे हैं, और अपने उद्देश्यों को ज्यादा से ज्यादा साकार करने में भी सक्षम रहे हैं। हम लाखों लोगों तक पहुंचने में सफल रहे हैं और इस प्रकार हम लाखों लोगों की सहायता करने में सक्षम रहे हैं बजाए कि कुछेक हजार लोगों के। इस प्रकार मैं समझता हूं कि आपके उद्देश्यों की बेहतर पूर्ति के लिए, आपका लाभ के बारे में सोचना

आवश्यक अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इसके साथ ही लाभ के सृजन से धन प्राप्त होता है जिसकी आवश्यकता हमारी दुनिया को नवाचार करने और तरक्की करने के लिए पड़ती है। लाभ नहीं तो तरक्की नहीं। लाभ और तरक्की, ये दोनों एक दूसरे पर पूर्ण रूप से निर्भर हैं।

पॉमरः लेकिन, यदि लाभ आपके हिस्सेदारों की जेबों में जाता है, तो क्या यह फिर भी आपके उद्देश्यों को उतना ही पूरा करने में सहायक होता है?

मैकेयः निश्चित तौर पर हमारे लाभ का अधिकांशः हिस्सा साझेदारों की जेबों में नहीं जाता है। तुलनात्मक रूप से केवल एक छोटा सा ही हिस्सा, जो हम लाभांस के रूप में अदा करते हैं उनकी जेबों में जाता है। कमाए गए लाभ का नब्बे प्रतिशत से अधिक का हिस्सा, तरक्की और लाभ को और अधिक करने के लिए व्यवसाय में पुनः निवेशित कर दिया जाता है। सच पूछिए तो, आपकी बात सच हो सकती है, यदि हमने अपना शत प्रतिशत लाभ लाभांस के तौर पर अदा कर दिया तो। लेकिन मैं रियल स्टेट इंवेस्टमेंट ट्रस्ट (आरईआईटी) के अतिरिक्त ऐसे किसी भी व्यवसाय को नहीं जानता जो कि ऐसा करता है। अन्यथा, अन्य सभी व्यवसायी तरक्की के लिए पुनः निवेश अवश्य करते हैं। हालांकि हिस्सेदारों के लिए लाभ शुरूआत में उन्हें आपके व्यवसाय में निवेश करने के लिए प्रेरित करता है, जिसके बगैर आपके पास धन बिल्कुल नहीं होगा, जिससे की आप अपने सबसे बड़े उद्देश्य की पूर्ति कर सकें। एक फर्म में निवेश करने के योग्य आर्थिक मूल्य में वृद्धि करने की क्षमता का अर्थ यह है कि आप मूल्य सृजित करने में सक्षम हैं, और जिसे जांचने का एक श्रेष्ठ और आसान पैमाना आपके शेयरों की कीमत है। और वास्तव में उस समय मैं आपको यही बताना चाह रहा था जब मैनें ये कहा था, कि पिछले तीस से अधिक वर्षों में हमने 10 बिलियन डॉलर से अधिक के कीमत के मूल्य सृजित किए हैं।

पॉमरः कभी कभी लोग ये कहते हैं कि मुक्त बाजार असमानता पैदा करते हैं। इस दावे के बारे में आपके क्या विचार हैं?

मैकेयः मुझे नहीं लगता कि यह सच है। इतिहास के सभी कालों में अधिकांश लोगों के लिए चरम गरीबी एक सामान्य मानवीय परिस्थिति रही है। सभी लोग समान रूप से गरीब थे और अत्यंत कम समय तक जीवित रहते थे। दो सौ वर्ष पूर्व पृथ्वी पर रहने वाले 85 फीसदी लोग एक डॉलर से भी कम (आज के एक डॉलर के हिसाब से) में गुजारा करते थे, 85 फीसदी! यह आंकड़ा आज के समय में घटते घटते 20 फीसदी तक आ पहुंचा है और इस सदी के अंत तक यह सिमट कर शून्य फीसदी तक पहुंच जाएगा। इस प्रकार यह एक उभरता प्रवाह है। दुनिया अमीर, और अधिक अमीर होती जा रही है। लोग अब गरीबी की चंगुल से बाहर निकल रहे हैं। मानवता वास्तव में प्रगति कर रही है। हमारी संस्कृति प्रगति कर रही है। हमारी बुद्धिमता प्रगति कर रही है। चूंकि कभी कभी लोग युद्धोन्माद भी हो जाते हैं, और यदि हम अपने आप को बर्बाद न करने का प्रबंध कर लेते हैं, जो कि वास्तव में एक जोखिम है तो हम पेंच की उपरी घाट (सफलता) की ओर बढ़ रहें हैं। वैसे, यह भी एक कारण है कि हमें व्यवसाय और उद्यमों और धन के सृजन को एक स्वस्थ और मजबूत बाजार की भांति ऊर्जा के लिए

प्रोत्साहित करने का काम चाहिए बजाए कि सैन्यवाद, राजनैतिक संघर्ष व धन को नष्ट करने के। लेकिन यह एक अलग बड़ा विषय है।

तो इस प्रकार, क्या यह असमानता को बढ़ाता है? मेरा मानना है कि ऐसा अधिक नहीं होता है, जितना कि पूंजीवाद लोगों को समृद्ध बनाने का काम करता है। अनिवार्य रूप से इसका तात्पर्य यह है कि सभी लोगों की तरक्की एक ही गति से नहीं हो सकती, लेकिन समय आने पर अंततः सबकी तरक्की होगी। पिछले बीस वर्षों के दौरान हमने, विशेष रूप से ऐसा होते हुए देखा है। हमने जैसा कि देखा है, कि पूंजीवाद को गले लगाने के कारण चीन और भारत में करोड़ों लोग गरीबी के चंगुल से बाहर निकाले गए हैं। वास्तविकता तो यह है कि कुछ लोग बड़े आराम से गरीबी से निजात पा रहे हैं और अन्य लोगों की तुलना में ज्यादा शीघ्रता से समृद्ध हो रहे हैं। अब यह गरीबी का कारण नहीं बन रहा है बल्कि यह गरीबी से निजात दिला रहा है। पूंजीवाद शब्द के बाबत अधिकांश लोग सोचते हैं कि यह असमानता पैदा करता है जबकि यह ऐसा नहीं करता है। इतिहास की सभी प्रकार की सामाजिक व्यवस्थाओं में असमानता शास्वत तौर पर विद्यमान रहा है। यहां तक कि समाज में धन के स्वामित्व में समानता लाने का दावा करने वाला साम्यवाद भी विशेषाधिकार प्राप्त कई कुलीन वर्गों की परतों से युक्त हो गया था। इसलिए मैं नहीं समझता कि असमानता का दोष पूंजीवाद के सिर मढ़ा जाना चाहिए। पूंजीवाद तो लोगों को दरिद्रता के चंगुल से छूटने व अधिक से अधिक समृद्ध बनने और धनवान बनने में सक्षम बनाता है, जो कि बहुत अच्छी बात है। यही वह बिंदू है जिसपर हमें ध्यान केंद्रीत करना चाहिए।

विश्व भर में मुक्त बाजार पूंजीवाद को अपना कर धनी बन जाने वाले देशों और उन देशों; जिन्होंने इसे नहीं अपनाया और निर्धन बने रहें, के बीच का विशाल फर्क आसानी से महसूस किया जा सकता है। समस्या यह नहीं है कि कुछ देश धनी हो गए, असल समस्या यह है कि अन्य निर्धन ही बने रहे। जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए था !

पॉमरः आपने मुक्त बाजार पूंजीवाद और अन्य प्रणालियों के मध्य अंतर की व्याख्या की, जिसमें कि लोग मुनाफा भी कमाते हैं और व्यवसाय भी करते हैं। लेकिन इसे प्रायः याराना पूंजीवाद अथवा हिमायती पूंजीवाद का विशेषण भी दिया जाता है। आपकी नैतिक दृष्टि और दुनिया भर के तमाम देशों की मौजूदा व्यवस्था के बीच के फर्क को आप किस प्रकार देखते हैं?

मैकेयः आपके पास कानून व्यवस्था का होना अत्यंत आवश्यक है। लोगों के पास एक ऐसे कानूनों का होना अत्यंत आवश्यक है जो कि सब पर समान रूप से लागू हो। इसके अतिरिक्त, एक ऐसी न्यायिक प्रणाली का होना भी अवश्यंभावी है जिसका कि सर्वप्रथम उद्देश्य, इसके अनुपालन के प्रति सदैव सचेत रहना हो। हमारा प्राथमिक उद्देश्य सबके लिए कानून के समान अनुपालन वाली व्यवस्था प्राप्त करना होना चाहिए। किसी के लिए विशेषाधिकार और किसी के लिए नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए। वैसे, अधिकांश समाजों में जो हो रहा है, और मेरे हिसाब से अमेरिका में अधिक से अधिक जो चीज हो रही है वह यह है कि, जिन लोगों के राजनैतिक ताल्लुकात हैं उनको विशेष इनायत प्राप्त होती है। यह सरासर गलत है। यह बुरी चीज है। इस प्रकार, याराना पूंजीवाद अथवा

हिमायती पूंजीवाद अथवा मेरे मित्र मीचेल स्ट्रॉग द्वारा "क्रैपिटलिज्म" के नाम से पुकारी जानी वाली इस व्यवस्था के तहत समाज द्वारा झेली जाने वाली परेशानियां काफी हद तक यह साबित करती हैं कि आप मुक्त बाजार वाले समाज में नहीं रहते हैं और आप अपनी समृद्धि को अधिकतम नहीं कर पाते हैं। यदि आपके पास सही मायने में मुक्त बाजार की व्यवस्था है और कानून द्वारा इसे सहयोग प्राप्त है तो आप वर्तमान दशा से अधिक समृद्ध हो सकते हैं जबकि आप अनावश्यक रूप से अधिक से अधिक लोगों को कम समृद्ध रख रहे हैं।

पॉमरः चलिए उस देश; यूनाइटेड स्टेट्स की बात करते हैं जहां आप रहते हैं। क्या आपको ऐसा लगता कि यूएस में याराना पूंजीवाद अथवा हिमायती पूंजीवाद व्याप्त है?

मैकेयः मैं हाल फिलहाल का अपना एक मनपसंद उदाहरण देता हूं। दरअसल, दो उदाहरण दूंगा। उनमें से एक यह है कि अब हमे हजारों चीजों पर छूट मिलती हैं जो ओबामा प्रशासन द्वारा नियमों व अधिनियमों के लिए ओबामाकेयर के तहत पहले से ही प्रदान कर दिया गया है। यह याराना पूंजीवाद अथवा हिमायती पूंजीवाद का ही रूप है। ये नियम सभी पर समान रूप से लागू नहीं होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि यदि किसी को छूट देने का अधिकार प्राप्त है तो उसके पास छूट देने से इंकार करने का भी अधिकार होता है। और छूट देने से इंकार प्रायः उनके लिए होता है जो सत्ताधारी राजनैतिक दलों को पर्याप्त रूप से चंदा नहीं देते हैं, या फिर आप उनके हितों की पूर्ति; ये हित चाहे जो भी हों, की पूर्ति नहीं करते हैं। यह एक ऐसा मनमाना कानून है जो कि कुछ चुनिंदा लोगों पर ही लागू होता है व अन्य लोगों पर लागू नहीं होता।

दूसरा उदाहरण जो याराना पूंजीवाद अर्थात हिमायती पूंजीवाद के तहत मैं देखता हूं वह है, "ग्रीन टेक्नोलॉजी" के नाम पर दी जाने वाली सब्सिडी। सरकार कुछ व्यवसायों को सब्सिडी दे रही है, और चूंकि सरकार के पास अपना कोई धन नहीं होता, इसलिए, अंततः वह लोगों से कर के रूप में वसूले गए पैसों का पुनर्वितरण ऐसे लोगों के हित में करते हैं जो कि राजनैतिक तौर पर कृपा पात्र हैं। जनरल इलेक्ट्रिक (जीई) के साथ, कराधान और करदेयता के तौर पर अब जो कुछ भी हो रहा है उसे आसानी से समझा जा सकता है। जीई को करों से संबंधित कानून में बदलाव कर विशेष छूट व कटौती प्रदान की जाती है। और ऐसा उनके सिर्फ वैकल्पिक ऊर्जा तकनीकी के क्षेत्र में क्रियाशील होने के नाम पर किया जाता है। चूंकि उनके राजनैतिक संबंध हैं इसलिए वे एक ऐसे बिंदू पर पहुंच चुके हैं जहां कि उन्हें अपनी अधिकांश आय पर कर चुकाने की जरूरत नहीं पड़ती है। इससे मैं काफी आहत होता हूं। मेरे हिसाब से यह बहुत बुरी बात है।

पॉमरः क्या आप इसे अनैतिक मानते हैं?

मैकेयः जी हां, मैं मानता हूं। अनैतिक... हां, मैं इसे अनैतिक ही कहूंगा। लेकिन इसके लिए आपको अनैतिक शब्द के अर्थ की व्याख्या करने की भी जरूरत पड़ेगी। निश्चित तौर पर यह मेरी नीति शास्त्र और सही गलत की समझ का उल्लंघन करता है। यह अन्य लोगों के नीति शास्त्र का उल्लंघन करता है अथवा नहीं यह कहना कठिन है। लेकिन निश्चित तौर पर यह मुझे पसंद नहीं। मैं इसके बिल्कुल खिलाफ हूं। यह, समाज

का संचालन कैसे हो, की मेरी विचारधारा के अनुरूप नहीं है। एक ऐसे समाज में, जो कि अत्यंत ही मजबूत कानूनी नियमों के द्वारा संचालित होता है, वहां इस प्रकार की चीजें नहीं होनी चाहिए।

पॉमरः आपके द्वारा अंगीकृत मुक्त बाजार पूंजीवाद के तहत मुख्य लाभार्थी कौन होता है?

मैकेयः सभी लोग ! समाज के सभी लोग इससे लाभ प्राप्त करते हैं। बड़ी तादात में मानव जाति को निर्धनता के चंगुल से बाहर निकालने वाला यही है। इस देश को धनी बनाने वाला भी यही है। हम अत्यंत गरीब थे। अमेरिका अवसरों से परिपूर्ण था लेकिन हम धनी देश नहीं थे। यद्यपि अमेरिका, भले ही सर्वोत्तम नहीं रहा है, फिर भी इसने दुनिया के कुछ सर्वाधिक मुक्त बाजारों में से एक होनें का सदियों तक आनंद उठाया है। परिणाम स्वरूप हमने सर्वाधिक गरीबी से समृद्ध और प्रामाणिक तौर पर धनी देश की और प्रगति की है।

पॉमरः बुर्जियोइस डिग्निटी नामक अपनी पुस्तक में डेरड्रे मैकक्लोस्की ने दलील दी है कि यह उस तरीके का परिवर्तन था जिसने कि लोगों को व्यवसाय और उद्यमशील नवाचारों की ओर सोचने को मजबूर किया। जिसने आम जन की समृद्धि को संभव बनाया। क्या आपको लगता है कि धन के सृजन वाले व्यवसाय के संदर्भ में हम पुनः उस आदर के भाव को प्राप्त कर सकेंगे?

मैकेयः हां, मुझे लगता है कि हम आदर के उस भाव को पुनः प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि रोनॉल्ड रीगन ने जब चुनाव जीता तो जो कुछ घटित हुआ था, उसे मैंनें स्वयं देखा था। 1970 के दशक में अमेरिका पतन की ओर अग्रसर था (और इस बाबत किसी को कोई संशय नहीं है)। आप स्वयं देखिए कि हमारी महंगाई की दर क्या थी, ब्याज दरें कहां थीं, जीडीपी किधर जा रहा था, शीघ्र अतिशीघ्र मंदी की पुनरावृत्ति, हम उस "मुद्रास्फीति जनित महंगाई" को झेलने को मजबूर थें जिसने कि कीन्स के आर्थिक सिद्धांतों (किन्सियन दर्शन) की बड़ी खामियों को उजागर कर दिया था। और ऐसे समय में हमें एक ऐसा नेता मिला जिसने करों में कटौती की और अविनियमन के द्वारा तमाम उद्योगों को मुक्त कर दिया। परिणाम स्वरूप नवजागरण हुआ और अमेरिका का पुर्नजन्म हुआ, जिसने हमें पिछले पच्चीस वर्षों या उससे अधिक समय तक व्याप्त परेशानियों से काफी हद तक बाहर निकाला। उस दौरान हम वास्तव में, विकास और उन्नति के उपरोगामी कुंडली के दौर में थे। दुर्भाग्य से, हाल ही में हम फिर से पुराने ढर्रे पर लौट गए हैं, कम से कम कुछ कदम पीछे तो अवश्य लौट चुके हैं। पहला वह काल ... हूं... दरअसल, मैं इन सभी राष्ट्रपतियों और राजनेताओं की निंदा करता हूं, और रीगन भी किसी मामले में श्रेष्ठ नहीं थे, लेकिन हाल फिलहाल राष्ट्रपति बुश ने पीछे बढ़ने की गति को वास्तव में और तेज कर दिया और अब ओबामा इस कार्य को इतने असाधारण तरीके से आगे बढ़ा रहें हैं जैसा कि अब तक किसी राष्ट्रपति ने नहीं किया था।

लेकिन जैसा कि आप जानते हैं मैं एक उद्यमी हूं और इसलिए मैं काफी आशावादी भी हूं। मुझे लगता है कि अब भी इस प्रचलन को वापस लौटाना संभव है। मुझे ऐसा नहीं लगता कि हम अब भी कभी वापस न होने वाले पतन की राह पर हैं। बल्कि मुझे यह

लगता है कि हम शीघ्र अतिशीघ्र ही कुछ बड़े और गंभीर कदम उठाने वाले हैं। हम दिवालिया होने से तभी बच सकते हैं, जब कि हम इस मसले को गंभीरता से लें और कर की मात्रा में वृद्धि और अमेरिकी उद्योग का मार्ग अवरूद्ध किए बगैर इसका निराकरण करें। जबतक कि हम ऐसा नहीं करते मुझे पतन अपरिहार्य प्रतीत होता है। लेकिन फिर भी अभी मैं इसके प्रति आशान्वित हूं।

पॉमरः क्या आपको ऐसा लगता है कि पूंजीवाद एकरूपता को जन्म देता है या इससे विविधता का सृजन होता है? यह प्रश्न मैं उन लोगों को ध्यान में रखकर पूछ रहा हूं जो कोषर (खाद्य पदार्थों (विशेषकर मांस) के पवित्र अपवित्र भाग को ध्यान में रख कर तैयार की जाने वाली पाक विधि) भोजन को पसंद करते हैं अथवा हलाल भोजन की इच्छा रखते हैं अथवा धार्मिक या सांस्कृतिक या फिर लैंगिक आधार पर अल्पसंख्यक हैं...

मैकेयः अपने प्रश्न में उपरोक्त वर्गों को सूचीबद्ध करके आपने अपने प्रश्न का लगभग पूरा जवाब स्वयं ही दे दिया है। दरअसल, पूंजीवाद एक ऐसी व्यवस्था है जिसके तहत लोग परस्पर सहयोग कर अपने साथ ही साथ दूसरों के लिए मूल्यों का सृजन करते हैं। यही सही मायने में पूंजीवाद है। हां, यह अवश्य है कि अन्य चीजों के साथ ही साथ इसमें स्वहित का भी अवयव शामिल है। और इसका मुख्य कारण है दूसरों के हित के साथ ही साथ अपने हित की भावना के साथ सहकारी ढंग से मूल्य सृजन करने की योग्यता का होना। यह उत्पादन के प्रयास में विभिन्नता का सृजन करता है क्योंकि मनुष्य की ईच्छाओं और चाहतों की प्रवृत्ति भी एक दूसरे से अत्यधिक तौर पर भिन्न होती है। बाजार में सहकारिता का व्यवहार करते हुए पूंजीवाद का लक्ष्य उन लोगों को संतुष्ट करना होता है जो किसी प्रकार की ईच्छा और चाहत रखते हैं। इस प्रकार यह व्यक्तिगत तौर पर अत्यधिक मात्रा में वैविध्य का सृजन करता है। यदि आप सत्तावादी समाज में रहते हैं तो कुछ विशेष रूचि वाले समूह, चाहे वे धार्मिक महान्तशाही हों अथवा विश्वविद्यालयी प्रबुद्धजन या फिर कट्टरपंथियों के कुछ समूह, वे सोचते हैं कि सबके लिए क्या श्रेष्ठ है, उन्हें वह सब पता है और वे अन्य सभी लोगों पर अपने मूल्यों को जबरदस्ती थोप सकते हैं। जबकि, पूंजीवादी समाज में आपको कहीं ज्यादा निजता प्राप्त होती है। साधारणतः पूंजीवादी समाज में करोड़ों फूलों को बढ़ने और फलने फूलने के पर्याप्त मौके होते हैं क्योंकि पूंजीवाद का अंततः उद्देश्य मानव का विकास करना है, जो कि इसकी सबसे बड़ी रचना है।

पॉमरः न्यायोचित, उद्यमशील, समृद्ध भविष्य के बाबत आपका दृष्टिगोचर क्या है?

मैकेयः जो कुछ मैं होता देखना चाहता हूं उनमें सबसे पहला यह है कि पूंजीवाद के समर्थक यह समझना शुरू कर दें कि जो रणनीति वे अपना रहे हैं वे दरअसल उसके विरोधियों के हाथों संचालित होते रहे हैं। उन्होंनें स्वयं तो उच्च नैतिक आधार को स्वीकार किया लेकिन पूंजीवाद के विरोधियों को ऐसे शोषक, लालची व स्वार्थी पद्धति के तौर पर प्रस्तुत करने का मौका उपलब्ध करा दिया जो कि असमानता पैदा करता है, कर्मचारियों का शोषण करता है, उपभोक्ताओं को ठगता है और पर्यावरण को बर्बाद करके समुदायों को नष्ट करने का काम करता है। जबकि पूंजीवाद के समर्थकों को यह पता ही नहीं कि इस बाबत क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करें क्योंकि उन्होंने पहले से ही

पूंजीवाद की आलोचना के व्यापक आधार को स्वीकार कर लिया है। इसकी बजाए, उन्हें स्वहित के प्रति अपनी आसक्ति से बाहर निकल कर पूंजीवाद द्वारा सृजन किए जाने वाले मूल्यों की ओर देखना शुरू करना चाहिए जो कि न केवल निवेशकों को हित पहुंचाता है (यद्यपि कि वास्तव में यह ऐसा करता है) बल्कि व्यवसाय में लेन देन करने वाले सभी लोगों का भी हित करता है। यह उपभोक्ताओं को हित पहुंचाता है, यह कर्मचारियों को हित पहुंचाता है, यह आपूर्तिकर्ताओं को हित पहुंचाता है, यह पूरे समाज को हित पहुंचाता है और यह सरकारों का हित करता है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि नौकरियां उपलब्ध कराने वाली, आय के मौके उपलब्ध कराने वाली और धन का सृजन करने वाली एक मजबूत बाजार व्यवस्था; जो कि बाद में सरकार को कर वसूलने का मौका उपलब्ध कराती हैं, से हीन हमारी सरकार कैसी होगी? लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मैं उस बात से काफी रोमांचित हूँ, ध्यान रखिए।

पूंजीवाद मूल्यों का स्त्रोत है। यह सदैव मौजूद रहने वाला सामाजिक सहकारिता का एक अदभुद वाहक है। और यही वह कहानी है जिसे हमें सबको बतानी है। हमें इसकी व्याख्या को बदलने की जरूरत है। यह दर्शाने के लिए कि यह साझा मूल्यों के सृजन न केवल कुछ लोगों के लिए बल्कि सभी के लिए, के बारे में हैं, हमें पूंजीवाद की व्याख्या को नैतिक दृष्टिकोण से परिवर्तित करने की जरूरत है। यदि सभी लोग इसे उसी तरीके से देख सकें जैसे कि मैं देखता हूं, लोग पूंजीवाद से उसी तरह प्यार करेंगे जिस प्रकार कि मैं पूंजीवाद से प्यार करता हूं।

पॉमरः हमें दिए गए बहुमूल्य समय के लिए आपका धन्यवाद।

मैकेयः यह मेरा सौभाग्य है, टॉम।

स्वतंत्रता और गरिमा द्वारा होती है आधुनिक दुनिया की व्याख्या

डेरद्रे एन मैकक्लोस्की

इस निबंध के माध्यम से आर्थिक इतिहासकार और सामाजिक आलोचक डेरड्रे मैकक्लोस्की का तर्क है कि आधुनिक पूंजीवाद का विकास और इसे संभव कर दिखाने वाले विश्व की समुचित व्याख्या केवल 'भौतिक गुणकों' के द्वारा नहीं की जा सकती। जैसा कि इतिहासकारों की पूर्व की पीढ़ियां करती आयी हैं। वास्तव में यह व्यवसाय, आदान प्रदान, नवाचार और लाभ के प्रति लोगों की सोच में आया बदलाव था जिसने आधुनिक पूंजीवाद का सृजन किया और महिलाओं, समलैंगिक लोगों, विभिन्न धर्मावलंबियों, पूर्व के दलित व सताए हुए लोगों के प्रति उदारवादी नजरिया पैदा किया जिनका जीवन आधुनिक कृषि के व्यवसायिकीकरण, चिकित्सा पद्धति, विद्युत व आधुनिक पूंजीवादी जीवन की अन्य सहायक उपकरणों आदि के अविष्कार के पूर्व पशुवत, प्रताड़ना से भरे व अपेक्षाकृत अल्प अवधि वाले हुआ करते थे।

डेरड्रे एन. मैकक्लोस्की शिकागो के इलिनॉयस विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र, इतिहास, अंग्रेजी व संचार की प्रोफेसर हैं। वह अर्थशास्त्र, आर्थिक इतिहास, सांख्यिकी, भाषण कला, साहित्य और क्रॉसिंग नामक एक संस्मरण सहित 13 पुस्तकों की लेखिका हैं। वह जर्नल ऑफ इकोनॉमिक हिस्ट्री पत्रिका की सह संपादक भी रह चुकी हैं और उनकी कृतियां शैक्षणिक पत्र पत्रिकाओं में व्यापक रूप से प्रकाशित होती रहती हैं। हाल ही में उनकी बुर्जुआ डिग्निटीः वाय इकोनोमिक्स कैन नॉट एक्सप्लेन द मॉडर्न वर्ल्ड नामक एक किताब छप कर आयी है।

बाजार व नवाचारों के प्रति लोगों की धारणा में परिवर्तन होने व इसके प्रति सम्मान की भावना जागने की घटना पहले औद्योगिक क्रांति का कारण बनी और बाद में इसने आधुनिक विश्व के निर्माण की नींव रखी। पुरानी रूढ़ीवादी विचारधारा में मनोभावों के लिए कोई स्थान नहीं होते हैं, ना ही उदारवादी विचारधारा के लिए ही कोई जगह होती है। पुरानी भौतिकतावादी कथाएं कहती हैं कि औद्योगिक क्रांति भौतिकतावाद का परिणाम है, निवेश और चोरी का परिणाम है, उच्च बचत दर का परिणाम है या फिर साम्राज्यवाद का परिणाम है। आपने यह कहावत तो अवश्य सुनी होगी, "यूरोप अपने

साम्राज्य के कारण अमीर है, "यूनाइटेड स्टेट्स का निर्माण दासों के बूते हुआ", "चीन अपने व्यापार के कारण अमीर हो रहा है"।

लेकिन क्या होता यदि औद्योगिक क्रांति की चिंगारी लोगों की विचार धारा में आए परिवर्तन के कारण भड़कती। विशेषकर एक दूसरे के प्रति उनकी सोच के कारण? मान लीजिए कि भाप के इंजन और कम्प्यूटर का अविष्कार नवाचार करने वालों के प्रति उत्पन्न हुए एक सम्मान के कारण संभव हुआ और ना कि ईंटों के उपर ईटों का ढेर लगाने से अथवा मृतक अफ्रीकियों के उपर मृतक अफ्रीकियों का ढेर लगाने से।

अर्थशास्त्रियों और इतिहासकारों को अब यह बात समझ में आने लगी है कि औद्योगिक क्रांति की चिंगारी को भड़काने के लिए चोरी अथवा पूंजी संचय से बहुत बहुत ज्यादा किसी और चीज की जरूरत थी। दरअसल, यह पश्चिम के लोगों के वाणिज्य और नवाचार के प्रति मत में बड़े परिवर्तन के चलते संभव हो सका था। लोगों ने 'सृजनात्मक विध्वंस' को पसंद करना शुरू कर दिया। जिसके कारण नई विचारधारा ने पुरानी विचारधारा को परिवर्तित कर दिया। यह बिल्कुल संगीत की तरह है। एक नया बैंड रॉक शैली में कुछ नया विचार लेकर आता है और यदि ज्यादातर लोग मुक्त होकर इसे पसंद करने लगते हैं तो पुराना संगीत विस्मृत हो जाता है। यदि लोग पुराने संगीत को बेकार समझते हैं तो यह नए संगीत की सृजन शीलता द्वारा समाप्त कर दी जाती है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि विद्युत प्रकाश ने केरोसिन लैंप को और कम्प्यूटर ने टाइप राइटर को बर्बाद कर दिया। लेकिन हमारी बेहतरी के लिए।

सही इतिहास इस प्रकार हैः जब तक कि 16वीं शताब्दी और आस पास के डच और 17वीं शताब्दी के आस पास इंग्लैंड के लोगों ने अपनी विचार धारा में परिवर्तन नहीं किया तब तक वहां लोगों को सम्मान महज दो तरीकों से ही प्राप्त हो सकता था। एक या तो आप सेना में भर्ती हो कर सैनिक बन जाइए अथवा दूसरा, आप पुजारी बन जाइए। या तो आप किले में रहिए या फिर चर्च में। लोगों ने यदि आजीविका के लिए कभी किसी भी चीज की खरीद बिक्री कर ली, या नवाचार कर लिया तो वे पापी धोखेबाजों की तरह अपमानित किए जाते थे। 12वीं शताब्दी में एक धनी व्यक्ति की दया याचिका को एक जेलर ने यह कहते हुए खारिज कर दिया, "आओ, मास्टर अर्नाड टेजरी, तुम उपर से नीचे तक ऐश्वर्य से ओत प्रोत हो, तुम ऐसा बिना कुछ पाप किए कैसे हो सकते हो?"

18वीं शताब्दी तक पूरे विश्व की प्रति व्यक्ति प्रति दिन आय, आज की मुद्रा के हिसाब से, एक डॉलर से पांच डॉलर के बीच हुआ करती थी। या यो कहें कि औसतन तीन डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति दिन। आज के समय में महज तीन डॉलर प्रतिदिन में रियो अथवा एथेंस अथवा जोहानसबर्ग में गुजारा करने की कल्पना कीजिए। (हालांकि कुछ लोग अब भी इतने में गुजारा करने को मजबूर हैं) इतने में स्टारबक्स में मिलने वाली कैपेचिनो का महज तीन चौथाई हिस्सा प्राप्त हो सकेगा। यह भयावह था और भयावह है।

फिर हॉलैंड में कुछ बदलाव आया। इसके बाद इंग्लैंड में भी परिवर्तन हुआ। 1517 से 1789 के दौरान की यूरोप की क्रांति और पुर्नजागरण ने धर्मगुरूओं और रईसों (कुलीन

लोगों) के इतर आम लोगों को आवाज उपलब्ध कराया। पहले यूरोप के लोगों ने और उसके बाद धीरे धीरे अन्य लोग भी बेन फ्रैंकलिन, एंड्रयू कार्नेजी और बिल गेट्स जैसे उद्यमशील व्यक्तियों की प्रशंसा करने लगे। मध्यम वर्ग के लोगों को भी अच्छी निगाह से देखा जाया जाने लगा और उन्हें भलाई करने की अनुमति दी जाने लगी। उन्हें और बेहतर करने की अनुमति दी जाने लगी। आज के धनी देशों में शुमार देशों जैसे ब्रिटेन या स्वीडेन या हांगकांग के लोगों ने एक मध्यम वर्ग के समझौतेः "मुझे नवाचार करने दो और नवाचार के थोड़े से समय के भीतर मुझे पैसों के ढेर लगाने दो और दीर्घावधि में मैं आपको मालामाल कर दूंगा" पर हस्ताक्षर किया।

और ठीक ऐसा ही हुआ। 17वीं शताब्दी में फ्रैंकलिन के प्रकाशित रॉड और वॉट के भाप के इंजन के अविष्कार के साथ 18वीं शताब्दी में पागल व 20वीं सदी में और अधिक पागल हो रहे पश्चिमी देशों, जिनके लिए चीन और इस्लाम सदियों तक पिछड़े देश रहे थे, वे आश्चर्यजनक रूप से नवोन्वेषी हो गए।

मानव जाति के इतिहास में मध्यम वर्ग को पहली बार प्रतिष्ठा और स्वतंत्रता प्राप्त हुई तो देखिए आपको क्या प्राप्त हुआः भाप का इंजन, कपड़ा बनाने वाला स्वचलित हथकरघा, असेंबली लाइन, स्वर संयोजन सुविधायुक्त ऑरकेस्ट्रा, रेल परिवहन, व्यापार संघ, दास प्रथा का उन्मूलन, भाप से चलने वाली प्रिंटिंग प्रेस, सस्ता कागज, व्यापक साक्षरता, सस्ता इस्पात, सस्ता थाली गिलास, आधुनिक विश्वविद्यालय, आधुनिक समाचार पत्र, स्वच्छ जल, प्रबलीकृत कंक्रीट, महिला आंदोलन, विद्युत प्रकाश, उपर चढ़ने की लिफ्ट, मोटर वाहन, पेट्रोलियम पदार्थ, येलोस्टोन में छुट्टियां, प्लास्टिक, प्रति वर्ष पांच लाख अंग्रेजी भाषा की नई पुस्तक, संकर प्रजाति का मक्का, पेंसिलिन, हवाई जहाज, शुद्ध शहरी हवा, नागरिक अधिकार, हृदय की शल्य चिकित्सा (ओपन हार्ट सर्जरी) और कम्प्यूटर।

परिणाम इस प्रकार अपूर्व व अद्वितीय रहा कि आम जन और विशेष तौर पर अत्यंत गरीब लोगों ने अधिक, बहुत अधिक उत्कृष्ट प्रदर्शन किया– मध्यम वर्ग के सौदे को याद कीजिए। अमेरिका की कुल जनसंख्या की पांच फीसदी आबादी वातानुकूलित मशीनों और मोटर वाहनों से उतनी ही लैस है जितना कि भारत के सर्वाधिक पांच फीसदी अमीर लोग।

अब ऐसा ही परिवर्तन दुनिया की चालीस फीसदी आबादी वाले देशों चीन व भारत में भी होता देखा जा सकता है। हमारे समय की सबसे बड़ी आर्थिक कहानी वर्ष 2007 से 2009 की महामंदी की कहानी नहीं है (हालांकि यह अरूचिकर अवश्य था)। बड़ी कहानी तो यह है कि चीन ने 1978 में और बाद में भारत ने 1991 में अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में उदारवादी नीतियां अपनायी और सृजनात्मक विध्वंस का स्वागत किया। अब उनके प्रति व्यक्ति वस्तुओं और सेवाओं की संख्या प्रति पीढ़ी चौगुनी होती जा रही है।

अब तक, उन अनेकों स्थानों पर जहां मध्यम वर्गीय स्वतंत्रता व प्रतिष्ठा को आत्मसात कर लिया गया है, वहां एक व्यक्ति प्रतिदिन औसतन सौ डॉलर से ज्यादा धन कमाता है और उसका उपभोग करता है। याद रहे कि दो शताब्दी पूर्व तक समान कीमतों

में यह महज तीन डॉलर प्रतिदिन हुआ करता था। इसमें इलेक्ट्रिक गिटार से लेकर एंटीबायोटिक्स तक तमाम वस्तुओं की गुणवत्ता में हुए आमूल चूल सुधार जैसी बातें शामिल नहीं हैं। रूढ़ीवादी पद्धति से मापे जाने के बावजूद जापान, नार्वे और इटली की युवा पीढ़ी भौतिकवादी परिस्थितियों में अपने दादा के दादा, उनके दादा के दादा, उनके भी दादा के दादा की तुलना में लगभग तीस गुना बेहतर जिंदगी जी रहे हैं। आधुनिक विश्व की अन्य सभी छलांगे जैसे अधिक लोकतंत्र, महिलाओं की स्वतंत्रता, बेहतर जीवन प्रत्याशा, बड़े पैमाने पर शिक्षा, आध्यात्मिक वृद्धि, कलात्मक विस्फोट आदि आधुनिक इतिहास के इस महान तथ्य से मजबूती से जुड़ी हुई हैं कि भोजन, शिक्षा और पर्यटन में 2900 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

महान तथ्य इतना विशाल व इतना अभूतपूर्व होता है कि इसे दिनचर्या के कामों जैसे व्यापार अथवा शोषण या निवेश अथवा साम्राज्यवाद से बाहर निकलता देखना असंभव है। इस दिनचर्या की व्याख्या अर्थशास्त्री ही अच्छे तरीके से कर सकते हैं। फिर भी दिनचर्या के सभी कार्य बड़े पैमाने पर रोम और दक्षिण एशिया के चीन और तुर्क साम्राज्य के दौरान हुए। मिडिल ईस्ट में दास प्रथा का प्रचलन था, जबकि भारत में बड़े पैमाने पर व्यापार होता था। चीन के नहरों और रोम की सड़कों पर बड़े पैमाने पर निवेश हुए। इसके बावजूद कोई महान तथ्य घटित नहीं हुआ। अवश्य ही अर्थशास्त्र के कुछ सामान्य भेदों की व्याख्या में गहरी गलती हुई होगी।

दूसरे शब्दों में कहें तो, आधुनिक विश्व की व्याख्या करने के लिए पूर्णतया आर्थिक भौतिकतावाद पर निर्भर रहना गलती होती है, फिर चाहें यह भौतिकतावाद वाम पंथ का ऐतिहासिक भौतिकतावाद हो अथवा दक्षिण पंथी अर्थशास्त्र। हालांकि मानवीय प्रतिष्ठा और आजादी के विचार ने काम कर दिया। बतौर आर्थिक इतिहासकार जोएल मोकिर के अनुसार, "सभी कालों में आर्थिक परिवर्तन, लोगों की मान्यता और विश्वास पर कहीं ज्यादा निर्भर करते हैं, उससे भी ज्यादा जितना कि अधिकांश अर्थशास्त्री सोचते हैं।" विशाल भौतिक परिवर्तन परिणाम थें, ना कि कारण। यह एक विचार था या शायद एक भाषण कला जो हमारी समृद्धि का कारण बनी और इसके जरिए हमारी आधुनिक स्वतंत्रता का भी।

प्रतिस्पर्धा एवं सहकारिता

डेविड बोआज

इस निबंध में, थिंकटैंक कर्मी व विद्वान डेविड बॉयज प्रतिस्पर्धा और सहयोग के मध्य संबंधों को प्रदर्शित करते हैं। चूंकि समाज का संयोजन किसी ना किसी सिद्धांत पर आधारित होता है इसलिए ऐसे संबंध प्रायः मजबूत विकल्प के साथ प्रस्तुत किए जाते है। इसके विपरीत, बॉयज की व्याख्या के अनुसार, पूंजीवादी व्यवस्था में लोग प्रतिस्पर्धा करते हैं ताकि दूसरों के साथ सहयोग कर सकें।

डेविड बॉयज, कैटो इंस्टिट्यूट के कार्यकारी उपाध्यक्ष व स्टूडेंट फॉर लिबर्टी के सला. हकार हैं। वह लिबरटेरियनिज्मः ए प्राइमर के लेखक हैं और द लिबरटेरियन रीडरः क्लासिक एंड कंटेम्पोरेरी राइटिंग्स फ्रॉम लाओ त्जू टू मिल्टन फ्रीडमैन समेत 15 अन्य पुस्तकों के संपादक भी हैं। वह न्यूयार्क टाइम्स, द वाल स्ट्रीट जर्नल व द वाशिंगटन पोस्ट आदि अखबारों के लिए लिखते भी रहे हैं। वह प्रायः रेडियो और टेलीविजन पर कमेंट्री करते हैं और केटो/लिबर्टी, द गार्जियन, द ऑस्ट्रेलियन व द एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के लिए नियमित तौर पर ब्लॉग्स लिखते हैं।

बाजार की प्रक्रिया के समर्थक प्रायः प्रतिस्पर्धा के लाभों पर जोर देते हैं। प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया लोगों को सतत परीक्षण, अविष्कार व परिवर्तनशील परिस्थितियों की प्रतिक्रिया में उसके साथ सामंजस्य स्थापित करने की अनुमति प्रदान करते है। यह अपने उपभोक्ताओं की सेवा के लिए व्यवसायों को लगातार मुस्तैद खड़े रखने के लिए मजबूर करता है। यह आसानी से देखा जा सकता है कि प्रतिस्पर्धी प्रणाली, केंद्रीयकृत व्यवस्था अथवा एकाधिकार युक्त प्रणाली की तुलना में विश्लेषणात्मक और अनुभवजन्य दोनों ही प्रकार से, अधिक बेहतर परिणाम प्रदान करती है। यही कारण हैं कि मुक्त बाजार प्रणाली की वकालत करने वाले पुस्तकों के माध्यम से, अखबारों में लेखों की सहायता से अथवा टेलीविजन पर परिचर्चा में सदैव बाजार में प्रतिस्पर्धा के महत्व पर जोर डालते हैं और प्रतिस्पर्धा पर रोक लगाने वाले नियमों का विरोध करते हैं।

लेकिन बड़ी तादात में लोग सुनते तो हैं प्रतिस्पर्धा की तारीफ, लेकिन इसका तात्पर्य शत्रुतापूर्ण, गलाकाट प्रतिस्पर्धा अथवा किसी प्रकार एक दूसरे को हानि पहुंचाते हुए आगे निकलने से लगाते हैं। उन्हें आश्चर्य होता है कि क्या विश्व की भलाई के लिए

सहकारिता, प्रतिद्वंदिता पूर्ण रवैये से ज्यादा बेहतर नहीं होगा? उदाहरण के लिए करोड़पति निवेशक जॉर्ज सोरोस मासिक पत्रिका एटलांटिक मंथली में लिखते हैं कि "अत्यधिक प्रतिस्पर्धा और एकदम थोड़ी सहकारिता असहनीय असमानता और अस्थिरता का कारण बन सकती है" आगे वह लिखते हैं कि "मुख्य बिंदू... यह है कि सहकारिता भी व्यवस्था का उतना ही प्रमुख हिस्सा है जितना कि प्रतिस्पर्धा, और 'सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट' का नारा इस तथ्य को विकृत करता है।"

अब यह ध्यान देने की बात है कि मुक्त बाजार अथवा स्वतंत्रता की वकालत करने वालों द्वारा विरले ही 'सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट' कहावत का प्रयोग किया जाता है। इस कहावत का सृजन जैविक विकास की व्याख्या करने के उद्देश्य से हुआ था जो कि वातावरण के साथ अनुकूलता की खासियत को प्रदर्शित करने के लिए ज्यादा मुनासिब है। यह बाजार में उद्यमों के मध्य प्रतिस्पर्धा पर भी भले लागू हो जाए लेकिन इसकी मंशा पूंजीवादी व्यवस्था में केवल सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों की उपस्थिति के बाबत लागू करने की कभी नहीं रही है। आर्थिक प्रतिस्पर्धा की व्याख्या करने के लिए सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट शब्द का प्रयोग करने वाले बाजार के मित्र नहीं दुश्मन हैं।

यह बात स्पष्ट कर देने की आवश्यकता है कि 'मनुष्य, सहयोग के लिए पैदा हुआ है ना कि प्रतिस्पर्धा के लिए' जैसी बात कहने वाले इस बात को समझने में असफल रहे हैं कि बाजार सहयोग ही है। वास्तव में, जैसा कि नीचे चर्चा की गई है, यह लोग हैं जो सहयोग करने के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं।

व्यक्तिवाद और समुदाय

इसी प्रकार, प्रतिष्ठित उदारवाद की मुखालफत करने वाले उदारवादियों पर आणविक व्यक्तिवादिता को प्रोत्साहित करने का, जिसमें कि निजी स्वार्थ के लिए हरेक व्यक्ति अपने आप के लिए एक अलग द्वीप की इच्छा रखता है और दूसरों की इच्छाओं और जरूरतों के लिए उसके मन में सम्मान की कोई भावना नहीं रहती, जैसे आरोप लगाने में तत्परता से जुटे रहते हैं। वाशिंगटन पोस्ट के ई. जे. डॉयने जूनियर ने लिखा है कि आधुनिक उदारवादी मानते हैं कि "व्यक्ति दुनिया में पूर्ण स्वरूप में बतौर बालिग आता है और जन्म के तुरंत बाद से ही उसे उसकी हर क्रिया के लिये जवाबदेह ठहराया जा सकता है।" स्तंभकार चार्ल्स क्रॉथैम्मर ने चार्ल्स मर्रे की 'व्हाट इट मीन्स टू बी ए लिबरटेरियन' की समीक्षा करते हुए लिखा है कि जबतक मर्रे उदारवादी विचारधारा के संपर्क में नहीं आए थे, वह "पहाड़ की चोटी पर कंटीले तारों से घिरे और बाहर 'अतिक्रमण ना करें' लिखे कोठी में रहने वाले असभ्य व्यक्तिवादियों की प्रजाति के थे।" मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह "प्रत्येक दांतों से सशस्त्र" लोगों को शामिल करने की अनदेखी कैसे कर सकते हैं।

कोई भी व्यक्ति वास्तव में "एकाकी व्यक्तिवादिता" में विश्वास नहीं करता है, जैसा कि प्रोफेसर और विद्वानों द्वारा उपहास उड़ाया जाता है। हम तो सब के साथ रहते हैं और समूहों में कार्य करते हैं। हमारे आधुनिक व एक अत्यंत ही जटिल समाज में कोई व्यक्ति आणविक व्यक्तिवादी कैसे हो सकता है, यह स्पष्ट नहीं है। क्या इसका तात्पर्य ये है

कि आप केवल वहीं खाते हैं जो स्वयं उगाते हैं, वहीं पहनते हैं जो आप स्वयं बुनते हैं, उसी मकान में रहते हैं जो आप स्वयं अपने लिए बनाते हैं, अपने आप को केवल प्राकृतिक औषधियों के प्रयोग तक ही सीमित रखते हैं जो स्वयं पौधों से प्राप्त करते हैं? हां, पूंजीवाद के कुछ आलोचक व "प्रकृति की तरफ लौटने" के समर्थक जैसे उनाबॉम्बर अथवा अल गोरे, यदि वह वास्तव में उस बात पर विश्वास करते हैं जो कि उन्होंने "अर्थ इन द बैलेंस" में लिखा है– जरूर ऐसी योजनाओं को बढ़ावा देते हैं। लेकिन कुछ उदारवादी उन लाभों का त्याग कर रेगिस्तानी द्वीप पर अवश्य जाना चाहेंगे जिसे एडम स्मिथ, महान समाज कहते हैं जो कि सामाजिक परस्पर क्रिया द्वारा संभव हुए एक जटिल व उत्पादक समाज है। इसलिए यह सोचा जाएगा कि समझदार पत्रकार रूक जाएंगे, स्वयं द्वारा टाइप किए गए शब्दों को देखेंगे और मन में विचार करेंगे कि "मैनें इस पद का गलत प्रतिनिधित्व किया है। मुझे वापस लौट जाना चाहिए और उदारवादी लेखकों को पुनः पढ़ना चाहिए।"

हमारे समय में इस बतख– अलगाव और एकाकी के बाबत– ने बाजार प्रक्रिया की वकालत करने वालों का बड़ा नुकसान किया। हमें यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम जॉर्ज सोरोस की इस बात के समर्थक हैं कि "सहकारिता समाज का उतना ही अभिन्न हिस्सा है जितना कि प्रतिस्पर्धा"। वास्तव में, हम सहकारिता को मानव समृद्धि को इतना अधिक तरजीह देते हैं कि हम इस बाबत केवल बात नहीं करना चाहते। हम ऐसे सामाजिक संस्थानों की स्थापना करना चाहते हैं कि जो कि इसे संभव बना सके। दरअसल, संपत्ति का अधिकार, सीमित सरकारें और कानून का शासन इसी के बारे में है।

एक स्वतंत्र समाज में व्यक्ति नैसर्गिक और बिना किसी के उपकार के मिलने वाले अधिकारों का आनंद तो उठाता ही है साथ ही उसे अन्य लोगों के अधिकारों का सम्मान करने के अपने सामान्य दायित्वों का भी अवश्य निर्वहन करना चाहिए। हमारे अन्य कर्तव्य वे हैं जिनका चयन हम अनुबंध के आधार पर करते हैं। समाज, जीवन के अधिकार, स्वतंत्रता और समृद्धि भी सामाजिक शांति और भौतिक हितों का उत्पादन करता हैं और यह महज संयोग भर नहीं है। जैसा कि जॉन लॉक, डेविड ह्यूम व अन्य प्रतिष्ठित उदारवादी दार्शनिक बताते हैं कि हमें सामाजिक सहकारिता का उत्पाद करने के अधिकार वाली प्रणाली की आवश्यकता है और इसके बगैर लोगों की उपलब्धियां बहुत ही कम होंगी। ह्यूम ने अपनी किताब ट्रेटीज ऑफ ह्यूमैन नेचर में लिखा है कि मनुष्य के समक्ष पैदा होने वाली परिस्थितियां निम्नलिखित हैं– पहला, हमारा निजी स्वार्थ दूसरा, दूसरों के प्रति हमारी सीमित सदाशयता व तीसरा, हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने वाले संसाधनों की कमी। इन परिस्थितियों के कारण यह हमारे लिए आवश्यक हो जाता है कि हम दूसरों के साथ सहयोग करें और न्याय का शासन हो– विशेषकर संपत्ति और विनिमय के बाबत– ताकि हम इस बात की व्याख्या कर सकें कि ऐसा कैसे हो सकता है। यह शासन इस बात की स्थापना करता है कि हममें से यह निर्णय लेने का अधिकार किसका होगा कि अपने किसी विशेष अधिकार का प्रयोग हम कैसे करें। संपत्ति के अधिकार की विस्तृत व्याख्या के अभाव में हमें लगातार उक्त मुद्दे पर विरोधाभाष का सामना करना पड़ेगा। संपत्ति के अधिकार के बाबत यह हमारा आपसी समझौता है जो कि हमें सहयोग और समन्वय जैसे जटिल सामाजिक कार्यों को करने की अनुमति देता है, जिसके माध्यम से हम समृद्धि हासिल करते हैं।

इससे बेहतर कुछ और नहीं हो सकता कि ये कार्य प्यार से, स्वहित व व्यक्तिगत अधिकारों पर जोर दिए बगैर पूरे कर लिए जाएं। उदारवाद के कई विरोधियों ने विश्वव्यापी परोपकार पर आधारित समाज के अत्यंत चित्ताकर्षक उद्देश्य को प्रस्तुत किया है। लेकिन जैसा कि एडम स्मिथ बताते हैं, "सभ्य समाज में मनुष्य को सदैव बड़ी तादात में लोगों के सहयोग और सहायता की जरूरत पड़ती है," इसके बावजूद उस बड़ी तादात की, जिसकी कि उसे आवश्यकता पड़ती है, के छोटे से हिस्से पर भी वह अपनी कृपा कभी नहीं कर पाता है। यदि हम सहकारिता पैदा करने के लिए पूर्णतया परोपकार पर आश्रित हो जाए तो हम जटिल कार्यों की जिम्मेदारी कभी भी नहीं ले सकेंगे। सुस्पष्ट परिभाषित संपत्ति के अधिकार व मुक्त विनिमय से युक्त प्रणाली में, अन्य लोगों के स्वहित पर भरोसा करना ही एक जटिल समाज को संगठित करने एक मात्र तरीका है।

नागरिक समाज (सिविल सोसायटी)

हमारी इच्छा यांत्रिकीय तरीकों को प्राप्त करने के लिए अन्य लोगों से जुड़ना है जिससे कि अधिक से अधिक भोजन का उत्पादन किया जा सके, वस्तुओं का आदान प्रदान किया जा सके, नई तकनीकी का विकास किया जा सके। इसके साथ ही अन्य मानवीय आवश्यकताओं, जैसे प्रेम, मित्रता व समुदाय के लिए एक दूसरे के साथ संपर्क में रहने की भी हम में प्रबल इच्छा है। अन्य लोगों के साथ जुड़कर हम जिस संस्था का गठन करते हैं उसे हम नागरिक समाज के नाम से जानते हैं। ये जुड़ाव विभिन्न प्रकार के अदभुत संबंधों का स्वरूप भी धारण कर सकते हैं, जैसे परिवार, चर्च, स्कूल, क्लब, बंधुत्व समाज, सह स्वामित्व वाले संगठन, पड़ोसी समूह, और वाणिज्यिक समाज के हजारों स्वरूप। ये सभी जुड़ाव तमाम तरीकों से मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इस प्रकार नागरिक समाज को समाज के सभी नैसर्गिक व स्वैच्छिक संगठनों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

कुछ विश्लेषक वाणिज्यिक व गैर लाभकारी संगठनों के बीच इस तर्क के साथ भेद करते हैं कि व्यापार बाजार का हिस्सा है, ना कि नागरिक समाज का हिस्सा है। लेकिन मैं उस परंपरा को मानता हूं जो कि विभिन्न संगठनों के बीच वास्तविक स्वरूप के आधार पर विशिष्टता बताते हैं। उदाहरण के लिए, अनिवार्य संगठन जैसे कि सरकार व स्वैच्छिक अथवा नैसर्गिक संगठन, जैसे कि अन्य सभी चीजें। चाहे कोई संस्था विशेष, जिसकी स्थापना लाभ प्राप्त करने के लिए हुई हो अथवा किसी अन्य उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए, मुख्य विशेषता यह है कि उस संस्था के साथ आपका जुड़ाव स्वैच्छिक चयन के आधार पर हुआ है।

नागरिक समाज व "राष्ट्रीय उद्देश्य" के बाबत सभी समकालीन भ्रम की स्थिति में हमें एफ. ए. हायक की उन बातों को याद करना चाहिए कि नागरिक समाज के अंतर्गत जुड़ाव का सृजन किसी उद्देश्य विशेष को प्राप्त करना हो सकता है, लेकिन व्यापक तौर पर किसी नागरिक समाज का कोई एक उद्देश्य नहीं हो सकता है। यह एक साथ किसी उद्देश्य के तहत अनभिप्रेरित जुड़ने वाले लोगों द्वारा अनायास ही प्राप्त किया जाने वाला परिणाम है।

बाजार बतौर सहकारिता

बाजार किसी नागरिक समाज का एक सबसे महत्वपूर्ण अवयव है। बाजार का उद्भव दो तथ्यों से होता हैः पहला यह कि मनुष्य व्यक्तिगत रूप से किए जाने वाले कार्य की तुलना में अन्य लोगों के सहयोग से ज्यादा हासिल कर सकता है और इसका अनुभव भी किया जा सकता है। यदि हम ऐसे प्राणी होते जिसके लिए व्यक्तिगत रूप से किए जाने वाले कार्यों की तुलना में सहकारिता के तहत किया जाने वाला कार्य ज्यादा उत्पादक नहीं होता, या फिर हम सहकारिता के लाभों को समझ पाने में असमर्थ होते तो हम अवश्य ही अलग थलग व एकाकी रहते। लेकिन इससे भी बुरा यह है जैसा कि लुडविग वॉन माइसेस व्याख्या करते हैं, "प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति को दुश्मन के तौर पर देखने के लिए मजबूर किया गया होगा, अपनी स्वयं की भूख को संतुष्ट करने की उसकी तृष्णा ने उसे अपने पड़ोसियों के साथ संगदिल संघर्ष के लिए मजबूर किया होगा।" सहकारिता और श्रम के विभाजन के द्वारा परस्पर लाभ की संभावना के बगैर न तो सह. ानुभूति की भावना व दोस्ती और ना ही स्वयं बाजार व्यवस्था का उदय हो सकता है।

संपूर्ण बाजार प्रक्रिया के दौरान व्यक्ति और संस्थाएं बेहतर सहयोग प्रदान करने के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धा करती रहती हैं। जनरल मोटर्स और टोयोटा जैसी कंपनियां परिवहन के मेरे लक्ष्य को प्राप्त करने में मुझे सहयोग करने के लिए परस्पर व दूसरों से प्रतिस्पर्धा करती हैं। एटी एंड टी और एमसीआई जैसी कंपनियां संचार के मेरे लक्ष्य को प्राप्त करने में मुजे सहयोग करने के लिए परस्पर व दूसरों से प्रतिस्पर्धा करती हैं। वास्तव में वे मेरे मतलब के लिए परस्पर इतने आक्रामक तरीके से प्रतिस्पर्धा करती हैं कि संचार के क्षेत्र की किसी अन्य कंपनी द्वारा मुझे स्वचालित जवाब देने वाला फोन प्रदान कर मानसिक शांति और सकून दोनों प्रदान कर दिया गया।

बाजार के आलोचक प्रायः यह शिकायत करते हैं कि पूंजीवाद लोगों को स्वार्थ के प्रति प्रोत्साहित करता है और उन्हें इसके लिए सम्मानित करता है। वास्तविकता यह है कि, लोग सभी राजनैतिक प्रणालियों के तहत स्वार्थी होते हैं। बाजार तो बस उनके स्वार्थ को सामाजिक लाभ की दिशा में मोड़ता है। और लोग एक मुक्त बाजार में अपने उद्देश्यों को पूरा कर पाते हैं यह देखते हुए कि कौन उसके लिए ऐसा करना चाहता है और वह बदले में उसे क्या प्रदान कर सकता है। यह कई लोगों के लिए मछली पकड़ने का जाल अथवा सड़क के निर्माण के लिए एक साथ काम करने का माध्यम हो सकता है। और अधिक जटिल अर्थव्यवस्था में इसका तात्पर्य, एक व्यक्ति द्वारा स्वयं के हित को देखते हुए दूसरों को अपनी वस्तु अथवा सेवाएं, जो उसे संतुष्टि प्रदान कर सकता है, प्रदान करना है। वे कर्मचारी और उद्यमी; जो कि अपनी आवश्यकताओं को सर्वश्रेष्ठ तरीके से पूरा कर सकते हैं, पुरस्कृत किए जाएंगे। जो ऐसा नहीं कर पाते, वे भी जल्द ही ऐसा तरीका ढूंढ लेंगे व अपने से ज्यादा सफल प्रतिस्पर्धी का अनुसरण करने को प्रोत्साहित होते हैं या कुछ नया तरीका ढूंढ लेते हैं।

बाजार में दिखने वाली वे सभी भिन्न भिन्न प्रकार की आर्थिक संस्थाएं परस्पर उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सहयोग करने के बेहतर तरीके ढूंढने के लिए प्रयोग करती रहती हैं। संपत्ति के अधिकार, न्याय के शासन और कम से कम सरकारी हस्तक्षेप वाली प्रणाली

अधिक से अधिक लोगों को सहकारिता के नए नए तरीके ढूंढने के लिए प्रयोग करने की अनुमति देती है। सहयोग की भावना में वृद्धि से उन बड़ी आर्थिक क्रियाओं को भी करने का प्रोत्साहन प्राप्त होता है जिन्हें व्यक्तिगत तौर पर अथवा साझेदारी में कर पाना संभव नहीं होता। सम्मिलित अधिकार वाली संस्थाओं, म्यूचुअल फंड्स, बीमा कंपनियों, बैंकों, कर्मचारियों के स्वामित्व वाली सहकारी संस्थाएं आदि जैसे तमाम संगठन दरअसल, संगठनों के नए स्वरूप में आर्थिक समस्या विशेष का समाधान करने वाले प्रयास ही हैं। ऐसे स्वरूपों में से कुछ अपर्याप्त साबित होते हैं, उदाहरण के लिए, 1960 के दशक की कई कॉरपोरेट कंपनियों के संगठन अप्रबंधन योग्य साबित हुए और उनमें हिस्सेदारी रखने वाले (शेयर होल्डर्स) लोगों के धन डूब गए। बाजार प्रक्रिया की तीव्र गति से फैलने वाली प्रतिपुष्टि संगठनों के सफल स्वरूप के अनुसरण को प्रोत्साहन प्रदान करती है और असफल स्वरूपों को हतोत्साहित करती हैं।

पूंजीवादी व्यवस्था में सहकारिता का भी उतना ही स्थान है जितना की प्रतिस्पर्धा का। नैसर्गिक स्वतंत्रता की साधारण प्रणाली के लिए दोनों आवश्यक तत्व हैं। हम में से अधिकांश लोग प्रतिस्पर्धा की तुलना में अपना अधिकतर समय अपने साझेदारों, सहयोगियों, आपूर्तिकर्ताओं और उपभोक्ताओं के साथ सहयोग करने में व्यतित करते हैं।

दरअसल, जीवन यदि निर्जन हो जाए तो यह अत्यंत बुरा, पाशविक और छोटा हो जाएगा। भाग्यवश, हम सबके लिए पूंजीवादी समाज ऐसा नहीं है।

लाभ आधारित दवा और करुणा का उद्देश्य

टॉम जी पॉमर

इस निबंध में, पुस्तक के इस प्रस्तुत खंड के संपादक ने पीड़ा के निवारण के अपने अनुभवों पर आधारित व्यक्तिगत ध्यान साधना प्रस्तुत किया है। यह किसी सामान्य सिद्धांत की तरह प्रस्तुत नहीं किया जाता है ना ही यह सामाजिक विज्ञान में कोई योगदान है। यह तो व्यापारिक उद्यम और करुणा के मध्य संबंधों को स्पट करने का एक प्रयास है।

– –

औषधि से लाभ प्राप्त करना भयानक और अनैतिक बात हो सकती है। कुछ भी हो, मैनें तो इस प्रकार का आक्रमण होते हमेशा ही सुना है। वास्तव में, यह लिखते हुए मैं कनाडियन ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन पर निजी अस्पतालों के उपर कड़वे हमले की बात सुन रहा हूं। अनेक लोग कहते हैं कि डॉक्टर, नर्स व अस्पताल प्रशासन को केवल अपनी कमाई की चिंता रहती है, दया और करुणा की जगह पत्थर दिल स्वार्थ ने ले लिया है। लेकिन जबरदस्त दर्द और लगभग विकलांग बना देने वाली अवस्था से आराम पाने के लिए अभी अभी दो अस्पतालों; एक लाभार्थ अस्पताल व दूसरा गैर लाभकारी से होकर आने मुझे इस मुद्दे के सम्बंध में एक नई दृष्टि प्राप्त हुई है।

हाल ही में मैं रीढ़ की हड्डी में स्थित डिस्क के खिसक जाने जैसी परेशानी से जूझ रहा था। यह परेशानी ऐसा दर्द पैदा कर रही थी कि मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। मैं एक स्थानीय अस्पताल; जो कि लाभार्थ है, पहुंचा। वहां तत्काल मेरे एमआरआई स्कैन (मैग्नेटिक रीसोनॉन्स इमेजिंग) कराने की व्यवस्था की गई। एक घंटे के भीतर ही समीप के एक लाभार्थ रेडियोलॉजी क्लिनिक से मेरी एमआरआई करा दी गई। इसके बाद मेरी दृढ़ तनिका के उपर (एपिड्यूरल) इंजेक्शन लगाया गया ताकि स्पाइनल स्तंभ में आने वाली नसों की सूजन; जो दर्द का कारण बन रहीं थी, को कम किया जा सके। मैं इतनी अधिक पीड़ा में था कि मुश्किल से ही हिल पा रहा था। मैं जिस लाभार्थ अस्पताल के लाभार्थ दर्द चिकित्सालय में गया था, वहां डॉक्टरों और नर्सों की भरमार थी। उन्होंने मेरे प्रति असाधारण दया की भावना दिखाई और भद्रता पूर्वक मेरा इलाज किया। नर्स द्वारा मुझे सभी प्रक्रियाओं को समझाने और यह सुनिश्चित कर लेने के बाद कि मैनें सभी दिशा निर्देशों को समझ लिया है, मुझे एपड्यूरल इंजेक्शन लगाने वाली डॉक्टर ने अपना परिचय दिया। इलाज के सभी चरणों की विस्तार पूर्वक व्याख्या करने के बाद मेरी बेहतरी की चिंता करते हुए ही वह अपने पेशे के अन्य कामों को शुरू किया।

कुछ सप्ताह तेजी से निकल गए। मेरी स्थिति में, हालांकि मैं अब भी काफी दर्द महसूस करता हूं, काफी सुधार हुआ है। मैं सामान्य अवस्था में पहुंचने की ओर और आगे बढ़ूं इसके लिए मेरे डॉक्टर ने एक और एपिड्यूरल इंजेक्शन लगवाने की सलाह दी। दुर्भाग्यवश, लाभार्थ चिकित्सालय अगले तीन सप्ताह तक के लिए खाली नहीं था और तीन सप्ताह बाद मेरा नंबर आना था, मैनें इतना इंतजार करने की बजाए क्षेत्र के ही दूसरे अस्पताल में स्वयं को दिखाने का फैसला किया। यह अस्पताल काफी विख्यात और सम्मान वाला गैर लाभकारी अस्पताल था और यहां मुझे दो दिन बाद का ही मौका मिल रहा था। मैनें खुशी खुशी अप्वाइंटमेंट ले लिया।

जैसे ही मैं गैर लाभकारी अस्पताल में दाखिल हुआ, मैंने कुछ सहायक लोगों से; जिनमें सेवानिवृत महिलाएं और पुरूष शामिल थे और जिन्होंनें अत्यंत ही साफ सुथरे स्वयंसेवी लिखी वर्दी पहन रखी थी, बातचीत की। निसंदेह वे लोग काफी परोपकारी लोग होंगे, क्योंकि गैरलाभकारी अस्पताल में ऐसे लोगों की ही उम्मीद की जा सकती थी। इसके बाद मैं अपनी छड़ी की मदद से लंगड़ाते हुए दर्द चिकित्सालय की ओर बढ़ चला और वहां एक डेस्क पर बैठ गया। एक नर्स बाहर आयी और उसने मेरा नाम पुकारा। मुझे पहचान लेने के बाद वह लॉबी में मेरे बगल में बैठ गयी। पूछताछ होने लगी, जबकि मैं अनजान लोगों से घिरा था। शुक्र है कि वहां कुछ भी संकोच जनक प्रश्न नहीं पूछे गए। मैनें ध्यान दिया कि वहां कुछ नर्सें ऐसी थीं जो कि मरीजों से आज्ञा देने वाले लहजे में बात कर रहीं थीं और उन्हें आदेश दे रहीं थीं। एक नर्स ने एक महिला को, जो कि स्पष्ट तौर पर काफी दर्द में थी, दूसरी कुर्सी पर बैठने को कहा। और मरीज द्वारा यह कहने पर कि उसे वहीं पर आराम है जहां वह बैठी है, नर्स ने दूसरी कुर्सी की ओर ईशारा करते हुए कहा कि "नहीं, बैठो!"। जब वही नर्स मेरी ओर बढ़ी तो, मुझे लगता है मेरे हाव भाव ने उसे यह बता दिया कि मैं स्कूली छात्र की भांति उसके आदेश को मानने का इरादा नहीं रखता हूं। बिना कुछ बोले ही उसने मुझे परीक्षण कक्ष की तरफ इशारा किया, और मैं उसमें प्रवेश कर गया।

संबंधित डॉक्टर अंदर आया। ना नाम, ना परिचय, ना ही हाथ मिलाया। उसने मेरी फाइल की ओर देखा और खुद से कुछ बुदबुदाया। इसके बाद उसने मुझसे बेड पर बैठ जाने, पैंट नीचे खिसकाने और शर्ट उपर करने को कहा। अपनी ओर झुकते हुए; चूंकि मैं उस अवस्था में आराम महसूस कर रहा था हालांकि बैठना काफी पीड़ादायक था, मैनें उसे बताया कि पहले भी मैं उस प्रक्रिया से गुजर चुका था। उसने मुझे बताया कि मुझे बैठे बैठे ही ऐसा कर लेगा। मैनें जवाब दिया कि मैं अपनी ओर लेट जाना पसंद करूंगा। उसने बताया कि बैठे बैठे ज्यादा अच्छी पहुंच बनेगी। कम से कम इस कारण ने मेरी और उसकी दोनों की रूचि की बात की थी, इसलिए मैं उससे सहमत हो गया। उसके बाद जैसा कि लाभार्थ अस्पताल के डॉक्टर ने नहीं किया था, डॉक्टर ने सूई को ठोंका और मेरे अंदर इस तरह आश्चर्यजनक और अति पीड़ा देने वाली ताकत के साथ घुसेड़ा कि मेरी सच में चीख निकल गई। मेरे पूर्व के अनुभव में ऐसा नहीं हुआ था। इसके बाद उसने सूई को निकाला, अपनी फाइल में कुछ दर्ज किया, और गायब हो गया। नर्स ने एक कागज के टुकड़े को मेरे हवाले किया और बाहर की ओर ईशारा कर दिया। मैंने पैसे चुकाए और वहां से निकल गया।

लाभ और करुणा

लाभार्थ और गैर लाभकारी औषधि की तुलना का आधार बनने के लिए यह अनुभव बस छोटा सा समुच्चय है। लेकिन यह लाभ के उद्देश्य और करुणा से इसके संबंध के बारे में कुछ सलाह भी दे सकता है। ऐसा नहीं है कि केवल लाभकारी अस्पताल ही अकेले दयालु और करुणामय लोगों को आकर्षित करते हैं, क्योंकि गैर लाभकारी अस्पताल के उम्रदराज स्वयंसेवक निसंदेह तौर पर करुणामयी और दयालु थे। लेकिन मैं यह सोचने से अपने आप को रोक नहीं सकता कि लाभार्थ अस्पताल के लाभार्थ चिकित्सालय में कार्यरत डॉक्टरों और नर्सों को कार्य के दौरान करुणा के प्रदर्शन के लिए अतिरिक्त प्रोत्साहन प्राप्त होता है। कुछ भी हो, यदि मुझे अतिरिक्त इलाज की जरूरत पड़ी या मुझे किसी को सलाह देनी पड़ी तो मैं लाभार्थ अस्पताल के बारे में ही सोचूंगा। लेकिन मैं न तो दोबारा गैर लाभकारी अस्पताल जाऊंगा और ना ही किसी और इसकी सलाह दूंगा और मेरा मानना है कि मैं जानता हूं कि ऐसा क्यों है, क्योंकि वहां के डॉक्टर और नर्सों के पास मुझे वहां देखने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं है। और अब मुझे भी यह समझ में आने लगा है कि क्यों गैर लाभकारी अस्पताल ने मुझे इतनी जल्दी अप्वांटमेंट दे दिया। मुझे संदेह है कि कोई भी मरीज वहां दोबारा लौट कर जाता होगा।

अनुभव ऐसा सलाह नहीं देता कि करुणा, परोपकार व शिष्टाचार के लिए लाभ ही जरूरी अवयव है, यहां तक कि यह पर्याप्त शर्त भी नहीं है। मैं एक गैर लाभकारी संस्था में काम करता हूं जो कि व्यापक आधार वाले दानदाताओं के निरंतर समर्थन पर निर्भर है। यदि मैं विश्वासाश्रित दायित्वों की पूर्ति करने में असफल रहूं तो वे मेरे काम को समर्थन देना बंद कर देंगे। ऐसा यूं होता है कि, मैं और मेरे साथी वहां इसलिए काम करते हैं क्योंकि हम दानदाताओं के जैसे ही समान चिंताओं को साझा करते हैं, इस प्रकार व्यवस्था सौहार्दपूर्ण तरीके से कार्य करती है। लेकिन जब दानदाता, कर्मचारी और मुवक्किल (चाहे पीड़ा से ग्रसित लोग हों, या सूचना अथवा अंतर्दृष्टि की तलाश करने वाले जर्नलिस्ट अथवा शिक्षाविद) समान मूल्यों अथवा उद्देश्यों को साझा नहीं करते हैं तो, जैसा कि गैर लाभकारी अस्पताल में हुआ, लाभ का उद्देश्य बल पूर्वक कार्य करता है और उन लक्ष्यों के बीच सामंजस्य पैदा करता है।

सुपरिभाषित और लागू कानूनी अधिकारों के परिप्रेक्ष्य में कमाया गया लाभ रूखेपन का नहीं बल्कि करुणा की स्थापना करता है। लाभ की तलाश के दौरान जरूरी होता है कि डॉक्टर मरीज की रूचि को समझे। वह स्वयं को मरीज की स्थिति में रखे ताकि उसकी परेशानी को भली भांति समझ सके, ताकि करुणा की भावना प्रदर्शित कर सके। मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था में लाभ का उद्देश्य हो सकता है लेकिन करुणा इसका दूसरा नाम होगा।

खंड 2

स्वैच्छिक वार्तालाप और स्वहित

विरोधाभासी नैतिकता

माओ यूशी (ज्यूड ब्लानसेटे द्वारा अनुवादित)

इस निबंध में चीनी अर्थशास्त्री व विद्वान और सामाजिक उद्यमशील माओ यूशी ने, सामंजस्य और सहकारिता स्थापित करने के क्षेत्र में बाजार द्वारा निभाई जाने वाली भूमिका की व्याख्या की है। वह उन लोगों के द्वारा जो कि स्वहित जैसे विरोधाभासी व्यवहार के साथ पूंजीवाद के आलोचकों द्वारा तैयार की गई कल्पनाओं के विनिमय के कार्य में लिप्त हैं, के साथ कम कीमत और लाभ की तलाश का खुलासा करते हैं। वह चीन की साहित्यिक विरासत और पूंजीवाद को समाप्त करने के चीन के सर्वनाशी प्रयोग के दौरान के अपने स्वयं के अनुभवों (लाखों अन्य चीनी लोगों) के आधार पर उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

माओ यूशी, चीन के बीजिंग में स्थित यूनीरूल इंस्टीट्यूट के संस्थापक चेयरमैन हैं। वह कई पुस्तकों व विद्वत्तापूर्ण और मशहूर लेखों के लेखक हैं। उन्होंने ढेरों विश्वविद्यालयों में अर्थशास्त्र पढ़ाया है। उन्होंनें चीन की पहली गैर सरकारी चैरिटी और स्वतंत्र स्वयंसेवी संस्था की स्थापना की। वह स्वतंत्रता के साहसी हिमायती के तौर पर जाने जाते हैं। वर्ा 1950 में उन्हें "यदि पोर्क बिकने की कोई जगह नहीं है तो इसकी कीमत बढ़ जाती है" और "यदि चेयरमैन माओ एक वैज्ञानिक से मिलना चाहता है तो किसे, किसके पास जाना चाहिए" जैसा वकतव्य देने के लिए बंधुआ मजदूरी, निर्वासन, "पुर्नशिक्षा" और लगभग भूखा रखने जैसा दंड मिला था। और इस पुस्तक के ठीक पहले 82 वर्ा की उम्र में वर्ा 2011 में उन्होंने एक लोक निबंध लिखा जो कि "रिटर्निंग माओ जिडांग टू ह्यूमेन फार्म" नामक ऑनलाइन कैक्सिन पर प्रकाशित हुआ। इस लेख के कारण उन्हें जान से मारने की कई धमकियां मिलीं तो उन्हें बतौर इमानदार और न्यायप्रिय व्यक्ति काफी ख्याति भी प्राप्त हुई। माओ यूशी, समकालीन विश्व के महान उदारवादी सख्शियत हैं और वे उदारवादी विचारधारा को लाने और चीन के लोगों और व्यापक विश्व में स्वतंत्रता का अनुभव कराने के लिए अथक प्रयासरत हैं।

— —

भद्रपुरूषों के देश में हितों का टकराव

18वीं और 19वीं सदी के बीच चीनी लेखक ली रूझेन ने एक उपन्यास, फ्लावर इन द मिरर लिखा। पुस्तक में टैंग आओ व्हो नामक व्यक्ति का वर्णन किया गया था, जो कि

अपना भविष्य बनाने के लिए अपने बहनोई के साथ विदेशों की यात्रा करता है। समुद्री यात्रा के दौरान, वह शानदार और आकर्षक दृश्यों व ध्वनियों वाले कई अलग अलग देशों की यात्रा करता है। वे पहली बार जिस देश की यात्रा करते हैं वह 'भद्रपुरूषों का देश' है।

भद्रपुरूषों के देश के सभी निवासी दूसरों का लाभ सुनिश्चित करने के लिए जानबूझ कर स्वयं यातना झेलते हैं। उपन्यास का 11वां अध्याय बेलिफ (ली रूझेन ने यहां जानबूझकर एक चीनी पात्र का जिक्र किया है, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि प्राचीन चीन में बेलिफों को विशेषाधिकार प्राप्त था और वे आम जनता को डांट फटकार लगाते रहते थे।) नामक पात्र की व्याख्या करता है जिसे सामान खरीदते समय निम्नलिखित परिस्थितियों का सामना करना पड़ता हैः

> मुट्ठीभर माल का परीक्षण करने के बाद बेलिफ विक्रेता से कहता है, 'मित्र, तुम्हारे पास उच्च कोटि का माल है, फिर भी तुम्हारे माल की कीमत कम है। तुम्हारा फायदा उठाकर मैं आराम से कैसे रह पाऊंगा? यदि तुमने कीमत को नहीं बढ़ाया तो हम आगे से तुम्हारे साथ कोई व्यापार नहीं करेंगे।'
>
> विक्रेता ने कहा, 'मेरी दुकान पर आ कर आपने मुझ पर एहसान किया है। अक्सर ऐसा कहा जाता है कि विक्रेता बहुत ज्यादा कीमत की मांग कर रहा है, और ग्राहक उसे बहुत कम देने की पेशकश करते हैं। मेरी कीमत बहुत ज्यादा है, फिर भी आप इसे और बढ़ाने की बात कह रहे हैं। मेरे लिए इस पर सहमत होना कठिन है। बेहतर होगा कि आप माल खरीदने के लिए किसी और दुकान पर चले जाएं।'

विक्रेता के इस जवाब को सुनकर बेलिफ ने कहाः 'तुमने इस उच्च कोटि की वस्तु के लिए इतनी कम कीमत लगाई है। क्या इससे तुम्हारा घाटा नहीं होगा। हमे धोखेबाजी का काम नहीं करना चाहिए और धैर्यपूर्वक काम करना चाहिए। क्या ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि हम सभी के भीतर एक एबाक्स निर्मित है? कुछ समय तक झगड़ने के बाद भी विक्रेता कीमत ना बढ़ाने की अपनी जिद पर अड़ा रहा, जबकि बेलिफ ने गुस्से में आकर, जिस मात्रा में माल खरीदना था, उससे आधा माल ही खरीदा। अभी वह निकलने वाला ही था कि विक्रेता ने उसका रास्ता रोक लिया। इसी समय, दो बुजुर्ग व्यक्ति आए जो खरीद फरोख्त की पूरी परिस्थितियों का मुआयना कर रहे थे और उन्होंने बेलिफ को 80 फीसद माल खरीदने के बाद जाने का आदेश दिया।'

पुस्तक एक दूसरे खरीद फरोख्त का भी वर्णण करता है, जिसमें खरीददार को लगता है कि माल के लिए मांगी जाने वाली कीमत काफी कम है जबकि वस्तु की गुणवत्ता काफी अच्छी है। उधर, विक्रेता बार बार जोर देकर कहता है कि माल ताजा नहीं है और इसलिए इसे साधारण ही माना जाना चाहिए। अंत में, ग्राहक, विक्रेता के सबसे खराब सामानों को खरीदने के लिए चुनता है। इसके आसपास के भीड़ उसे अनुचित ठहराती है, इसलिए ग्राहक को आधा सामान उच्च कोटि के ढेर से खरीदना पड़ता है और आधा कम गुणवत्ता वाले ढेर से। एक तीसरे खरीद फरोख्त में, चांदी की गुणवत्ता

व उसके वजन को लेकर दोनों पक्ष झगड़ा करने लगते हैं। चांदी के रूप में मूल्य अदा करने वाला पक्ष कठोरता पूर्वक कहता है कि उसके चांदी की गुणवत्ता खराब है और इसका वजन भी अपर्याप्त है। जबकि जिस पक्ष को कीमत मिलनी है, वह कहता है कि चांदी की गुणवत्ता और वजन उच्च कोटि का है। ग्राहक के चले जाने के बाद कीमत वसूलने वाला पक्ष आभार प्रकट करने के उद्देश्य से अतिरिक्त चांदी को वहां से गुजरने वाले एक भिखारी को दे दिया।

इस उपन्यास में दो मुद्दे प्रमुख रूप से उठाए गए हैं, जो आगे चर्चा करने योग्य हैः

पहला यह कि, जब दोनों पक्ष लाभ के अपने अपने हिस्से को छोड़ने के लिए तैयार हैं, या इस बात पर अडिग हैं कि लाभ का उनका हिस्सा काफी अधिक है, तो बहस जारी रहती है। हमारे वास्तविक जीवन में यदि हमारा सामना ऐसी बहस से होता है तो हममें से अधिकांश लोग अपने हित का ही पक्ष लेंगे। परिणाम स्वरूप हम अक्सर, यह मानने की गलती कर बैठते हैं कि यदि हम उस जगह होते तो हम हमेशा दूसरे पक्ष की तरफदारी करते, और ऐसा विवाद पैदा ही नहीं होता। लेकिन भद्रपुरूषों के देश में, हम देख सकते हैं कि अपने विचार के आधार पर किसी एक के हितों की तरफदारी करना भी मुसीबत पैदा करने वाला हो सकता है। इस प्रकार, हमें सौहार्दपूर्ण और सहयोगी समाज की तार्किक स्थापना की अत्यंत आवश्यकता है।

अपनी तफ्तीश की ओर एक कदम और आगे बढ़ते हुए, हमें इस बात को स्वीकार करना होगा कि आधुनिक विश्व में व्यापारिक सौदों में खरीद फरोख्त के लिए दोनों पक्षों को अपने अपने हित देखने होते हैं। दोनों पक्षों को शर्तों (कीमतों और गुणवत्ता सहित) के बाबत बातचीत के द्वारा सहमति स्थापित करनी होती है। लेकिन, भद्रपुरूषों के देश में, इतना विरोधाभास है कि ऐसी सहमति का स्थापित होना असंभव हो जाता है। इस उपन्यास में, लेखक ने एक वृद्ध व्यक्ति और भिखारी को शामिल किया है और विवाद के समाधान के लिए मजबूरी का सहारा लिया है। यहां हमारा सामना बातचीत जैसी गूढ़ व महत्वपूर्ण सच्चाई से होता है, जिसमें कि दोनों पक्ष अपने अपने व्यक्तिगत लाभ की तलाश करते हैं और साम्य अवस्था को प्राप्त करते हैं। जबकि यदि दोनों पक्ष दूसरे पक्ष के लाभ के बारे में सोंचे तो वे कभी परस्पर आम राय तक नहीं पहुंच पाते हैं। इसके अलावा, इससे समाज द्वारा स्वयं में एक दूसरे बेमेल समाज का निर्माण होगा। यह तथ्य अधिकांश लोगों की उम्मीदों के खिलाफ जाएगा। चूंकि भद्रजनों का देश अपने निवासियों के संबंधों के मध्य संतुलन को समझने में सक्षम नही है, इसलिए यह धीरे धीरे अविवेकी और अशिष्टता वाले देश में तब्दील हो जाएगा। चूंकी भद्रजनों का देश दूसरों के हित को पहले देखने के प्रति अभिप्रेरित है इसलिए यह तुच्छ चरित्र के लोगों के प्रजनन स्थल में तब्दील हो जाएगा। जब भद्र लोग विनिमय करने में असफल रहते हैं, तब अविवेकी व अशिष्ट लोग भद्रजनों द्वारा स्वयं के हितों की अनदेखी कर दूसरों को हित पहुंचाने के तथ्य का फायदा उठाने लगते हैं। यदि ऐसा ही चलता रहा तो भद्रजन मृत्यु को प्राप्त हो जाएंगे और उनका स्थान अविवेकी व अशिष्ट लोग ले लेंगे।

उपरोक्त तर्क के आधार पर हम देख सकते हैं कि, व्यक्ति केवल उस परिस्थिति में सहयोग करता है जब उसे अपना हित दिखाई देता है। यही वह सुरक्षित नींव है जिस

पर मानवता एक आदर्श विश्व की स्थापना करने के लिए प्रयास कर सकता है। यदि मानव जाति को सीधे व अनन्य तौर पर दूसरों का लाभ देखना पड़े तो किसी भी आदर्श की स्थापना नहीं हो सकेगी।

विवाद को कम करने हेतु वास्तविकता को अपने शुरुआती तर्क के तौर पर प्रयोग करते हुए, हमें अपने साथी व्यक्ति का अवश्य ध्यान रखना चाहिए और अपनी निजी आकांक्षाओं को रोकने के तरीकों की तलाश करनी चाहिए। लेकिन यदि दूसरों का हित का ध्यान रखना हमारे सभी व्यवहारों का लक्ष्य बन जाता है तब यह वैसे ही टकराव की स्थिति पैदा कर देता है जैसा कि भद्रजनों के देश में ली रूझेन ने वर्णन किया है। भद्रजनों के देश में शायद ऐसे लोग भी होते हैं जो जीवन की हास्यप्रद बातें ज्यादा करते हैं जो वास्तविक जीवन में संभव नहीं होता है। लेकिन जैसे जैसे पुस्तक स्थितियां स्पष्ट करती जाती हैं, वास्तविक जीवन की घटनाएं और भद्रजनों के देश की घटनाओं में समानता दिखती जाती है। इसे दूसरे तरीके से प्रस्तुत करने के लिए, वास्तविक जीवन और भद्रजनों के देश दोनों में स्वहित की धारणा के सिद्धांत में स्पष्टता में कमी आने लगती है।

भद्रजनों के देश के वाशिंदों का उद्देश्य क्या है? पहले हमें यह पूछना चाहिए, "मनुष्य विनिमय क्यों करना चाहता है?" क्या यह प्राचीन वस्तु विनिमय है या आधुनिक समाज में मुद्रा प्राप्त करने के लिए की जाने वाली वस्तुओं के आदान प्रदान की प्रक्रिया है। विनिमय की प्रक्रिया के पीछे का उद्देश्य एक व्यक्ति की स्थितियों में सुधार करना, उसके जीवन को और अधिक सुविधाजनक और आरामदायक बनाना है। बिना प्रोत्साहन के एक व्यक्ति अपने पर मेहनत करने की बजाए विनिमय करना क्यों पसंद करेगा? सूई और धागे से लेकर रेफ्रिजरेटर और रंगीन टीवी आदि जितनी सारी भौतिक आनंद हम प्राप्त करते हैं, यह सब केवल विनिमय के कारण ही उपलब्ध है। यदि लोग विनिमय नहीं करेंगे, तो गांव में खाद्यान्न और कपास के पौधे लगाने योग्य ही रह जाएंगे। मिट्टी की ईंटों के प्रयोग से घर बनाएंगे और एक व्यक्ति की जरूरत की सारी चीजें उपलब्ध कराने वाली मिट्टी को उलट पुलट करेंगे। इस प्रकार से, लोग अपने जीवन को उसी प्रकार आगे बढ़ाएंगे जैसे कि हमारे पूर्वज दस हजार वर्ष पूर्व किया करते थे। लेकिन हम निश्चित तौर पर आज की आधुनिक सभ्यता द्वारा उपलब्ध कराये जाने वाले लाभों का आनंद नहीं उठाएंगे।

भद्रजनों के देश में लोगों के पास पहले से ही सरकार और बाजार दोनों ही है, जो यह दर्शाता है कि वे पहले से ही आर्थिक स्वपर्याप्तता का परित्याग कर चुके है और इसकी बजाए भौतिक परिस्थितियों को सुधारने के लिए विनिमय के रास्ते को चुना है। इन सब के बावजूद ऐसा क्यों है कि आर्थिक विनिमय करते समय वे अपने हितों के बारे में नहीं सोचते हैं? यदि शुरूआत में ही विनिमय का तर्क अपने हित की बजाए दूसरों के हित को प्रोत्साहित करने लगे तो भद्र पुरूषों वाले गुण पैदा होने लगते हैं। हालांकि, विनिमय में हिस्सा लेना वाला हर कोई, या जिसे विनिमय करने का अनुभव है, जानता है कि विनिमय की प्रक्रिया में दोनों पक्ष स्वहित के लिए शामिल होते हैं। जबकि जो लोग विनिमय की प्रक्रिया के दौरान अपने हितों के विपरीत कार्य करते हैं उन्हें उद्देश्यों की विसंगति को झेलना पड़ता है।

क्या कीमतों के बाबत मोलभाव के बगैर आपसी लाभ वाले समाज की स्थापना कर पाना संभव है?

उस दौरान जब चीन मे 'ली फेंग' (पीपल्स लिब्रेशन आर्मी का एक सिपाही) के जीवन और कार्य को प्रोत्साहित किया जा रहा था, तब सभी टेलीविजन पर 'ली फेंग' के किसी भी समर्पित और दयालु एम्युलेटर को एक एक सदन के लोगों के लिए बर्तन और पैन की मरम्मत करते देख जा सकता था। तब एक ने अपने सामने लोगों की लंबी लाइन बनती देखी, जिसके हर व्यक्ति के हाथ मे टूटे–फूटे बर्तन थे जिन्हें मरम्मत की जरूरत थी। इन तस्वीरों का जो अभिष्ट संदेश था, वह था अन्य लोगों को ली फेंग के उस दयालु प्रवर्तक की तरह बनने के लिए प्रेरित करना, और जनता का ध्यान उस उदाहरण की तरफ आकर्षित करना था। इस बात पर ध्यान दें, की अगर यह लंबी लाइन नहीं बनती तो, इस मत–प्रचार को तेजी से आगे बढ़ाने के लिए इतनी शक्ति नहीं मिलती। हमें इस बात पर भी गौर करना चाहिए की, उस लाइन मे जो लोग अपने टूटे–फूटे बर्तनों के साथ खड़े थे उनका उद्देश्य 'ली फेंग' से सीख लेना नहीं; बल्कि इसके उलट, वे अन्य किसी के खर्चे ओर अपने फायदे के लिए खड़े थे। जहां इस तरह के मत–प्रचार दूसरों के लिए कुछ अच्छा कार्य करने की सीख देते हैं वहीं दूसरी तरफ ये यह भी सिखाते हैं कि किस तरह अन्य लोगों के काम से अपना निजी लाभ उठाया जा सकता है। पहले के समय में, यह माना जाता था कि दूसरों की सेवा हेतु काम करने के लिए बिना कोई मूल्य लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के मत–प्रचार से समाज मे नैतिक मूल्यों की वृद्धि होगी। यह निश्चित तौर पर समझा जा सकता है कि यह एक बड़ी नासमझी है, उन लोगों के लिए जो यह सीख लेते हैं कि किस तरह से कुछ निजी लाभ उठाया जा सके, जिनकी संख्या ऐसे लोगों की तुलना मे कहीं ज्यादा होती है जो दूसरों की सेवा के लिए कैसे काम किया जाए, यह सीख लेते हैं।

आर्थिक लाभ के दृष्टिकोण से, अन्य लोगों की सेवा हेतु कार्य की सार्वभौमिक जवाबदेही आश्चर्यजनक है। जो लोग निशुल्क मरम्मत के कार्य से आकर्षित होकर आ रहे थे वे संभव है, ऐसी क्षति वाले बर्तन भी लेकर आ रहे थे जिनकी मरम्मत करना फायदेमंद नहीं होता। संभवतः सीधे कबाड़ से। लेकिन उन्हें दुरुस्त करने पर लगने वाला खर्च शून्य हो गया था इसलिए, उन्हें दुरुस्त करने मे समर्पित होने वाला समय बढ़ जाएगा और, उन्हें दुरुस्त करने मे दुर्लभ तत्वों का भी इस्तेमाल होगा। चूंकि इसे ठीक करने का पूरा भार अन्य व्यक्ति के कंधों पर होगा, ऐसे मे एक औसत व्यक्ति के लिए इसपर आने वाला खर्च सिर्फ वह समय होगा जिसमे वह लाइन मे खड़ा रहेगा। सम्पूर्ण समाज की लाभप्रद स्थिति के नजरिए से, लगने वाले सभी समय, मेहनत और खराब हो चुके बर्तनों की मरम्मत मे लगने वाले तत्वों का सिर्फ एक ही लाभ होगा और वह है कुछ मुश्किल से इस्तेमाल होने वाले बर्तनों का दुरुस्त होना। अगर यह समय और तत्व किसी अन्य उत्पादक कार्य मे इस्तेमाल होते तो इससे निश्चित तौर पर समाज के लिए अधिक मूल्यवान होता। आर्थिक कार्यक्षमता और सम्पूर्ण संपन्नता के नजरिए से, इस तरह के अनिवार्य और निशुल्क मरम्मत के कार्य अच्छा करने की तुलना मे नुकसान अधिक करते हैं।

क्या होता अगर, 'ली फेंग' का कोई अन्य दयावान हृदय प्रवर्तक भी निशुल्क मरम्मत कार्य की इच्छा से लाइन मे लगे लोगों का कार्य करने के लिए बैठ जाता, क्या इस लाइन से उकता चुके व्यक्ति को राहत मिलती, या टूटे–फूटे बर्तनों को दुरुस्त करने पहुँचने वालों की लाइन और लंबी हो जाती। यहाँ यह सोचना तो हास्यास्पद होगा कि, अगर एक समूह लाइन मे खड़ा है तो दूसरा ऐसा नहीं कर सकता। इस तरह की बाध्यता के सिस्टम यह पहले से मान कर चला जाता है कि एक समूह पूर्वशर्त के तौर पर सेवा की उम्मीद करेगा। सेवा की इस तरह की नैतिकता सार्वभौमिक नहीं हो सकती। स्पष्टतः, जिन लोगों ने बिना मेहनताने वाले आपसी सेवा के इस सिस्टम की सर्वोच्चता की बढ़–चढ़कर डींगें हाँकी, उन्होने इस नजरिए से नहीं सोचा।

अन्य लोगों की वस्तुएँ दुरुस्त करने की अनिवार्यता का एक अतिरिक्त अप्रत्याशित परिणाम भी है। जो लोग पहले से मरम्मत के कार्य मे लगे हुए हैं, उनके पास आने वाले लोगों को अगर 'ली फेंग' के छात्रों ने आकर्षित कर लिया तो, उनका तो काम ही ठप्प हो जाएगा और उनके लिए मुश्किलें खड़ी हो जाएंगी।

मैं किसी भी तरह से ली फेंग के अध्ययन का विरोधी नहीं हूँ, जिस तरह से उन्होंने जरूरतमंदों की मदद की, वह समाज के लिए सकारात्मक है, यहाँ तक कि एक आवश्यक कार्य है। तब भी, दूसरों की सेवा की बाध्यता फेंग ली की सेवा भावना के प्रति असंगति, घबराहट उत्पन्न करेगा और उसकी गलत बयानी करेगा।

हमारे समाज में, जो लोग थोड़े विद्वेषी होते हैं, और ऐसे समाज से नफरत करते है जो, उनके अनुमान से सभी अन्य लोगों के ऊपर से पैसा उठाती है। वे सोचते हैं की वे लोग जिनके पास पैसा है, घृणायोग्य हैं और और उन्हें अमीर लोग समाज से ऊपर दिखाई देते हैं, जबकि गरीब मानवता के लिए कष्ट भुगतता है। वह मानता है की पैसा मनुष्यों के बीच के सामान्य सम्बन्धों को बिगाड़ता है। परिणामस्वरूप, वह आपसी सहयोग आधारित एक समाज का निर्माण करना चाहता है, जो पैसा और कीमत की वार्ता से भी मुक्त हो। यह ऐसा समाज होगा जहां देहाती लोग बिना किसी पारितोषिक की इच्छा के फसल उगाएंगे, कार्यकर्ता सभी के लिए कपड़े बुनेंगे, यह भी बिना परितोषिक के और जहां नाई बिना शुल्क के लोगों के बाल कटेगा, आदि....। क्या इस तरह का आदर्श समाज संभव है?

जवाब देने के लिए, हमे स्रोत विनियोजन के आर्थिक सिद्धान्त की ओर मुड़ना होगा, जिसके किए कुछ दूर तक विचलन की जरूरत है। इसे आसान बनाने के लिए, हम एक सोच अनुभव से शुरुआत कर सकते हैं। एक नाई को ले लें। मौजूदा समय मे, आदमी हर 3 से 4 हफ्ते मे अपने बाल कटवाता है, लेकिन जब बाल कटवाना निशुल्क था, तब शायद वह हर हफ्ते नाई के पास जाता होगा। बाल कटवाने के लिए लगने वाले शुल्क ने नाई की कुशलता का बेहतर इस्तेमाल शुरू किया। बाजार मे, नाई की सेवा की कीमत, समाज पर इस प्रोफेशन द्वारा समर्पित मेहनत को दर्शाता है। अगर राज्य बाल काटने पर लगने वाला शुल्क कम करता है, तब बाल कटवाने के इच्छुक लोगों की संख्या बढ़ जाएगी, इस हिसाब से नाइयों की संख्या बढ़ाने की जरूरत भी होगी, और अगर कुल श्रम–शक्ति

लगातार यहाँ लगी रही तो अन्य काम–काज मे कमी आएगी। नाई के व्यवसाय मे जिस तरह का सत्य स्पष्ट हो रहा है,वही सत्य अन्य व्यवसायों मे भी होगा।

चीन के अधिकतर ग्रामीण इलाकों मे, निशुल्क सेवाओं की पेशकश काफी आम है। अगर कोई एक नया घर बनाना चाहता है, तो उसके सभी रिश्तेदार और मित्र निर्माण मे उसका सहयोग करने आएगे। ऐसा आमतौर पर किसी मेहनताने के बगैर किया जाता है, सहयोग मे लगे सभी लोगों को अधिक मात्रा मे भोजन कराया जाता है। इसी तरह से, जब अगली बार लाभान्वित व्यक्ति का कोई मित्र नया घर बनाएगा तो पहली बार निशुल्क सहयोग लेने वाला व्यक्ति उसकी कीमत के तौर पर उसका सहयोग करेगा। मरम्मत करने वाले आमतौर पर इलेक्ट्रिक सामान बिना किसी शुल्क के करते हैं, और यह उम्मीद करते हैं की चीनी नव वर्ष के अवसर पर उन्हें तोहफा मिलेगा। इस तरह के बिना द्रव्य–संबंधी आदान–प्रदान दी जा रही सेवाओं के मूल्यों का उपयुक्त आंकलन नहीं कर सकते। इसके परिणामस्वरूप, मजदूरों के मूल्यों का मूल्यांकन सही ढंग से नहीं हो सका, और समाज मे मजदूरी का वितरण प्रोत्साहित नहीं हो सका। समाज के विकास मे कीमत और पैसा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, हालांकि, कोई भी प्रेम और दोस्ती जैसे मानवीय भावनाओं की जगह पैसे से भरने की उम्मीद नहीं कर सकता है। इस बात का अनुगमन भी नहीं हो सकता है कि, वह प्रेम और दोस्ती पैसे की जगह ले सकती है। हम सिर्फ इस डर से पैसे से दूर नहीं रह सकते कि पैसा मानवीय सम्बन्धों को बिगाड़ देगा। वास्तव मे, पैसों मे कीमत लगाना ही एकमात्र ऐसा उपलब्ध तरीका है जिससे यह पता लगाया जा सके कि संसाधनों को उनके उपयुक्त इस्तेमाल के लिए कैसे आवंटित किया जाए। अगर हम द्रव्य–संबंधी मूल्य और अपनी उच्चतर भावनात्मक मूल्य, दोनों को बनाए रखें तो भी हम एक ऐसा समाज बना सकेंगे जो कार्यकुशल और मानवीय, दोनों हो।

आत्महित का संतुलन

मान लें, ए और बी को दो सेबों को इन्हें खाने से पहले बांटना है। ए पहले हाथ बढ़ाता है और बड़ा वाला ले लेता है। बी, कड़वाहट के साथ ए से सवाल करता है "तुम इतने स्वार्थी कैसे हो सकते हो?" इसपर ए सवाल करता है "अगर तुम पहले हाथ बढ़ाते तो इनमे से कौन सा वाला चुनते?" बी जवाब देता है "मैं छोटा सेब चुनता"। हँसते हुए, ए जवाब देता है, 'अगर यही बात है, तब तो मैंने तुम्हारी इच्छा के अनुरूप चुनाव किया है।"

इस स्थिति मे, ए, बी का फायदा उठाता है, क्योंकि बी यहाँ 'अन्य लोगों के हित को अपने से ऊपर रखने के सिद्धांत का पालन करता है,' जबकि ए ऐसा नहीं करता। इस तरह से, यदि समाज का एक हिस्सा इस सिद्धांत को अपनाएगा और दूसरा नहीं, तो पहला निश्चित रूप से नुकसान उठाएगा, जबकि दूसरा लाभ उठाएगा। अगर यह लगातार अनियंत्रित रहा तो, यह संघर्ष का कारण बनेगा। स्पष्ट रूप से, अगर सिर्फ कुछ दूसरों के स्वार्थ को खुद से पहले रखेंगे, तो अंत मे यह सिस्टम विवाद और परेशानियाँ ही उत्पन्न करेगा।

अगर दोनों, ए और बी दूसरे पक्ष के लाभ कि तरफ देखते, तो ऊपर वर्णित सेब की समस्या सुलझाना असंभव होता। क्योंकि दोनों ही छोटा सेब खाना चाहते, एक नई समस्या प्रकट हो जाती, जैसा कि हमने लैंड ऑफ जेंटलमेन (भद्रपुरुषों के देश) मे देखा है। ए और बी के लिए जो सत्य है वही हर किसी के लिए सत्य है। अगर पूरा समाज, दूसरों की सेवा के लिए बचत सुनिश्चित करने के सिद्धांत को अपनाकर, एक व्यक्ति के लिए बचाए, तो पूरा समाज इस एक व्यक्ति के सुख के लिए बचाने लगेगा। न्यायशाश्वत रूप से कहें, इस तरह का सिस्टम संभव होगा। अगर ऊपर उल्लिखित वही व्यक्ति, उल्लिखित सिद्धांत को अपनाते हुए दूसरों की सेवा के लिए वृत्तिक बन जाए, तब यह समाज, समाज बना रह सकता है, और वह सिस्टम होगा, सहयोग का सिस्टम। दूसरों की सेवा का सिद्धांत आमतौर पर तभी संभव है जब पूरे समाज के हितों का ध्यान रखने की जिम्मेदारी अन्य लोगों पर प्रदत्त हो। लेकिन सम्पूर्ण भू भाग के नजरिए से, ऐसा करना असंभव है, बशर्ते कि पूरे ग्रह के देखभाल की जिम्मेदारी चंद्रमा को सौंप दी जाए।

असंगति की वजह का कारण है सम्पूर्ण समाज का नजरिया, यहाँ "दूसरे" और "अपने" मे कोई फर्क नहीं है। निःसन्देह, एक खास जॉन या जेन डॉ के लिए "स्व" "स्व" है, जबकि "दूसरे" "दूसरे", और पहला, दूसरे से भ्रमित नहीं होना चाहिए। अगर दूसरो की सेवा का सिद्धांत ए पर लागू होता है, ए सबसे पहले वह अन्य लोगों के लाभ और नुकसान के बारे मे सोचेगा। और अगर समान सिद्धांत व्यक्ति बी द्वारा अपनाया जाता है, तब व्यक्ति ए वह व्यक्ति बन जाता है जिसके हित प्राथमिक हो जाते हैं। समान समाज के सदस्यों के लिए, यह सवाल रहेगा कि उन्हें पहले अन्य के बारे मे सोचना है अथवा अन्य पहले उनके बारे मे सोचेंगे, इससे सीधे तौर पर भ्रम और परस्पर विरोध की स्थिति उत्पन्न होगी। लिहाजा, इस संदर्भ मे, निःस्वार्थता का सिद्धांत तर्कसंगत रूप से असंगत और प्रतिवादी है, अतएव यह मानवीय सम्बन्धों के बीच आने वाली तमाम समस्याओं को सुलझाने की कार्यक्षमता नहीं रख सकेगा। निःसन्देह, यह नहीं कह सकते कि, इन्हें जीवंत करने वाली भावना की कभी सराहना नहीं होनी चाहिए, अथवा दूसरों के बारे मे सोचने का व्यवहार प्रशंसा योग्य नहीं होता, लेकिन यह ऐसा सार्वभौमिक आधार उपलब्ध नहीं करा सकता जिसमे समाज अपने आपसी हितों की रक्षा कर सकें।

जो लोग सांस्कृतिक क्रांति के काल मे थे, वे याद करेंगे कि जब "स्वार्थ के विरुद्ध संघर्ष, नागरिक संशोधनवाद' का नारा (दौसी पिक्सु) का नारा देश मे गूँजा, राजद्रोहियों के सदस्य और कैरियरिस्ट अपने उफान की ओर थे। उस समय, चीन के अधिकतर आम लोग यह सोच रहे थे कि "स्वार्थ के विरुद्ध संघर्ष, नागरिक संशोधनवाद' एक सामाजिक आदर्श बन सकता है, परिणामस्वरूप उन्होने इसकी बाध्यता का जहां तक हो सका पालन किया। उसी दौरान अवसरवादियों ने इस नारे का इस्तेमाल दूसरों से अपना निजी लाभ उठाने के लिए किया। उन्होने इस अभियान का इस्तेमाल दूसरों के घरों मे छापेमारी कर किया, और दूसरों के धन को बटोरकर अपनी जेब मे रखा। उन्होने अन्य लोगों को स्वार्थवादिता छोडने के लिए आह्वान किया और क्रांति के खातिर उन्होने यह स्वीकारा कि वे देशद्रोही, जासूस अथवा क्रांतिकारियों के विरोधी थे और इसी के चलते उन्होने अपने इतिहास मे अयोग्यता को जोड़ा। बिना सोच के, इस तरह के अवसर अन्य

लोगों को ऐसी स्थिति मे ला खड़ा करेंगे जहां उन अन्य लोगों की जिंदगी दांव पर लग जाएगी, यह सब कुछ उनके द्वारा अपने लिए सरकार मे एक पदवी सुनिश्चित करने के लिए होगा। जहां तक हमने यह महसूस किया है कि 'खुद से पहले अन्य की सेवा' के सिद्धांत की व्यावहारिक दिक्कतें हैं, लेकिन सांस्कृतिक क्रांति का इतिहास आगे चलकर जब यह व्यवहार मे आया, तब सामने आने वाले प्रतिवाद को भी प्रमाणित किया।

सांस्कृतिक क्रांति की यादें अब धुंधली पड़ चुकी हैं, मगर हमें यह याद करना चाहिए कि उस समय के सभी नारे समालोचना और अनुसंधान संबंधी थे। हम अब भी विवाद सुलझाने के लिए लोगों को बुलाने के पुराने मत–प्रचार का इस्तेमाल करते हैं, और यहाँ तक कि जब अदालत मे मामलों की सुनवाई होती है तब, उन पुराने हो चुके तरीके हावी होते दिखते हैं।

ऐसे पाठक जो विचारों मे निपुण होंगे, उनके मन मे ऊपर उल्लिखित समस्या के बारे मे अब भी कई सवाल उठ रहे होंगे, कि डॉ लोगों के बीच सेब का बेहतरीन बंटवारा कैसे हो। अगर हम इस बात पर सहमत होते हैं कि 'खुद से पहले दूसरों की सेवा' दो सेबों के बँटवारे का सही नियम नहीं हो सकता है, तो क्या यह मानना होगा कि इसे और बेहतर ढंग से करने का और कोई नियम नहीं है? याद करे, वहाँ एक छोटा सेब है और एक बड़ा, और इसके बँटवारे मे सिर्फ दो लोग ही शामिल हैं। क्या वहीं के महान अविनाशी लोग भी इसका एक उपयुक्त समाधान निकालने मे खुद को अक्षम पाएंगे?

एक विनिमय समाज मे, ऊपर उल्लिखित समस्या सुलझाने योग्य है। दोनों व्यक्ति पहले इस उलझन को सुलझाने के लिए चर्चा कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, ए ने बड़ा सेब चुना, इस सोच के साथ कि जब वे अगली बार मिलेंगे तब बी बड़ा वाला सेब घर ले जाने का अधिकारी होगा। अथवा ए के बड़ा सेब लेने के बदले मे, बी को किसी भी रूप मे हर्जाना प्राप्त हो। एक अदायगी इस समस्या को सुलझा सकती है। एक अर्थव्यवस्था मे पैसों का उपयोग, दूसरे तरीके के तौर पर होगा। शुरुआत एक छोटे अंश के मुआवजे (एक सेंट कह लें) से करके, इसकी मात्रा को धीरे–धीरे तब तक बढ़ाया जा सकता है, जब तक कि दूसरा पक्ष छोटा सेब लेने के लिए तैयार न हो जाए। अगर शुरुआती राशि काफी छोटी है, तो हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि दोनों ही पक्ष मुआवजा देकर बड़ा सेब लेने को प्राथमिकता देंगे। अगर मुआवजे की राशि बढ़ जाएगी तो एक सीमा के बाद वह स्तर आएगा जब दोनों मे से एक पक्ष छोटा सेब और उसके साथ मुआवजा लेने को राजी हो जाएगा। हम ऐसा कह सकते हैं कि अगर दोनों ही पक्ष तार्किक ढंग से समस्या का समाधान ढूँढेंगे तो निश्चित तौर पर इसे सुलझा लेंगे। इसे यही वह तरीका है जिसके माध्यम से हम शांतिपूर्ण ढंग से दोनों पक्षों के हितों से संबन्धित विवाद सुलझा सकते हैं।

चीन के सुधार और खुलेपन के 30 साल बाद भी संपन्नता और गरीबी का सवाल दोबारा उठ रहा है, अमीर प्रतिदिन तरक्की कर रहे हैं, इसके प्रति कटुता है। उस काल मे जब वर्ग संघर्ष पर जोर दिया गया, प्रत्येक जन अभियान की शुरुआत पर, पिछली परेशानियों से वर्तमान समय की खुशियाँ आती हैं। पहला समाज दोषी ठहराया गया, और पहले के शोषण को लोगों के जेहन मे नफरत को बढ़ावा देने के बीज के रूप मे

माना गया। 1966 मे जब सांस्कृतिक क्रांति शुरू हुई (पुरानी वर्ग व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के लिए), कई जगह देखा गया कि भू मालिक वर्ग के लोगों को जिंदा जला दिया गया, जबकि बहुत सारे भू मालिकों ने पहले ही खुद को मार डाला था। कोई नहीं बचा था, न बुजुर्ग न युवा, न ही महिलाएं और बच्चे। लोगों ने कहा, जिस तरह से बिना किसी कारण के प्रेम नहीं होता उसी तरह बिना किसी वजह के नफरत भी नहीं होती है। लेकिन नफरत की यह भावना भू मालिक वर्ग के बच्चों पर कैसे सही साबित होती है? यह भावना विश्वास से आई कि निष्ठुर भू मालिक वर्ग ने उत्पीड़न कर दुनिया मे अपनी यह जगह बनाई है। आज, अमीर और गरीब के बीच अंतर और अधिक स्पष्ट हो गया है। यहाँ ऐसे लोग भी हैं जिन्होने प्रवेश स्तर पर अवैध तरीके से धन कमाया, किसी भी समाज मे अमीर व गरीब के बीच अंतर एक अपरिहार्य प्रतीयमान है। यहाँ तक विकसित देशों मे, जहां अवैध कार्यों पर तकरीबन गंभीर रूप से नियंत्रण है, मे भी अमीर–गरीब के बीच आमतौर पर अंतर दिखाई देता है।

अमीरी के पीछे की अप्रसन्नता का तर्क दोषपूर्ण है। अगर कोई इस बात से अप्रसन्न है कि वह अब तक अमीर नहीं बना है, तो सबसे अच्छी योजना है कि उसे अमीरों से आगे बढ़ने के तरीके अपनाने होंगे, और फिर उसे उस वक्त का इंतजार करना चाहिए जब तक वह धनी न बन जाए, इसके बाद वह अमीरों के अधिकारों के रक्षा की वकालत करेगा। कुछ निश्चित व्यक्तियों के समूह के लिए यह तार्किक बनने का बेहतरीन जरिया है। लेकिन सम्पूर्ण समाज के लिए, ऐसा कोई तरीका नहीं है जिसके माध्यम से पूरी प्रक्रिया का संयोजन किया जा सके और समाज के सभी सदस्यों को समान रूप से धनी बनाया जा सके। कुछ लोग अन्य से पहले अमीर बन जाएंगे अगर हम सबके एक समान अमीर बनने का इंतजार करेंगे, तो कोई भी संपन्नता हासिल नहीं कर सकेगा। अमीर का विरोध बिना औचित्य के है, गरीब लोगों को अमीर बनने का मौका तभी मिल सकता है जब उन्हें ऐसा करने के लिए कानूनी तौर पर समान अधिकार दिए जाएँ, संपत्ति बढ़ाने के अधिकार सुनिश्चित हों, अगर किसी की मेहनत का फल बर्बाद न होगा, और जब संपत्ति के अधिकारों का सम्मान होगा। एक समाज, जिसके अधिक से अधिक सदस्य यह कहें कि अमीर होना आनंददायक है, ही वास्तव मे वह स्थिति है, जिसे बनाने की जरूरत है।

चीनी स्कॉलर ली मिंग ने एक जगह लिखा है, लोगों को दो समूहों "अमीर" और "गरीब" मे बांटना दोनों के बीच फर्क बताने का गलत तरीका है। इसके बजाय यह, अधिकारों वाला समूह और बिना अधिकारों वाला समूह होना चाहिए। आधुनिक समाज के लिए उनका जो मतलब था वह है, अमीर और गरीब का जो सवाल है, वह असल मे अधिकारों का सवाल है। अमीर इस स्थिति मे हैं, क्योंकि उनके पास अधिकार हैं, जबकि गरीब के पास नहीं। अधिकारों से उनका जो मतलब था, वह मानवाधिकार है, न कि फायदा। यह वह मामला नहीं है जिसमे सभी लोगों को बराबर फायदा उठाने का अवसर मिले। सिर्फ एक छोटा पिछड़ा वर्ग लाभ प्राप्त कर सकता है। अगर हम अमीर और गरीब के सवाल को सुलझाना चाहते हैं, तो सबसे पहले हमे समान मानवाधिकार की व्यवस्था करनी होगी। ली मिंग का आंकलन अथाह और सम्पूर्ण है।

बाजार आधारित समाज मे समानता और असमानता का नैतिक तर्क

लियोनिड वी निकोनोव

इस निबंध मे, तर्कशास्त्री लियोनिड निकोनो ने 'समानता' के विचार को विषयगत किया है; कठिन शोध के बदले में, और यह पाया है कि अधिकतर पूंजीवादी–विरोधी समालोचना जो असमानता पर आकार रुकती है, चाहे शुरुआती वृत्तिदान, मूल्य अथवा परिणाम असंगत है।

लियोनिड वी. निकोनो अल्ताई स्टेट यूनिवर्सिटी बरनौल, जो कि रशियन फेडरेशन में तर्कशास्त्र के अधिवक्ता हैं, जहां वह सामाजिक तर्कशास्त्र, तात्विकी, ज्ञान का सिद्धांत, और धर्म का तर्कशास्त्र संबंधी विषय पढ़ाते हैं। वर्तमान समय मे वह एक पुस्तक पर काम कर रहे हैं जिसका नाम है "उदारवाद का नैतिक मापन", वह कई रशियन पब्लिकेशनों मे प्रकाशित हो चुके हैं। 2010 मे उन्होने सेंटर फॉर द फिलोसोफी ऑफ फ्रीडम की स्थापना की और उसके निदेशक बने, जो कि रशिया और कजाकिस्तान मे सेमिनार, वाद–विवाद टूर्नामेंट आदि आयोजित करता है। वह इस तरह के कार्यों मे तब शामिल हुए जब पहली बार 2007 मे निबंध प्रतियोगिता (रशियन मे) "वैश्विक पूंजीवाद और मानवीय स्वतंत्रता" विषय पर पहला पुरस्कार जीते। इसी तरह की एक प्रतियोगिता 2011 मे स्टूडेंट फॉर लिबर्टी द्वारा प्रायोजित की गई, फ्रीडम इन अलुस्ता, यूक्रेन अटेण्ड किया, और 2011 मे उन्हें मोंत प्लेरिन सोसाइटी का हिस्सा बनने के लिए आमंत्रित किया गया, सबसे युवा सदस्य बनने के लिए, जो कि 1947 मे 39 स्कॉलरों द्वारा सांस्कृतिक उदार सोच को पुनर्जीवित करने के लिए स्थापित किया गया था।

– –

बाजार निश्चित तौर पर समान परिणाम नहीं बनाते हैं, न ही इन्हें समान वृत्तिदान की जरूरत होती है। यद्यपि, यह बाजार के होने का कोई खेदजनक मूल्य नहीं है। असमानता बाजार विनिमय का महज एक सामान्य परिणाम नहीं है। यह विनिमय की एक पूर्व स्थिति है, जिसके बिना विनिमय अर्थहीन हो सकता है। बाजार विनिमय की उम्मीद, और ऐसे समाज मे जहां संपत्ति बाजार के माध्यम से आवंटित है, परिणाम मे समानता की उम्मीद करना हास्यास्पद है। समान बुनियादी अधिकार, जिसमे विनिमय की समान स्वतन्त्रता शामिल हो, मुक्त बाजार के लिए आवश्यक है, लेकिन मुक्त बाजार से

समान परिणामों की उम्मीद नहीं की जानी चाहिए, न ही इनके लिए कानूनी अधिकारों के अलावा स्थितियों की समानता पर ही निर्भर होना चाहिए।

समान विनिमय का आदर्श शुरुआती वृत्तिदान और परिणामों की समानता से संबन्धित हो सकता है। अगर पहले वाली समझ मध्यमान हो, सिर्फ वही पक्ष जो सभी संबन्धित तत्वों के मामले मे समान हों, समान विनिमय मे शामिल हो सकती हैं। कोई भी अंतर विनिमय की असमानता की वजह बनेगा, जिसे अनुपयुक्त मानकर कर्मचारी और रोजगार देने वाले के बीच अनुबंध को खारिज कर दिया जा सकता है। दूसरे अर्थ मे, इसका मतलब है कि समान मूल्य का विनिमय हो सकता है, अथवा विनिमय के परिणाम मूल्य मे समानता है। उदाहरण के तौर पर, एक एक समान गुणवत्ता वाली वस्तु, समान मात्रा मे एक पक्ष से दूसरे पक्ष तक पहुंचानी हो, तब विनिमय समानता की स्थिति को संतुष्ट करेगा। सोचो, एक अतियथार्थवादी दृश्य जिसमे दो मनभाव जन्तु, एक दूसरे को पूरी तरह पसंद करते हैं (दूसरे शब्दों मे, निजी अंतर विहीन प्रासंगिक रूप से असमानता की अंगभूति), आपस मे काफी जानी–पहचानी चीजों का आदान–प्रदान करते हैं। किसी भी तरह के सौंदर्यबोधक घृणा को किनारे रखकर हम इसे किसी अप्राकृतिक तस्वीर जैसा महसूस कर सकते हैं, आम शब्दों मे कह सकते हैं कि समान विनियम का विचार एक अगाध गतिरोध पर खत्म होता है। जैसे कि एक विनिमय कुछ नहीं बदलता है। यह किसी भी पक्ष की स्थिति मे सुधार नहीं लाता, ऐसे मे किसी भी पक्ष के लिए ऐसा करने का कोई अर्थ नहीं रहता (कार्ल मार्क्स ने जोर दिया है बाजार मे विनिमय समान मूल्य के विनिमय पर आधारित होता है, जो कि एक अतर्कसंगत और असंगत आर्थिक सिद्धांत उत्पन्न करता है)। बाजार विनियम को समानता का सिद्धांत विनियम को इसके मूलभूत कारणों, जिसका उद्देश्य है दोनों पक्षों का बेहतर विनिमय, से वंचित कर देता है। विनिमय का अर्थशास्त्र विनिमय कर रहे पक्षों की वस्तुओं अथवा सेवा के असमान मूल्यांकन पर आकर स्थिर होता है।

नैतिक तौर पर लें तो, यद्यपि, समानता का विचार फिर भी कुछ लोगों के लिए आकर्षक हो सकता है। तमाम नैतिक फैसलों की एक आम विलक्षणता यह है कि ये पूरी तरह एक नीतिशास्त्र के तौर तरीके पर आधारित हैं, जो कि सिर्फ कर्तव्य के तर्क पर आधारित हैं। इनकी चिंता सिफर इस बात के लिए होती है कि क्या होना चाहिए, अर्थशास्त्र के तर्क से विरत, अथवा जो मुश्किल से मौजूद है, इस वजह से कि क्या होना चाहिए (जिसका दावा किया गया हो)। इमेन्यूयल कॉंट के मुताबिक, उदाहरण के तौर पर, एक कर्तव्य इसके बोध की मांग करता है, परिणाम, परिस्थितियों और संभावनाओं की परवाह किए बिना वह करना; जो कि होना चाहिए। जिसके लिए आपको निश्चित रूप से यह कहना है कि आप ऐसा कर सकते हैं। अतएव, अगर इस तरह की समानता विनिमय मे आर्थिक रूप से हास्यास्पद होने के बावजूद एक नैतिक आदर्श का समर्थन करता है।

नैतिक मुद्दे के रूप मे समानता एक काफी जटिल मसला है। हम उन स्थितियों के बीच मे फर्क कर सकते हैं जिसमे यह गंभीर रूप से प्रभावित होता है, अथवा नहीं होता। इस हिसाब से पहला समतावादी के तौर पर जाना जाता है और दूसरा असमतावादी विचारधारा वाला। असमतावादी न तो आवश्यक रूप से समानता की जरूरत से इंकार करते हैं और न ही वे मजबूती से असमानता की जरूरत का ही समर्थन करते हैं।

वे समतावादियों द्वारा लक्ष्य के रूप मे समानता को केन्द्रबिन्दु मानने और बाजार संपन्नता मे बराबरी के विचार से असहमत होते हैं। सांस्कृतिक उदार (अथवा उदारवादी) असमतावादी कुछ निश्चित प्रकार की समानता को जरूर मानते हैं, जैसे कि, बुनियादी अधिकारों की समानता, जिसे वे परिणामों की समानता के लिए सबसे आवश्यक तत्व मानते हैं, ऐसे मे कुछ आधारों पर उन्हें समतावादी माना जा सकता है। (कानून के अनुभवों की नीव स्तर पर अधिकारों, संपत्ति के अधिकारों की समानता, और उदारता जिसे कि आधुनिक समाज के अधिकतर लोग बेकार समझते हैं)। असमतावादी उदरवादी समानता के अपने विचारों को सबसे ज्यादा उपयुक्त, आवश्यक और टिकाऊ मानते हैं, लेकिन संपन्नता के 'वितरण'की समानता के दावे को ये मानते हैं कि ऐसी समतावादी समानता बिरले ही औपचारिक है, यह शब्दों मे समान है, लेकिन व्यवहार मे नहीं। (इसमे उनके पास एक नजरिया है, वह यह कि लोग क्या सोचते हैं, क्या करते हैं इसमे कानूनी अधिकारों की समानता की भूमिका महत्वपूर्ण है, बजाय दुनिया की स्थितियों और संपत्ति के वितरण का विवरण। यद्यपि, समानता का इस तरह का नजरिया शायद ही औपचारिक है, बजाय इसके कि लोग कानून के महत्व और प्रक्रिया, व्यवहार के स्तरमान पर कितने निर्भर होते हैं)।

तर्कशास्त्र संबंधी सवालों पर तब तक चर्चा करना काफी कठिन होता है, जब तक कि इनका सही औपचारिक गठन न हो जाए। पूरब और पश्चिम दोनों के ही, तर्कशास्त्री अपने नैतिक शोध के आधार पर यह मानते हैं कि हजारों साल पहले कर्तव्य और कार्यनिष्पादन संबंधी तर्क के बारे मे फैसले का ज्यादा व्यवस्थित विश्लेषण मौजूद था। इस तरह के कार्य कि शुरुआत डेविड ह्यूम की अगुवाई मे हुई, इनके बाद इमेन्युअल काँट और बाद मे सकारात्मक्तावादी तर्कशास्त्री जैसे कि जॉर्ज मूर, अलफर्द अइयर, रिचर्ड हेर और अन्य ने इसपर काम किया। इस तरह के तर्कों की जांच अब भी चल रही है। यद्यपि समतावादी और गैर समतावादी विचारकों के बीच विवाद महज समानता असमानता और नैतिकता के बीच संबंध के तर्कों को मानने पर ही नहीं, बल्कि इस बात पर भी है कि बाजार विनियम द्वारा उत्पन्न आसमान विनियम के बलपूर्वक पुनर्वितरण को नैतिक रूप से आवश्यक ठहराया जाए अथवा नहीं। (आधिकारिक मालिकों से स्रोत को चुराने का एक अलग मसला भी है, जिसे राज्यों के सत्ताधारियों, फ्रीलैंस अपराधियों द्वारा उन लोगों को लौटा देना चाहिए, जिनसे इसे लूटा गया है)

आइये एक साधारण सवाल के माध्यम से नैतिकता के सवाल को लेते हैं। समानता क्यों, या तो शुरुआती वृत्तिदान अथवा परिणाम पर, तार्किक रूप से असमानता से सर्वोच्च है (अथवा विपरीत अर्थों मे)? इस सवाल के एक ईमानदार निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए समतावादी और गैर समतावादी, दोनों को मानने वालों से इस तरह का सीधा सवाल पूछा जाना चाहिए।

संभावित जवाबों की संख्या सीमित है। संभव है एक कुछ निश्चित सांख्यिकीय अनुपात बनाने की कोशिश कर सकता है (समानता या असमानता का), किसी अन्य से बेहतर हो सकता है। उदाहरण के तौर पर, • मे ल का अनुपात नैतिक तौर पर सर्वोच्च हो सकता है अगर प्रभावित करने वाली वस्तुओं का मूल्य बराबर है और नैतिक रूप से यदि तुच्छ नहीं है, दूसरे शब्दों मे, अगर 1:1 1:2 से सर्वोच्च है। जोकि स्पष्ट स्थिति

मे आशा के विपरीत महसूस हो सकता है, यद्यपि नैतिक विशेषता का सवाल आसानी से नहीं सुलझता। मूल्य का माप गणितीय मापन से नहीं निकाला जा सकता है, जो कि उनके द्वारा नैतिक रूप से तटस्थ हो सकता है। एक गणितीय अनुपात को दूसरे से सर्वोच्च माना एकपक्षीय होगा, कुछ हद तक जादू टोना मे विश्वास करने वालों कि तरह होगा जो कि पुरुष, महिला, दयालु, सिद्ध, अनुपयुक्त आदि का आंकलन संख्या के आधार पर करते हैं। समानता अथवा शुरुआती वृत्तदान या विनियम के परिणाम की तरफ ध्यान ले जाने के बजाय, बेहतर यह होगा कि किसी के व्यक्तिगत समानता असमानता के नैतिक स्थिति पर ध्यान दिया जाए, व्यक्तियों के बीच के संबंध के आंकलन के आधार पर (जिसमे विनियम भी शामिल हो)। फिर देखा जाएगा कि कोई भी व्यक्ति नैतिक रूप से सर्वोच्च या तुच्छ नहीं है। इस तरह की नीव के आधार पर कोई समान शुरुआती वृत्तदान अथवा परिणाम की अनुकूलता अथवा प्रतिकूलता का अंदाजा लगा सकता है। दोनों ही विचार बलपूर्वक पुनर्वितरण की तरफ अभिमुख हो सकते हैं या तो असमानता हटाने के लिए अथवा इसे बढ़ाने के लिए, और इन दोनों ही मामलो मे जो महत्वपूर्ण मुद्दा होगा वह है दोनों पक्षों की नैतिक स्थिति और वह वास्तविक स्थिति जिसमे लोग समझौते कर रहे हैं।

इसलिए सूत्रबद्ध, महत्वपूर्ण सवाल मानवीय नैतिक स्थितियों के बीच संबंध का होगा, जिन वस्तुओं के खरीद फरोख्त का काम कर रहे हैं उनकी मात्रा और गुणवत्ता आदि से संबन्धित। तो हमारे सामने यह सवाल भी आ सकता है कि क्यों दो समान नैतिक विशेषता वाले व्यक्ति को समान मात्रा, गुणवत्ता और मूल्य की कॉफी सुबह क्यों पीनी चाहिए? और क्या एक दानशील व्यक्ति और उसका कंजूस पड़ोसी क्या समान नैतिक स्तर वाले होंगे (अथवा नहीं होंगे?) क्या समान रूप से विकास कर रहे पौधे समान मात्र मे उपज देंगे, अथवा नहीं देंगे? वृत्तदान की समानता, या उपभोग अथवा सामर्थ्य के लिए नैतिक समानता क्या समान रूप से महत्वपूर्ण है। दो चेस खिलाड़ियों के संबंध को ले लें, दोनों नैतिक रूप से एक समान महत्वपूर्ण होते हैं। क्या ऐसे मे यह जरूरी है कि उनकी खेल मे कुशलता भी समान हो, अथवा इनके बीच होने वाला हर गेम ड्रॉ होना चाहिए? अथवा जरूरी यह है कि ये दोनों समान नियमों के आधार पर खेलें, और अंत मे यह परिणाम यह तय करें कि गेम ड्रॉ होगा अथवा कोई एक जीतेगा। समान नैतिक स्थिति और शुरुआती वृत्तदान एवं परिणाम के बीच कोई सीधा संबंध नहीं है।

अगर हम व्यवहार और नियम पर ध्यान देंगे, वृत्तदान अथवा परिणाम के बजाय, तो हम देखेंगे कि स्थितियाँ मानवीय व्यवहार, उनकी पसंद और उनकी नीयत द्वारा निर्धारित होंगी। एक व्यक्ति कि जेब मे कितने पैसे हैं अथवा वह अपने पड़ोसी की तुलना मे कितना धनवान है, ये बातें नैतिक रूप से जीवन मे इतनी महत्वपूर्ण नहीं होती हैं। मायने यह बात रखती है कि इसे हासिल कैसे किया गया। सार्वभौमिक नैतिक स्तर के मामले मे एक बड़े व्यापारी और एक टैक्सी चालक दोनों को न्याय और अन्य के दृष्टिकोण से समान रूप से जज किया जा सकता है, यह देखते हुए कि वे कानून के नियमों और नैतिक मूल्यों का कितना पालन करते हैं। लोगों का सम्मान या अपमान इस बात से निर्धारित नहीं होता कि उनके पास कितना धन है, बल्कि इस बात से होता है कि उनका कर्म कैसा है। अलग–अलग पद अच्छे और बुरे व्यवहार के लिए अलग अवसर मुहैया कराते हैं, नैतिकता, अनैतिकता की कसौटी पर, न्याय अन्य के मामले मे,

लेकिन ये औसत मानवीय व्यवहार को नियंत्रित करते हैं, वृत्तिदान और परिणाम को नहीं। नैतिक समानता का मतलब है, कि एक अपराध अपराध है, इस बात की परवाह किए बिना कि उसे एक धनाढ्य ने किया है अथवा टैक्सी ड्राइवर ने। ईमानदार व्यापार का नतीजा ईमानदार ही होता है, बिना इस बात की परवाह किए कि यह दो टैक्सी चालकों के बीच हो रहा है अथवा दो बड़े धनियों के बीच।

चलिये संपत्ति और समानता के बीच संबंध पर वापस लौटते हैं। सम्पन्नता हासिल करना व्यवहार अथवा उत्पीड़न का नतीजा हो सकता है। मुक्त बाजार विनियम के परिणामस्वरूप ज्यादा समानता या अधिक असमानता आ सकती है, और राज्य द्वारा पुनर्वितरण के लिए हस्तक्षेप भी समानता या असमानता को बढ़ा सकता है। नीयत के प्रकार की तरह कुछ भी हमेशा समान या आसमान नहीं रह सकता है। एक उद्यमी किसी अन्य व्यक्ति कि तुलना मे अधिक धन कमा सकता है, बेशक इसका उस अन्य व्यक्ति को भी लाभ हो रहा हो। पहले के सिस्टम वाले निष्ठुर लोगों के अत्याचार को खत्म कर और व्यापार का दायरा बढ़ाकर विनियम भी मुक्त बाजार मे समानता बढ़ा सकते हैं। एक लुटेरा किसी का सामान चुरा सकता है और पीड़ित से ज्यादा धन हासिल कर सकता है, जिसकी वजह से ज्यादा समानता आ सकती है। समान रूप से, संगठित शक्ति वाले संस्थान जैसे कि, राज्य के अवपीड़क हस्तक्षेप से, जिसमे बाजार से संबन्धित लोगों के पास कोई विकल्प नहीं बचता है, द्वारा भी संपत्ति की असमानता बढ़ सकती है(संरक्षण वाद, सब्सिडी आदि के माध्यम से)। और कभी कभी हिंसा और ताकत के इस्तेमाल से, ऐसा आम तौर पर वामपंथी नियमों वाले देशों मे होता है। (आधिकारिक तौर पर समानता के लिए तत्पर होना असल मे समानता तैयार करने के समान नहीं है, जैसा कि दशकों के कडवे अनुभव दिखते हैं)।

एक विधिक और आर्थिक व्यवस्था आय के ज्यादा अथवा कम समानता का औसत उत्पन्न कर सकती है, उदाहरण के तौर पर, यह एक अनुभविक मामला है न कि सैद्धांतिक। द इकोनोमिक फ्रीडम ऑफ द वर्ल्ड रिपोर्ट (www.freedomworld.com) आर्थिक स्वतन्त्रता की डिग्री का मापन करती है और फिर एक आर्थिक संपन्नता के सूचक के आधार पर इसकी तुलना करती है (जैसे कि दीर्घायु, शिक्षा, अपराध, पर कैपिटा इन्कम आदि)। इसके डाटा यह दिखाते हैं कि ऐसे देशों के नागरिक जहां अधिक आर्थिक स्वतन्त्रता है, ज्यादा सम्पन्न हैं और ऐसे देशों के कम जहां आर्थिक स्वतन्त्रता कम है (खासतौर से, सबसे गरीब आबादी द्वारा देश की आय मे योगदान आबादी के 10% हिस्से का)। यह नियमों मे अंतर का लक्षण नहीं है, बल्कि उनके द्वारा कमाई गई आय का है। दुनिया के चतुर्थ पायदान वाले देशों को लेते हैं, (प्रत्येक दुनिया के देशों का 25%) यहाँ देश की आय का औसत हिस्सा 10% गरीब आबादी को जा रहा है अंतिम–मुक्त चतुर्थक देश (जिनमे जिम्बाब्वे, म्यांमार और सीरिया जैसे देश शामिल हैं) 2008 मे, (अंतिम वर्ष जिसका डाटा उपलब्ध है) 2.47% था। अगले मे (तीसरे सबसे–मुक्त) चतुर्थक 2.19%, अगले मे (दूसरे सबसे मुक्त) चतुर्थक 2.27%, और सबसे ज्यादा मुक्त चतुर्थक देशों मे, 2.58%। अंतर बेहद कम नजर आता है। अंतिम–मुक्त देशों मे सबसे गरीब 10% आबादी का हिस्सा होने का मतलब है औसत वार्षिक आय 910 यूएसडी प्रति वर्ष, जबकि सबसे–मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था वाली जगह पर सबसे गरीब 10% आबादी का हिस्सा होने का मतलब है औसत वार्षिक आय 8,474 यूएसडी। उनके लिए जो गरीब

हैं, ऐसा महसूस होता है कि सीरिया का गरीब होने बजाय स्विट्जरलैंड का गरीब होना काफी बेहतर है।

चाहे मेरा और आपका शुरुआती वृत्तदान मुक्त विनियम से पहले समान रहा हो अथवा मुक्त विनियम के बाद समान न हो, यह अपने आप मे एक नैतिक समस्या है। दूसरी तरफ, नैतिक रूप से समान व्यक्तियों के साथ अलग तरीके का बर्ताव करना अथवा उनपर समान नियम लागू करना, यह सब समान परिणामों के बनने को प्रभावित करता है (ऐसा महसूस होता है कि, आमतौर पर सफल कंपनियों मे इस तरह के परिणामों को आसानी से झुठलाया नहीं जा सकता है), यह निश्चित रूप से एक नैतिक समस्या है। यह नैतिक समानता का उल्लंघन है जो काफी मायने रखता है।

असमानता का दुनिया का सबसे बड़ा स्कैंडल आर्थिक रूप से स्वतंत्र समाज मे अमीर गरीब के बीच संपन्नता का फर्क नहीं है बल्कि आर्थिक रूप से स्वतंत्र समाजों के अमीरों और आर्थिक रूप से बिना स्वतंत्र समाज के अमीरों के बीच संपन्नता का फर्क है। अमीरी और गरीबी के बीच अंतर की जो समस्या है उसे निश्चित तौर पर नियमों मे कुछ बदलाव कर दूर किया जा सकता है। जैसे कि आर्थिक नियमों मे बदलाव कर। आर्थिक रूप से परतंत्र नागरिकों को आर्थिक स्वतन्त्रता देकर उनकी संपन्नता को तेजी से बढ़ाया जा सकता है और इससे अमीरी गरीबी के बीच की खाई कम हो जाएगी। कुल मिलाकर, न्याय संगत तरीके से इसकी जरूरत महसूस कर सकारात्मक बदलाव लाने की जरूरत है, इसके लिए लोगों के साथ अलग–अलग तरह का बर्ताव करना बंद करना होगा, और क्रूरता, कठोरता, समाजवाद और भ्रष्टाचार मिटाने की जरूरत है। न्याय का समान अधिकार दिया जाए और उत्पादन व विनियम के अधिकारों को समान सम्मान मिले। यही न्याय का नैतिक आधार है।

एडम स्मिथ और लालच का मिथक

टॉम जी. पॉमर

इस लेख मे, लेखक भोले एडम स्मिथ की उस मान्यता को कोरा साबित किया है जिसमे यह माना जाता है कि मात्र "स्व लाभ" पर आश्रित होकर समृद्धि आएगी। जो लोग इस उद्देश्य से स्मिथ का हवाला देते हैं, ऐसा लगता है उन्होने उनके कार्यों मे से ाायद ही कुछ उद्धरण को पढ़ा है, और इस बात से अनभिज्ञ है कि उन्होने संस्थानों की भूमिका और स्वार्थी व्यवहार के हानिकारक असर पर कितना जोर दिया है, जब राज्य के संस्थानों के जरिये प्रतिरोध किया जाता है। विधि शासन, संपत्ति करार और आदान–प्रदान स्वार्थ को परस्पर लाभ मे बदलते हैं, जबकि अराजकता और संपत्ति के लिए निरादर स्वार्थ को सर्वथा एक अलग और पूर्णतया हानिकारक केंद्र बनाते हैं।

– — – – – – – – –

प्रायः यह कहते सुना गया होगा कि एडम स्मिथ की यह मान्यता थी कि अगर लोगों ने सिर्फ स्वार्थी ढंग से कम किया होता तो, दुनिया मे सब कुछ अच्छा होता, "लालच दुनिया को एक गोल घेरे मे तब्दील कर देती"। स्मिथ, निस्संदेह, यह नहीं मानते थे कि सिर्फ स्वार्थी अभिप्रेरणा दुनिया को बेहतर बना सकती है, न ही वह स्वार्थी व्यवहार को प्रोत्साहन या बढ़ावा ही देते थे। नैतिक भावनाओं के सिद्धांत मे "निष्पक्ष अभिप्रेक्षक" की भूमिका पर की गई उनकी वृहद चर्चा गलत अर्थ निरूपण को दरकिनार करती है।

स्मिथ स्वार्थीपन के प्रवक्ता नहीं थे, मगर वह इतने भोले भी नहीं थे कि यह सोचे कि दूसरों के कल्याण हेतु निःस्वार्थ समर्पण (अथवा ऐसा समर्पण मान लेना) ही दुनिया को बेहतर बना देगा। जैसा कि स्टीवेन होल्म्स ने अपने शोधक लेख "स्वार्थ का रहस्यमय इतिहास" मे लिखा है, स्मिथ यह भलीभाँति जानते थे कि कई "निःस्वार्थी" मनोभावों जैसे कि, ईर्ष्या, कपट, प्रतिशोध और ऐसे अन्य के विध्वंशकरी प्रभाव भी होते हैं। स्पैनिश न्यायकर्ताओं के निःस्वार्थी हिमायतियों ने इस उम्मीद मे यंत्रणा के अंतिम समय मे ऐसा ही किया था कि हो सकता है धर्मविरोध का पछतावा हो और उन्हें ईश्वर की कृपा हासिल हो जाए। इसे सलविफी सी पथसमर्थन के सिद्धांत से जाना गया। हमबर्ट डी रोमन्स, जिज्ञासुओं को अपने निर्देश मे, जोर डाला कि वे विधर्मियों को सुनाई गई सजा को धार्मिक सभा के समक्ष प्रमाणित करें, यह कहते हुए कि, हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, तुम्हें भी हमारे साथ उसकी प्रार्थना करनी चाहिए, ताकि उनके प्रताप से ऐसा संभव हो सके कि जो सजा हमने प्रस्तावित की है उसे प्राप्त करने वाला इसे सहनशीलता के

साथ झेल सके, (न्याय की मांग के तहत, तथापि पश्चाताप के साथ), ऐसा करना उनकी मुक्ति मे सहायक हो सकता है। इसी के लिए हम सजा अधिरोपित करते हैं।

स्मिथ के विचार से, दूसरों के कल्याण हेतु स्वार्थहीनता के तहत ऐसा करना निःसन्देह उचित नहीं है कि, खुद को धनवान बनाने के लिए दुकानदार भूखे–प्यासे ग्राहकों को मदिरा और नमकीन मछली बेचने की कामना करें। स्मिथ शायद ही स्वार्थी व्यवहार के आम समर्थक रहे हैं, वह भी जहां कार्यात्मक संदर्भ मे किसी आम वस्तु के प्रोत्साहन की बात रही हो "जैसे कि किन्हीं अंजान हाथों द्वारा", और खासतौर से संस्थानात्मक समायोजन पर।

कई बार आत्मकेंद्रित आकांक्षाएँ अन्य लोगों द्वारा पसंद की जाती हैं, ऐसे मे कोई निश्चय ही इसे नैतिक दृष्टि से स्वीकार कर सकता है, इस सोच के आधार पर कि दूसरे हमे किन नजरों से देखते हैं। छोटे स्तर के अंतर्वैक्तिक प्रकार के समायोजन का आमतौर पर नैतिक भावनाओं के सिद्धांत मे विवरण किया गया है, ऐसे प्रोत्साहन "खुद को उपयोगी वस्तु बनाने की अभिलाषा" को पूरा करने मे सहायक हो सकते हैं, मगर इतना प्यारा और प्रशंसनीय बनने, जितना कि वो हमारे लिए होते हैं जिन्हें हम सबसे अधिक स्नेह करते हैं, के लिए हमे अपने खुद के चरित्र और व्यवहार के लिए निष्पक्ष अधिप्रेक्षक बनने की जरूरत होती है। यहाँ तक कि, सही संस्थानात्मक समायोजन के तहत, स्पष्ट रूप से अत्यधिक स्वार्थ भी कई बार दूसरों के लिए फायदेमंद हो सकता है, जैसा कि, स्मिथ ने एक गरीब आदमी के बेटे की कहानी के माध्यम से बताया है, जिसकी महत्वाकांक्षा ने उसे धनवान बनने के लिए अथक परिश्रम करने के लिए प्रेरित किया, जीवन भर कठिन परिश्रम करने के बाद वह खुद को वह उन साधारण भिखारियों से ज्यादा प्रसन्न नहीं महसूस किया जो सड़क किनारे धूप मे जलते हैं। मगर गरीब के बेटे की निजी स्वार्थ को पूरा करने की अत्यधिक महत्वाकांक्षा ने अन्य लोगों को लाभ पहुंचाया, क्योंकि उसने अत्यधिक मात्रा मे धन कमाया जिससे अन्य लोगों के लिए अपना अस्तित्व बनाए रखना संभव हो सका, मजदूरों को काम काम देकर समाज का और पृथ्वी की उर्वरा को दोगुना कर उसने पूरे मानव समाज को लाभ पहुंचाया।

राजनीतिक अर्थव्यवस्था के संदर्भ मे विभिन्न वाक्यों में राष्ट्र की संपत्ति की प्रकृति और कारणों के बारे मे वृहद विवरण दिया गया है, खासतौर से जो राज्य के संस्थान के साथ अंतःक्रिया मे शामिल होते हैं, स्वार्थ के अनुसरण के सकारात्मक प्रभाव की संभावना कम होती है। विक्रेताओं का स्वार्थ, उन्हें राज्य को उत्पादक संघ बनाने, संरक्षणवाद और यहाँ तक कि युद्ध के लिए अपना मत तैयार करने के लिए भी प्रेरित कर सकता है। "इस उम्मीद से, वास्तव मे, ग्रेट ब्रिटेन मे व्यापार पूरी तरह से पुनः स्थापित हो सके, यह उतना ही निरर्थक है जितना कि इसमे ओसियाना अथवा यूटोपिया के कभी भी स्थापित हो जाने की उम्मीद। न सिर्फ जनता के लिए पक्षपातपूर्ण, बल्कि जो ज्यादा दुष्कर होगा वह है बहुत सारे व्यक्तियों का निजी स्वार्थ, जो जबर्दस्त ढंग से इसका विरोध करेगा"। आधिपत्य और युद्ध के मामले मे विक्रेताओं का विक्रय के एकाधिपत्य से होने वाला छोटा सा फायदा आम जनता पर खर्च का भयंकर बोझ डालेगा।

कानून की प्रणाली मे, जिसे कि हमारी अमेरिकन और पश्चिमी भारतीय उपनिवेशों के प्रबंधन के लिए स्थापित किया गया, मे घरेलू उपभोक्ताओं के हितों का बलिदान दिया गया क्योंकि उत्पादक हमारे अन्य सभी व्यावसायिक विनिमयों के मुकाबले अत्यधिक खर्चीले थे। एक बड़ा साम्राज्य स्थापित किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य था ऐसे उपभोक्ताओं के राष्ट्र का विकास जो हमारे विभिन्न उत्पादकों की दुकानों से वे सारे समान जिन्हे ये उनतक सप्लाई कर सकें, खरीदकर उपकृत महसूस करे। थोड़ा सा मूल्य बढ़ाकर, जिससे यह आधिपत्य हमारे उत्पादकों को वहाँ कर सके, इस साम्राज्य के प्रबंधन और प्रतिरक्षा के खर्च का सारा भार घरेलू उपभोक्ताओं पर डाल दिया गया। सिर्फ और सिर्फ इसी उद्देश्य से, पिछले दो युद्धों मे, दो सौ मिलियन से भी ज्यादा खर्च हुए, और 170 मिलियन से भी अधिक के नए कर्ज का भार ऊपरी सारे खर्चों के अतिरिक्त डाल दिया गया, जिसका एक ही कारण था पहले के युद्धों पर हुआ खर्च। अकेले इस कर्ज का ब्याज ही कुल असाधारण लाभ से अधिक है, जिसे उपनिवेशिक व्यापार का आधिपत्य स्थापित करते समय बताया गया था, व्यापार अथवा सामानों के मूल्य, और उपनिवेशों को निर्यात किए जाने वाले औसत वार्षिक मात्रा के मूल्य पर।

गॉर्डन जेको के शब्दों मे, ऑलिव स्टोन की फिल्म वाल स्ट्रीट का काल्पनिक चरित्र "लालच अच्छी है" निःसन्देह "कभी हाँ हो सकती है तो कभी ना" (यह दृढ़ता से मानते हुए कि स्वार्थी व्यवहार "लालच" है)। इसमे अंतर संस्थानात्मक समायोजन का है।

उस आम धारणा का क्या जिसमे यह माना जाता है बाजार स्वार्थी व्यवहार को बढ़ावा देते हैं, आदान–प्रदान से उपजा मानसिक व्यवहार स्वार्थीपन को बढ़ावा देता है? मैं जनता हूँ कि यह सोचने के लिए कोई भी अच्छा कारण नहीं है कि बाजार स्वार्थीपन अथवा लालच को बढ़ावा देते हैं। इस संदर्भ मे कि बाजार की अंतःक्रिया लालच की मात्रा बढ़ाती है अथवा लोगों की स्वार्थी बनने की रुचि को बढ़ावा देती है, जैसा कि ऐसे राज्यों द्वारा नियंत्रित समाजों मे महसूस किया गया है जहां बाजारों को दबाया अथवा हतोत्साहित अथवा हस्तक्षेप या अस्त व्यस्त किया जाता है।

असल मे, बाजार शांति से अपना उद्देश्य पूरा करने हेतु ज्यादा लोकपरोपकार और अधिक स्वार्थ पूर्ति को भी संभव बनाते हैं। वे लोग जो अपना जीवन दूसरों की सहायता मे लगाना चाहते हैं, वे अपने उद्देश्यों को बाजार के इस्तेमाल से ही आगे बढ़ते हैं। यह उनकी तुलना मे कम नहीं होता जिनका लक्ष्य अपना धन दौलत बढ़ाना होता है। कई बार दूसरों की मदद करने की अपनी क्षमता बढ़ाने के लिए भी धन संचय किया जाता है। जॉर्ज सोरस और बिल गेट्स इसके पूर्ववर्ती उदाहरण हैं। इन लोगों ने बहुत बड़ी मात्रा मे धन कमाया, अपने धर्मार्थ कार्यों के माध्यम से कुछ हिस्सा ही सही लेकिन दूसरों की मदद करने की क्षमता बढ़ाई है। इस तरह से लाभ कमाने के उद्देश्य ने उन्हें उदार बनाया।

अगर कोई परोपकारी व्यक्ति अथवा संत अपनी उपलब्ध धनराशि को अधिक से अधिक लोगों के लिए भोजन, कपड़े और सहूलियत मुहैया करने के लिए खर्च करना चाहता है तो, बाजार उसे कम से कम कीमत पर कम्बल, भोजन और जरूरतमन्द के लिए दवाएं

प्राप्त करना संभव बनाता है। बाजार धन हासिल करने का मौका उपलब्ध करता है जिसे दुखियों की मदद के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है और उनकी परोपकार की क्षमता को अधिकतम स्तर तक बढ़ाया जा सकता है। बाजार ही है जो कि परोपकारी के दान को संभव बनाता है।

जो सबसे आम गलती होती है, वह है लोगों के "आत्महित" के उद्देश्य को पहचानना, "जिसमे अक्सर "स्वार्थपन" होने का भ्रम हो जाता है। बाजार मे लोगों का उद्देश्य वास्तव मे स्वयं का उद्देश्य भी होता है, लेकिन अपने उद्देश्यों की पूर्ति के साथ हमें अन्य लोगों की दिलचस्पी और उनकी बेहतरी की चिंता भी रहती है—हमारे परिवार के सदस्य, हमारे दोस्त, हमारे पड़ोसी और यहाँ तक की वे अजनबी भी जिनसे शायद हम कभी मिलते भी नहीं। ऐसे मे, बाजार ऐसी स्थिति बनाने मे सहायक होता है जो लोगों को अजनबियों के बारे मे भी सोचने के लिए प्रेरित करें।

फिलिप विक्स्टीड ने बाजार आदान प्रदान मे प्रेरणा एक सूक्ष्म भेद युक्त संशोधन की पेशकश की है। बाजार के आदान प्रदान मे शामिल होने की प्रेरणा के वर्णन के लिए "स्वार्थवादिता" के इस्तेमाल के बजाय (उदाहरण के तौर पर, कोई गरीबों के लिए भोजन खरीदने हेतु बाजार जा सकता है) उसने "नॉन—टुइज्म" पद की रचना की। हम अपना उत्पाद इसलिए बेचते हैं ताकि पैसा कमाकर अपने दोस्तों और यहाँ तक की दूरस्थ अजनबियों की सहायता करने मे सक्षम हो सकें, परंतु जब हम न्यूनतम या अधिकतम मूल्य के लिए मोलभाव करते हैं, तब हम बिरले ही उस दूसरे पक्ष की बेहतरी के बारे मे सोचते हैं, जिसके साथ हम मोलभाव कर रहे होते हैं। अगर हम करते हैं, हम विनिमय करते हैं और एक उपहार, जो किंचित विनिमय की प्रकृति को जटिल बनाता है। जो लोग जान बूझकर जरूरत से अधिक भुगतान करते हैं वे कदाचित ही अच्छे व्यापारी होते हैं, जैसा कि एच. बी. एक्शन ने अपनी पुस्तक बाजार की नैतिकता मे लिखा है, घाटे मे व्यवसाय चलाना एक बड़ी बेवकूफी है, यहाँ तक कि मूर्खता है ना कि सर्वजन उपकारी बनने का रास्ता है।

जो लोग वाणिज्य और उद्योग से ज्यादा राजनीति मे सहभागिता का बखान करते हैं, उन्हें यह हमेशा याद रखना चाहिए कि पहले वाले काफी नुकसान कर सकते हैं और कदाचित ही अधिक लाभकारी होते हैं। स्मिथ से पहले लिखते हुए, वोल्टेयर ने स्पष्ट अंतर देखा। अँग्रेजी राज्यों से संबन्धित उनके पत्रों में से अपने लेख "ऑन ट्रेड" (यह वोल्टेयर ने अँग्रेजी मे लिखा, जिसमे वह काफी धाराप्रवाह थे, और बाद मे उन्होने इसे फ्रेंच मे लिखा और इसे दार्शनिक पत्रों के रूप मे प्रकाशित कराया) मे उन्होने लिखा कि,

> फ्रांस में मार्की (अंग्रेजों मे कुलीन की एक पदवी) की पदवी इसे स्वीकार करने वाले प्रत्येक व्यक्तियों को धर्मार्थ दी गई। और वह सभी लोग जो दूर दराज के देशों के बीच से खूब सारे शान के साथ पेरिस पहुंचे, और वे नाम जो एस अथवा ईले पर खत्म हों, वे अकड़ कर चल सकते हैं और रो सकते हैं, जैसे कि मेरे जैसा आदमी! मेरी श्रेणी और आकृति का एक आदमी! और अधिपति अवमानना के साथ व्यापारी की तरफ तुच्छ दृष्टि से देख सकता है। जबकि दूसरी तरफ

> व्यापारी, व्यापारी अपने उद्यम के बारे में तिरस्कारपूर्ण बातें सुनकर लज्जित हो तो यह बेवकूफी ही है। यद्यपि, मैं यह नहीं कह सकता कि एक राष्ट्र के लिए ज्यादा उपयोगी क्या है; शासक, एक खास रीति मे ढाला हुआ, जो यह जानता हो कि घड़ी के कितने बजे राजा की नींद खुलेगी और कितने बजे वह सोने जाएगा। और जो खुद की और राज्य की महिमा का बखान करता हो, अथवा उसी समयकाल मे प्रधानमंत्री के सदन मे चाकरी कर रहा हो, अथवा एक विक्रेता, जो अपने देश को समृद्ध बना रहा हो, अपने वहाँ से सूरत या ग्रैंड सायरो में ऑर्डर भेज रहा हो, और दुनिया भर को आनंद पहुँचने मे अपना सहयोग दे रहा है।

जब हमारे समानान्तर राजनीतिज्ञ और बुद्धिजीवी विक्रेताओं और पूंजीपतियों पर अपनी नाक मुंह सिकोड़ रहे हों तब लज्जित होने की जरूरत नहीं है, इसका बखान या उसकी निंदा की अकड़ भी नहीं, यह सब तब जब विक्रेता, पूंजीपति, कार्यकर्ता, निवेशक, कारीगर, किसान, और आविष्कारक व अन्य उपयोगी उत्पादक धन बनाते हैं जो राजनीतिज्ञ जब्त कर लेते हैं और पूंजीवाद विरोधी बुद्धिजीवी इसे वापस भेजते हैं मगर लालच से इस्तेमाल भी करते हैं।

बाजार उन लोगों पर निर्भर नहीं करता, जिन्हें पहले से ही स्वार्थी मान कर चला जाता है। न ही बाजार विनिमय के अधिक स्वार्थी व्यवहार को बढ़ावा देता है। मगर राजनीतिज्ञों के विपरीत, उत्सुक सहभागियों के मध्य लेन–देन से समृद्धि और शांति उत्पन्न होती है, वह स्थिति जिसकी छत्रछाया मे उदारता, मित्रता और प्रेम पनपता है। इसके लिए जो भी कहा जा सकता था, जैसे एडम स्मिथ को अच्छी तरह समझा गया।

आयन रैंड और पूंजीवाद; नैतिक क्रांति

डेविड केली

इस लेख मे, वस्तुनिठ दर्शनशास्त्री ने आधुनिक दुनिया की नींव मुकम्मल करने और पूंजीवाद द्वारा संभव लाभ को सुरक्षित करने के लिए एक "एक चौथी क्रांति" का प्रस्ताव रखा।

डेविड केली दी एटलस सोसाइटी के कार्यकारी निदेशक हैं, जो वस्तुनिठता के दर्शनशास्त्र को विकास और प्रसार को बढ़ावा देती है। केली, दी एविडेंस ऑफ दी सेंसेज, दी आर्ट ऑफ रीजनिंग (यह यूनाइटेड स्टेट्स मे तर्कशास्त्र मे सबसे ज्यादा इस्तेमाल होने वाली पाठ्य पुस्तकों मे से एक है), ए लाइफ ऑफ वन्स ओन : इन्डिविजुअल राइट्स एंड द वेलफेयर स्टेट, और अन्य पुस्तकों के लेखक हैं। उन्होने वासर कॉलेज और ब्रैंडे यूनिवर्सिटी मे दर्शनशास्त्र पढ़ाया और कई लोकप्रिय प्रेस मे प्रकाशित भी हुए, जिसमे हार्पर्स की, द साइंसेज, रीजन, हारवार्ड बिजनेस रिव्यू और बैरंस जैसे प्रकाशनों का नाम शामिल है।

यह लेख लेखक की रचना, इंडिविजूअलिस्ट, स्प्रिंग 2009 से अनुमति के साथ से पुनः प्रकाशित किया गया है।

"हमारे पास दुनिया को कठिनाइयों से मुक्त करने की दोबारा शुरुआत का अधिकार है"।

—थॉमस पाइन, कॉमन सेंस, 1792।

वित्तीय बाजार मे संकट ने पूंजीवाद–विरोधी भावना की पूर्वानुमानित तेज धारा को बढ़ाने का काम किया है। बावजूद इस तथ्य के कि सरकारी विनिमय संकट का सबसे बड़ा कारण रहा, पूंजीवाद–विरोधी और मीडिया मे उनके समर्थकों ने बाजार को दोषी ठहराया और नए नियंत्रण लगाने की वकालत की। सरकार ने पहले से ही वित्तीय बाजार मे एक अभूतपूर्व हस्तक्षेप किया है, और अब ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि आर्थिक नियंत्रण का विस्तार वाल स्ट्रीट से कहीं आगे तक पहुँच जाएगा।

उत्पादन का नियमन और व्यवसाय वह पहली दो बुनियादी चीजें हैं जो सरकार हमारी मिश्रित अर्थव्यवस्था मे करती है। दूसरा कम है, वह है पुनर्वितरण–आमदनी और धन को एक हाथ से दूसरे हाथ मे हस्तांतरित करना। इस क्षेत्र मे भी पूंजीवाद–विरोधियों ने गारंटीकृत स्वास्थ्य देखभाल जैसी नई पात्रता लागू करने पर, धनवानों के ऊपर

अतिरिक्त कर का बोझ डालकर रोक लगा दिया है। बराक ओबामा के चुनाव के साथ, आर्थिक संकट, ने पुनर्वितरण की दबी हुई बड़ी मांग का खुलासा किया। यह मांग कहाँ से आई? सारभूत शब्दावली मे इस सवाल का जवाब देने के लिए, हमे पूंजीवाद के उद्भव काल का वापस निरीक्षण करना होगा और पुनर्वितरण के तर्कों को और करीब से जानना होगा। पूंजीवादी व्यवस्था 1750 से 1850 के मध्य काल मे तीन क्रांतियों के नतीजतन प्रभाव मे आई। पहली थी राजनैतिक क्रांतिः उदारवाद की जीत, खासतौर से प्रकृतिक अधिकारों के सिद्धांत, और यह विचार कि सरकार को व्यक्तिगत अधिकारों, जिसमे संपत्ति का अधिकार भी शामिल है, की रक्षा के लिए अपने कार्यों तक नियंत्रित रहना चाहिए। दूसरी क्रांति थी आर्थिक समझ का जन्म, जैसा कि एडम स्मिथ के वेल्थ ऑफ नेशंस मे उदाहरण दिया गया है। स्मिथ ने यह दिखाया है, कि जब व्यक्तियों को अपनी आर्थिक अभिरुचियों को आगे बढ़ाने के लिए स्वतन्त्रता दी जाती है, तब परिणाम अव्यवस्था नहीं बल्कि स्वाभाविक रूप से आते हैं, एक बाजार व्यवस्था जिसमे व्यक्तियों के कार्य संयोजित होते हैं और सरकारी प्रबंधन वाली व्यवस्था से अधिक धन का उपार्जन होता है। तीसरी क्रांति थी, निःसंदेह रूप से, औद्योगिक क्रांति। तकनीकी आविष्कारों ने बल प्रदान किया और इंसानी उत्पादन शक्ति के मुकाबले कई गुना उत्पादन संभव हुआ। इसके असर से न सिर्फ हर किसी के रहन सहन की स्थिति मे सुधार आया, बल्कि इसने व्यक्तिगत स्टार पर लोगों को उद्यम के लिए प्रेरित किया जिससे पहले के मुकाबले अकल्पनीय कमाई के संयोग बने।

राजनैतिक क्रांति, व्यक्तिगत अधिकारों के सिद्धांत की जीत, अपने साथ एक नैतिक अदर्शवाद का भाव भी ले आई। यह इंसानों की अत्याचार से मुक्ति थी, यह इस बात की पहचान थी कि प्रत्येक व्यक्ति, उसकी समाज मे चाहे जो हैसियत हो, वह अपने आप मे महत्वपूर्ण है। लेकिन आर्थिक क्रांति को नैतिक अनेकार्थी शब्दावली मे छिपा दिया गया; आर्थिक व्यवस्था की तरह, पूंजीवाद को पाप कि पैदाइश के तौर पर मान लिया गया। धन की लालसा स्वार्थपन और लोभ के विरुद्ध ईसाई निषेधाज्ञा की छाया के पीछे धकेल दिया गया। स्वाभाविक व्यवस्था के शुरुआती पंडित इस बात के लिए जागरूक थे कि वे एक नैतिक विरोधाभास दिखा रहे थे—विरोधाभास, जैसा कि बर्नार्ड मैंडेविले ने इसे रखा, कि निजी व्यसन आम लोगों का लाभ उत्पन्न कर सकता है।

बाजार के समीक्षक नैतिकता के इन विरोधाभासों का हमेशा लाभ उठाते रहे हैं। समाजवादी आंदोलन इन आरोपों से चला कि पूंजीवाद स्वार्थ, शोषण, विरक्ति और अन्याय का बीजारोपन करता है। हल्के रूप मे, यह समान मान्यता कल्याणकारी स्थिति उत्पन्न करती है, जो आमदनी को सरकार के "सामाजिक न्याय" कार्यक्रमों के नाम पर वितरित की जाती है। पूंजीवाद कभी भी नैतिक संदिग्धता, जिसमे इसका जन्म हुआ, से मुक्त नहीं हो पाया। जो समृद्धि यह ले आया उसके लिए इसे सम्मान मिला, इसे राजनीतिक और बौद्धिक स्वतंत्रता के लिए आवश्यक पूर्वस्थिति होने के लिए सम्मान मिला। लेकिन इसके समर्थकों मे से कुछ ही जीवनभर दृढ़ता से पूंजीवादिता के साथ आगे बढ़ने के लिए तैयार हो सके—उत्पादन और व्यापार के माध्यम से स्वहित की पूर्ति—जो नैतिक रूप से ईमानदार, लेकिन थोड़ा कम उत्कृष्ट या आदर्श हो।

बाजार के प्रति नैतिक विद्वेष कहाँ से आता है इस संबंध मे कोई रहस्य नहीं है। इसका उदय पर्यायवाद के नीतिशास्त्र से होता है, जो की पश्चिमी सभ्यता मे गहराई से जड़वत है, जैसा कि वास्तव मे अधिकतर सभ्यताओं मे है। पर्यायवाद के स्टैण्डर्ड से, स्व–लाभ का अनुसरण एक तटस्थ कार्य के तौर पर बेहतर है, नैतिकता की प्रभुता से बाहर, और अपराध जितना बुरा। यह सच है कि बाजार मे स्वैच्छिक व्यापार से सफलता हासिल होती गई, और दूसरों की जरूरतों की पूर्ति करते हुए। लेकिन यह भी सच है कि जो लोग निश्चित रूप से सफल होते हैं वे निजी लाभ से प्रेरित होते हैं, और वे नैतिकता से भी उतने ही संबद्ध होते हैं जितना की अपने उद्देश्य के परिणामों के साथ।

रोजमर्रा की बातचीत मे, "पर्यायवाद", यानि दूसरों के हित मे जीने से सिद्धांत शब्द को आमतौर पर दयालुता अथवा सामान्य नम्रता से ज्यादा नहीं समझा जाता है। लेकिन इसका असली, ऐतिहासिक और नीतिशास्त्रगत अर्थ है, आत्मसंतुष्टि। समाजवादियों के लिए, जिन्होंने इस शब्द की रचना की, उनके लिए इसका मतलब है स्व का बड़े सामाजिक संपूर्णता मे डूब जाना। जैसा की आयन रैंड ने लिखा है, "पर्यायवाद का मूलतत्व है कि इंसान को सिर्फ अपने लिए जीने का कोई अधिकार नहीं, दूसरों के लिए अपनी सेवाएँ देना ही उसके अस्तित्व की प्रामाणिकता है, और आत्म–बलिदान ही उसकी सबसे बड़ी नैतिक जिम्मेदारी, धर्म और आदर्श होता है"। इस कठोर मायने मे पर्यायवाद "सामाजिक न्याय" के विभिन्न सिद्धांतों के लिए मूलभाव है, जिसका इस्तेमाल धन पुनर्वितरण के सरकारी कार्यक्रम के समर्थन के लिए किया जाता है। ये कार्यक्रम दूसरों के सहयोग के लिए लोगों द्वारा कर के रूप मे अनिवार्य बलिदान को प्रस्तुत करते हैं। ये व्यक्तिगत स्रोतों के संयुक्त इस्तेमाल को प्रस्तुत करते हैं, जिनका इस्तेमाल दूसरों की तरफ से किए गए प्रयास के रूप मे होना होता है। और यही वह मूल कारण है जिसके लिए पूंजीवाद का समर्थन करने वालों का नैतिकता के आधार पर किसी के भी द्वारा विरोध किया जाना चाहिए।

सामाजिक न्याय की मांग

सामाजिक न्याय के लिए मांग दो अलग रूप लेते हैं, जिसे हम कल्याणवाद या समतावाद कहते हैं। कल्याणवाद के मुताबिक, हर किसी को जीवन के लिए कुछ अनिवार्य निश्चित अधिकार होते हैं, जिसमे कम से कम भोजन, आश्रय, कपड़े, चिकित्सा देखभाल, शिक्षा आदि। यह समाज की जिम्मेदारी है की वह हर व्यक्ति तक इन आवश्यक जरूरतों की पहुँच सुनिश्चित करे। मगर एक निर्बाध पूंजीवादी व्यवस्था प्रत्येक व्यक्ति के लिए इसकी गारंटी नहीं लेती।

लिहाजा, कल्याणवाद पर चर्चा करते हैं, पूंजीवाद अपनी नैतिक जिम्मेदारियों को संतुष्ट करने मे असफल होता है, ऐसे मे इसे राज्य के कार्यों के माध्यम से संशोधित किया जाना चाहिए, ताकि वस्तुओं को उन लोगों तक भी पहुंचाया जा सके जो अपने प्रयासों से इन्हें हासिल नहीं कर सकते। समतावाद के मुताबिक, एक समाज द्वारा उत्पादित धन का उचित वितरण होना चाहिए। इसे कुछ लोगों के लिए, 15%, कुछ लोगों के लिए 50 अथवा अन्य लोगों के मुकाबले किसी के लिए 100 गुना अधिक कमाने का मौका मिलना अन्यायपूर्ण है। मगर निर्बाध पूंजीवाद धन और आमदनी के इस भेदभाव को मंजूरी और

प्रोत्साहन देती है, ऐसे मे यह अन्यायपूर्ण है। समतावाद की प्रामाणिकता आमदनी के वितरण के आंकडों का इस्तेमाल करता है। 2007 मे, उदाहरण के तौर पर, यूनाइटेड स्टेट्स मे अग्रणी 20% घरों के पास कुल आमदनी का 50% हिस्सा पहुंचा और निचले स्तर के 20% लोगों ने सिर्फ कुल आमदनी का सिर्फ 3.4% ही कमाया। समतावाद का लक्ष्य इस अंतर को कम करना है, बराबरी की दिशा मे किया गया कोई भी बदलाव निष्पक्षता मे बढ़ोत्तरी की तरह लिया जाता है। इन दोनों सिद्धांतों के बीच कल्याण की निरपेक्षता और इससे संबन्धित स्तर का होता है। कल्याणवादी यह मांग करते हैं कि हर व्यक्ति को एक न्यूनतम सेहतमंद जीवनशैली का अधिकार मिले। जब तक यह "सुरक्षा जाल" प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपलब्ध है तब तक इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि अन्य लोग कितना ज्यादा कमा रहे हैं, और गरीब–अमीर के बीच कितनी असमानता है। ऐसे मे कल्याणवादियों की प्राथमिक अभिरुचि गरीबी के एक निश्चित स्तर से नीचे वालों, बीमार, बेरोजगार अथवा किसी भी अन्य तरीके से पिछड़े लोगों को फायदा पहुँचने वाले कार्यक्रमों मे होती है। दूसरी तरफ, समतावादी संबन्धित कल्याण के लिए चिंतित होते हैं। समतावादी, दो समाजों की बात करें तो, वे ऐसे समाज को प्राथमिकता देंगे जिसमे धन का वितरण बराबर भाग मे होता है, भले इसका औसत जीवन स्तर कमतर ही क्यूँ न हो। अतएव, समतावादी कर मे बढ़ोतरी जैसे सरकारी उपायों का समर्थन करते हैं, जिसका उद्देश्य धन को सम्पूर्ण आमदनी के स्केल मे पुनरवितरित करना होता है, न कि सिर्फ निचले स्तर पर। वे चीजों के राष्ट्रीयकरण का भी समर्थन करते हैं, जैसे कि शिक्षा और दवाओं का, इन्हे बाजार से पूरी तरह हटाकर सभी लोगों तक कमोबेश बराबर भाग मे मुहैया कराना चाहते हैं।

आइये, सामाजिक न्याय के इन दो सिद्धांतों पर बारी–बारी से विचार करते हैं।

कल्याणवाद : अचयनित बाध्यता

कल्याणवाद का मूल आधार है, लोगों को भोजन, आश्रय और स्वास्थ्य देखभाल का अधिकार है। वे इन चीजों के अधिकारी होते हैं। इस पूर्वधारणा पर, जो व्यक्ति किसी सरकारी कार्यक्रम के तहत लाभ प्राप्त करते हैं, उन्हें मुश्किल से सिर्फ उतना मिलता है, जितना उपयुक्त हो, इसी के समान, अगर एक खरीदार जो चीजें पाने के लिए भुगतान करता है वह सिर्फ अपना बकाया प्राप्त करता है।

जब एक राज्य कल्याणकारी लाभ बाँटता है, यह केवल अधिकारों की रक्षा करता है, जिस तरह से यह एक खरीदार को धोखाधड़ी से बचाता है। यहाँ किसी भी मामले मे कृतज्ञता की अनिवार्यता नहीं होती है।

कल्याणकारी अधिकारों का सिद्धांत, अथवा सकारात्मक अधिकार, जैसा कि किंचित इसे पुकारा जाता है, को जीवन की स्वतन्त्रता, स्वाधीनता और संपत्ति के परंपरागत अधिकारों के आधार पर तैयार किया गया है। परंतु इसमे एक जाना–माना फर्क भी है। परंपरागत अधिकार वे अधिकार हैं जिन्हें बिना अन्य किसी के हस्तक्षेप के किया जाता है। जीवन का अधिकार वह अधिकार है जिसका उद्देश्य स्वत्व की रक्षा हेतु कार्य करना होता है। यह सामान्य प्रकृतिक मृत्यु से प्रतिरोध का अधिकार नहीं है, यहाँ तक कि असमय मृत्यु का भी नहीं। संपत्ति का अधिकार वह अधिकार है जिसके तहत आप स्वतंत्र

रूप से इसे खरीद–बेच सकें, और प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं पर अधिकार, जो किसी के भी अधिकार क्षेत्र मे न आती हो। यह संपत्ति ढूँढने का अधिकार है, मगर प्रकृति अथवा राज्य के दोहन का अधिकार नहीं है, और यह न ही इस बात की गारंटी है कि कोई किसी भी चीज पर कब्जा करने मे सफल हो जाएगा। इसके अनुसार, ये अधिकार दूसरों पर नकारात्मक बाध्यता के तौर पर लागू होते हैं, जिसमे हस्तक्षेप न करना, और न ही अपने चयन के हिसाब से किसी पर कार्य करने का दबाव बनाना शामिल है। अगर मैं खुद को समाज से अलग हटाने की कल्पना करूँ–एक रेगिस्तान मे रहूँ, उदाहरण के तौर पर–मेरे अधिकार पूर्णरूपेण सुरक्षित होंगे। मैं लंबे समय तक नहीं जी सकूँगा, और निश्चित तौर पर अच्छे से नहीं जिऊंगा, लेकिन इस सबके साथ मैं हत्या, चोरी और हमले के डर से पूरी तरह स्वतंत्र रहूँगा।

व्यतिरेक मे, कल्याणकारी अधिकारों की कल्पना कुछ निश्चित चीजों को प्राप्त करने और उपयोग करने के लिए की गई, किसी के कार्यकलापों की परवाह किए बिना, ये अधिकार हैं अन्य लोगों द्वारा ऐसे लोगों को वस्तुएँ उपलब्ध कराना, जो खुद इन्हें कमा नहीं सकते। ऐसे मे, कल्याणकारी अधिकार दूसरों पर सकारात्मक बाध्यता लागू करना है। अगर मुझे भोजन प्राप्त करने का अधिकार है तो किसी अन्य पर इसे उपजाने का कर्तव्य है। अगर मैं इसके लिए अदायगी नहीं कर सकता, तो किसी और पर इसे मेरे लिए खरीदने की बाध्यता है। कल्याणकारी अधिकारों के समर्थक कई बार यह दलील देते हैं कि बाध्यताएँ पूरे समाज पर लागू होती हैं, न कि किसी व्यक्ति विशेष पर। मगर समाज कोई कंपनी नहीं है, यह मात्र एक नैतिक शक्ति है, जो इसके सदस्यों से ऊपर और बढ़कर है, ऐसे मे कोई भी बाध्यता अंततः इसके सदस्यों के ऊपर ही आती है। जब कल्याणकारी अधिकार सरकारी कार्यक्रमों के जरिए लागू किए जाते हैं, उदाहरण के तौर पर सरकारी कार्यक्रमों के जरिए, तब बाध्यताएँ सभी कर भुगतान करने वालों पर वितरित हो जाती हैं। एक नैतिक नजरिए से, तब कल्याणवाद का सार अर्थ यह है कि एक व्यक्ति की जरूरतें दूसरे व्यक्ति के नुकसान का कारण हैं। इस तरह का दावा शहर तक अथवा राष्ट्र तक ही चल सकता है, इसमे पूरी मानव जाति को समाविष्ट नहीं किया जा सकता। मगर इस सिद्धांत के किसी भी रूप मे, मांग, इसके दावेदार के साथ आपके व्यक्तिगत सम्बन्धों, सहायता की आपकी इच्छा अथवा आपके सहयोग की तुलना में उसके मूल्यांकन पर निर्भर नहीं करता है। यह एक गैर चयनित जिम्मेदारी है जो पूर्णतया उसकी जरूरतों से आती है।

लेकिन हमें विश्लेषण को एक कदम आगे तक ले जाना चाहिए। अगर मैं अकेले किसी रेगिस्तान मे रहता हूँ, तो निश्चित तौर पर मेरा कोई कल्याणकारी अधिकार नहीं होगा, क्योंकि वहाँ वस्तुएँ मुहैया करने के लिए कोई और मौजूद नहीं होगा। इसी तरह से अगर मैं किसी आदिम समाज मे रहता हूँ जहां दवा के बारे मे भिज्ञता ही नहीं है, तो ऐसे मे मुझे स्वास्थ्य देखभाल का कोई अधिकार नहीं होगा। कल्याण के अधिकारों की अंतर्वस्तु संबन्धित समाज की आर्थिक संपन्नता और उसकी उत्पादन की क्षमता पर निर्भर करती है। परिणामस्वरूप, किसी के ऊपर दूसरों की जरूरतों को पूरा करने की जिम्मेदारी उसकी क्षमता पर निर्भर करती है। मुझे व्यक्तिगत रूप से अन्य लोगों की वो जरूरतें पूरा न कर पाने के लिए अपराधी नहीं ठहराया जा सकता, जिसे मैं खुद के लिए भी पैदा नहीं कर सकता।

मान लो, मैं इसे उत्पादित कर सकता हूँ, लेकिन नहीं करता? मान लो, मैं जितना कमा रहा हूँ, उससे अधिक कमाने मे सक्षम हूँ, जिसपर लगने वाले कर से उन व्यक्तियों कि जरूरतें पूरी होतीं जो भूखे हैं। तो क्या मैं दूसरों के लिए और अधिक मेहनत करके ज्यादा कमाने के लिए मजबूर हूँ? मैं कल्याणवाद के ऐसे किसी तर्कशास्त्री को नहीं जनता जो ऐसा करने के लिए कहे। दूसरों के द्वारा नैतिक मांग लागू करना न सिर्फ मेरी क्षमता पर बल्कि उत्पादन की मेरी इच्छा पर भी निर्भर करता है। और यह कल्याणवाद के नैतिक फोकस के बारे मे हमसे कुछ महत्वपूर्ण बात कहता है। यह मानवीय जरूरतों की संतुष्टि कि पूर्ति पर आधारित नहीं है, बल्कि ऐसा कर पाने कि सफलता पर निर्भर है। यह जिम्मेदारी, कुछ हद तक, सशर्त है, जो लोग निश्चित तौर पर संपत्ति बनाने मे सफल हो पाते हैं, तो हो सकता है यह तभी संभव हो सका हो जब अन्य लोगों ने धन बांटने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ बनाई हों। जरूरतमंदों को फायदा पहुंचाने का लक्ष्य इसके लिए सक्षम लोगों की तुलना मे अधिक नहीं है। यह अव्यक्त पूर्ण धारणा है कि एक व्यक्ति की क्षमता और नेतृत्व सामाजिक पूंजी होती है, जिसका इस्तेमाल सिर्फ उसी स्थिति के लिए हो सकता है जिसका लक्ष्य लोगों की सेवा हो।

समतावाद : "उचित" वितरण

अगर हम समतावाद की तरफ मुड़ते हैं, तो यह पाते हैं कि एक अलग तर्क मार्ग द्वारा समान सिद्धांत पर ही पहुँच जाते हैं। समतावाद की नैतिक रूपरेखा न्याय के सिद्धांत से परिभाषित की गई है न कि अधिकार के। अगर हम समाज को पूर्णरूप मे देखते हैं, तो हम पाते हैं कि आमदनी, धन और शक्तियों का वितरण एक एक निश्चित ढंग से व्यक्तियों अथवा समूहों के बीच वितरित की गई है।

बुनियादी सवाल है कि क्या मौजूदा वितरण उचित है? अगर नहीं, तो इसे पुनर्वितरण के सरकारी कार्यक्रम से सही किया जाना चाहिए। एक विशुद्ध बाजार अर्थशास्त्र, निःसन्देह, व्यक्तियों के बीच समता का उत्पादन नहीं करता। लेकिन कुछ समतावादियों ने यह दावा किया है कि न्याय के द्वारा परिणामों की मजबूत बराबरी की जरूरत है। सबसे सामान्य स्थिति है बराबर परिणाम के समर्थन मे पूर्वधारणा, और बराबरी मे से होने वाला कोई भी अपक्रम पूर्णरूपेण समाज के लाभ से तर्कसंगत होना चाहिए। इस प्रकार से, अंग्रेज लेखक आर. एच. तावने ने लिखा है कि "परिस्थितिजन्य असमानता को यथोचित समझा जाए, अगर समुदाय के लिए जरूरी सेवाओं की सुरक्षा के लिए यह आवश्यक स्थिति हो तो।" जॉन रोल्स का प्रसिद्ध "असमानता सिद्धांत" कहता है—असमानताएं तब तक स्वीकार्य हैं जब तक कि ये समाज में सबसे कम महत्वपूर्ण व्यक्ति के हितों को पूरा करें—यह इस दृष्टिकोण का सबसे हालिया उदाहरण है। दूसरे शब्दों मे, समतावादियों ने यह स्वीकारा है कि वे कठोर समतल उत्पादन पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकते हैं। वे यह स्वीकारते हैं कि हर व्यक्ति समाज की समृद्धि मे बराबर योगदान नहीं करता है। लिहाजा, एक सीमा तक, लोगों को उनकी उत्पादन क्षमता के अनुसार प्रतिफल दिया जाना चाहिए, उनकी बेहतरीन कोशिश से उत्पादित पारितोषिक के तौर पर। लेकिन इस तरह की कोई भी असमानता उस सीमा तक ही होनी चाहिए जहां तक यह समाज के लिए अच्छा हो।

इस सिद्धांत का तर्कशास्त्रीय आधार क्या है? समतावादी अक्सर यह दलील देते हैं कि यह विशुद्ध रूप से न्याय के बुनियादी सिद्धांत को मानता है। यानि लोगों को तभी अलग तरह से ट्रीट किया जाएगा जब वे नैतिक रूप से प्रासंगिक तौर पर अलग होंगे। अगर हम इस मूल सिद्धांत को आमदनी के वितरण पर लागू करने जा रहे हैं तो, सबसे पहले हमे यह समझना होगा कि समाज वस्तुतः आमदनी के वितरण कार्य मे लगा हुआ है। यह अनुमान साफ तौर पर गलत है। एक बाजार अर्थव्यवस्था मे, आमदनी लाखों लोगों की पसंद द्वारा निर्धारित होती है–उपभोक्ता, निवेशक, उपक्रमी और कार्यकर्ता आदि की। यह पसंद माँग और पूर्ति के नियम के द्वारा संयोजित की जाती है, और यह कोई इत्तेफाक नहीं है कि एक सफल उद्यमी एक दिहाड़ी मजदूर से काफी ज्यादा कमाता है। लेकिन ऐसा समाज के किसी हिस्से के सचेतन उद्देश्य से नहीं होता है। वर्ष 2007 मे यूनाइटेड स्टेट्स मे सबसे ज्यादा पैसा कमाने वाली कलाकार ओपराह विनफ्रे रहीं, जिन्होंने कुछ 260 मिलियन अमेरिकन डॉलर कमाया। ऐसा इसलिए नहीं हुआ क्योंकि "समाज" ने यह तय किया कि वह इतना अधिक कमाने योग्य हैं, बल्कि वे लाखों प्रशंसक हैं जिन्होने उनका कार्यक्रम देखने का फैसला किया। यहाँ तक कि एक सामाजिक अर्थव्यवस्था मे, जैसा कि हम जानते हैं, आर्थिक परिणाम सरकारी योजनाकारों के नियंत्रण मे नहीं हैं। यहाँ तक कि यहाँ, जहां सहज कार्यविधि है, तिसपर भी भ्रष्टाचार है, जिसमे परिणाम अधिकारी तंत्र के आपसी मतभेद, काला बाजारी और ऐसे अन्य तत्वों से प्रभावित होता है। वितरण के किसी भी शाब्दिक अशुद्धि संबंधी कार्यविधि स्वाभाविक अनुपस्थिति के बावजूद, समतावादी अक्सर यह दलील देते हैं कि आमदनी का सांख्यिकीय वितरण न्यायपूर्ण ढंग से हो, यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी समाज की है। क्यों? क्योंकि धन का उपार्जन एक सहकारी, सामाजिक प्रक्रिया है। एक समाज मे अधिक धन के उपार्जन की विशेषता व्यापार और कामगारों की श्रेणी से अधिक तय होती है एक स्वावलम्बी समाज की तुलना मे। कामगारों की श्रेणी का मतलब है अंतिम उत्पाद तैयार करने मे बहुत सारे लोगों ने योगदान दिया है, और व्यापार का मतलब है कि उत्पादक द्वारा हासिल धन के लिए एक समान व्यापक घेरे के लोगों ने जिम्मेदारियों को साझा किया है। ऐसे मे उत्पादन इन सम्बन्धों द्वारा रूपांतरित होता है, समतावाद कहता है, पूर्णरूपेण यह समूह उत्पादन के असली यूनिट और धन के असली स्रोत के रूप मे माना जाना चाहिए। कम से कम यह उस स्रोत के मध्य उपस्थित अंतर है जो एक सहकारी और एक गैर सहकारी समाज के धन के बीच होता है। ऐसे मे समाज को यह जरूर सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी सहभागियों के बीच सहयोग के फल उपयुक्त वितरण होना चाहिए।

लेकिन यह दलील सिर्फ उसी स्थिति मे मान्य है जब आर्थिक संपन्नता को एक बेनाम सामाजिक उत्पाद मानते हैं, जिसमे किसी एक सहभागी के व्यक्तिगत योगदान को पृथक कर पाना असंभव हो। सिर्फ इसी मामले में उत्पाद की हिस्सेदारी के वितरण न्याय के लिए आफ्टर द फैक्ट सिद्धांत पर विचार करना जरूरी होगा। परंतु यह पूर्वधारणा, एक बार फिर, स्पष्ट रूप से गलत है। तथाकथित सामाजिक उत्पाद असल मे एक व्यक्तिगत वस्तु या सेवाएँ जो बाजार मे उपलब्ध हैं, का वृहत श्रृंखला समूह है। यह जानना निश्चित तौर पर संभव है कि कौन सी वस्तु और सेवा के उत्पादन मे किस व्यक्ति ने सहयोग किया था। और जब कोई उत्पाद लोगों के एक समूह द्वारा, जैसे कि एक फर्म

के रूप मे, उत्पादित किया जाता है, तो यह पता करना संभव होता है कि यह किसने क्या किया। आखिरकार, एक उद्यमी कर्मचारी झक मारने के लिए काम पर रखता नहीं है। एक कर्मचारी उसके प्रत्याशित विभिन्नता के लिए नियुक्त किया जाता है जिसके प्रयास से अंतिम उत्पाद तैयार होता है। इस तथ्य को स्वयं समतावादियों द्वारा स्वीकृति मिली हुई है, जब कोई समाज की कुल संपत्ति मे बढ़ोतरी के लिए ज्यादा उत्पादकता दिखाता है तब पुरस्कार के रूप मे असमानता स्वीकार्य होती है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि पुरस्कार सही व्यक्ति तक पहुंचे, जैसा कि रॉबर्ट नोजिक ने महसूस किया, यहाँ तक कि समतावादी को भी यह अनुमान होना चाहिए कि हम व्यक्तिगत योगदान कि भूमिका का पता लगा सकते हैं। संक्षेप मे, न्याय के सिद्धांत को आमदनी के सांख्यिकीय वितरण अथवा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था कि समृद्धि पर लागू करने का कोई आधार नहीं है। हमे शुभचिंतक माता–पिता द्वारा खाने की मेज पर बैठे अपने सभी बच्चों को बहुत सारी खिचड़ी मे से सभी मे बांटने की कोशिश कि तस्वीर याद कर बेफिक्र हो जाना चाहिए। जब हम इस नजरिए से बेफिक्र हो जाएंगे, तब जो सिद्धांत बनेगा वह वही होगा जिसका समर्थन तावने, राव्ल्स और अन्य कइयों ने किया है। वह सिद्धांत, जिसके तहत असमानता उस हद तक स्वीकार्य है जब तक वह सब की जरूरतों को पूरा करती है? अगर यह न्यायिक दृष्टि से तर्कपूर्ण नहीं है, तो इसे हमे उन बाध्यताओं के तौर पर मानना चाहिए जो हम एक दूसरे व्यक्तियों के ऊपर डालते हैं। अगर हम इसे इस प्रकाश मे समझते हैं, हम देख सकते हैं कि हमने कल्याण के अधिकारों के आधार जैसे सिद्धांत का ही पता लगाया है। यह सिद्धांत कहता है कि उत्पादक अपने प्रयासों का फल सिर्फ उसी स्थिति मे भोग सकता है जब इससे अन्य लोगों को भी लाभ हो रहा हो। यहाँ उत्पादन, रचना अथवा आमदनी कमाने की बाध्यता नहीं है। लेकिन आप ऐसा करते हैं तो, दूसरों कि जरूरतें आप के कार्यों पर एक अवरोध के रूप मे प्रकट होंगी। आपकी क्षमता, आपकी अगुआई, आपकी बुद्धिमत्ता, अपने लक्ष्य के प्रति आपकी तत्परता और अन्य सभी विशेषताएँ जो सफलता को संभव बनाती हैं, एक निजी संपत्ति है जो आपको कम सक्षम नेतृत्व, बुद्धिमत्ता अथवा तत्परता वाले लोग हैं उनके दायित्व के दायरे मे लाती हैं।

दूसरे शब्दों मे, सामाजिक न्याय का प्रत्येक पुनर्गठन इस पूर्वधारणा पर आधारित है कि व्यक्तिगत क्षमता एक सामाजिक संपत्ति है। यह पूर्वधारणा सिर्फ यह नहीं कहती है कि व्यक्ति अपनी बुद्धिमत्ता का इस्तेमाल कम सक्षम लोगों के अधिकारों को रौंदने के लिए कर सकता। न ही यह पुनर्धारणा मात्र इतना कहती है कि दयालुता या उदारता ही नैतिकता है। यह कहती है कि व्यक्तियों को स्वयं को सम्मान देना चाहिए, कम से कम उस हिस्से के लिए जिसका मतलब दूसरे लोगों की बेहतरी के लिए है। और यहाँ हम मामले की मूलबिंदु पर पहुंचे हैं। अन्य व्यक्तियों के अधिकारों का सम्मान करते हुए, मैंने जाना कि ये खुद मे ही समाप्त हो गई, जिसे मुझे सिर्फ अपनी संतुष्टि मात्र के तौर पर नहीं लेना चाहिए, जिस तरीके से निर्जीव वस्तुओं के लिए व्यवहार किया जाता है। तो फिर क्यों यह खुद को एक सीमा के तौर पर समान नैतिक रूप से महत्व दूँ?

नैतिकता के तौर पर मेरी खुद की प्रतिष्ठा को सम्मान से बाहर रखने के लिए, क्यों न मुझे, खुद को दूसरों की सेवा का जरिया बनने के सम्मान से इनकार कर देना चाहिए?

व्यक्तिवादी आचारनीति की तरफ

पूंजीवाद के लिए आयन रैंड का मामला व्यक्तिवादी आचारनीति पर ठहराव लेता है जो कि अपने स्व–लाभ के नैतिक अधिकार को आगे बढ़ाने और पर्यायवाद को मूल से इनकार करने को पहचान देता है। पर्यायवादी यह दलील देते हैं कि जीवन हमें कुछ बुनियादी चयन के साथ प्रस्तुत करता है। या तो हमें अपने लिए किसी और से बलिदान दिलवाना होगा, अथवा किसी और के लिए खुद बलिदान देना होगा।

परवर्ती परोपकार के सिद्धान्त का पाठ्यक्रम है और मान्यता है कि केवल वैकल्पिक जीवन शिकारी की तरह है। लेकिन रैंड के मुताबिक, यह गलत विकल्प है। जिंदगी को किसी भी दिशा में बलिदान की आवश्यकता नहीं होती है। विवेकशील लोगों के हित टकराते नहीं हैं। वास्तविक स्व–हित को पाने के लिए हमें दूसरों के साथ शांतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए, मतलब स्वेच्छापूर्ण आदान–प्रदान।

क्यों, यह देखने के लिए हम जानते हैं कि हम अपने हित कैसे तय करते हैं। हित वह मूल्य है जिसे हम हासिल करना चाहते हैं, जैसे धन, खुशी, सुरक्षा, प्यार, आत्म सम्मान या कोई दूसरी अच्छाई। रैंड का नैतिक दर्शनशास्त्र मौलिक मूल्य, सम्मम बोनम (सबसे बड़ी अच्छाई), जिंदगी की अंर्तदृष्टि है। यह संजीवों का अस्तित्व है, मूल्य की संपूर्ण घटना को उत्पन्न करने के लिए उनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए स्थिर कार्रवाई के माध्यम के अनुरक्षण के लिए उनकी आवश्यकताएं हैं। जीवन के बिना संसार तथ्यों का संसार है, मूल्यों का नहीं। संसार की एक ऐसी स्थिति जिसे न तो दूसरी से बेहतर कहा जा सकता है और न ही खराब। इसलिए मूल्य का मौलिक मानक वह संदर्भ है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति को तय करना चाहिए कि उसके जीवन में क्या उसके हित में है। यह एक पल से दूसरे पल तक जीना मात्र ही नहीं, बल्कि उसकी आंतरिक शक्ति के वर्तमान अभ्यास के माध्यम से उनकी जरूरतों का पूर्ण संतोष होना चाहिए।

मनुष्य की प्राथमिक सुविधा, जीवन जीने में उसके प्राथमिक अभिप्राय, कारणके लिए उसकी क्षमता। कारण ही होते हैं जो हमें उत्पादन के साथ जीने की अनुमति देते हैं और हम एकत्रित होने और भटकने के अनिश्चित स्तर से ऊपर उठ पाते हैं। कारण भाषा का आधार हैं, जो हमारे लिए ज्ञान को बांटने और सहायता करने को संभव बनाती है। संक्षेप नियमों से शासित सामाजिक संस्थानों का आधार कारण ही हैं। नैतिकता का उदेश्य हमारे जीवन की सेवा में कारण के साथ जीवन के अनुसार मानक प्रदान करना है।

कारण के साथ जीने के लिए हमें आजादी को गुण के रूप में स्वीकार करना चाहिए। कारण किसी व्यक्ति की मन की शक्ति है। हम चाहे दूसरों से कितना ही सीखें, सोचने का काम किसी एक व्यक्ति के दिमाग में ही होता है। इसकी शुरूआत हम में से प्रत्येक को स्व इच्छा से करनी चाहिए और इसका निर्देशन हमारे अपने मानसिक प्रयासों से होना चाहिए। इसलिए तर्कसंगतता के लिए जरूरी है कि हम अपने जीवन के निर्देशन और इसे संभालने के लिए जिम्मेदारी लें।

कारण के साथ जीने के लिए हमें उत्पादकता को भी गुण के रूप में स्वीकार करना चाहिए। मनुष्य दूसरे जानवरों की तरह अपनी जरूरतों के लिए प्रकृति से मिलने वाली चीजों पर निर्भर नहीं रह सकता। न ही वह परजीवियों की तरह दूसरों पर निर्भर रह सकता है।

रैंड का तर्क है कि "अगर कोई आदमी ताकत के बल पर या धोखेबाजी से जीने की कोशिश करता है, लूट कर, डाका डाल कर, धोखा देकर या किसी को दास बनाकर तो सच यही रहता है कि उसका जीवन सिर्फ पीड़ित द्वारा बनाया गया है। लुटेरे सिर्फ उन लोगों के बारे में सोचते हैं और उनका लूटते हैं। ऐसे लुटेरे जीवन से अयोग्य परजीवी होते हैं जो सिर्फ सक्षम लोगों को खत्म करके ही अस्तित्व में आते हैं। उन लोगों को जो मनुष्य होने के पूर्ण कर्म का निर्वाह कर रहे हैं।

अहंकारी को आमतौर पर ऐसा माना जाता है कि वह जो चाहता है, उसे पाने के लिए कुछ भी करेगा– ऐसा जो झूठ बोले, चोरी करे और अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए दूसरों पर हावी हो जाए। अधिकतर लोगों की तरह जीवन के इस रूप को रैंड अनैतिक कहती हैं। लेकिन उनका कारण ऐसा नहीं है जो दूसरों को चोट पहुंचाए। व्यक्तिनिष्ठ इच्छा इस बात की परीक्षा नहीं है कि क्या कुछ हमारे हित में है या नहीं। छल, चोरी और बल जीवन में खुशी और सफलता हासिल करने के लिए नहीं है। जो गुण मैंने बताए हैं वे वस्तुपरक मानक के हैं। वे मनुष्य की प्रकृति की जड़ में हैं और यह हर मनुष्य पर लागू होता है। परन्तु उनका उदेश्य हर व्यक्ति को 'अपने जीवन में उस परम आनंद को पाने, बनाए रखने और उसका अंत तक आनंद उठाने' के लिए सक्षम बनाना है। इसलिए नैतिकता का उदेश्य हमें यह बताना है कि कैसे हम अपने वास्तविक हितों को हासिल करें, नाकि उनका बलिदान करें।

व्यापारी के सिद्धांत

तो कैसे हमें दूसरों के साथ व्यापार करना चाहिए? रैंड की सामाजिक नैतिकता दो बुनियादी सिद्धांतों पर टिकी हुई है; पहली बुनियाद है अधिकारों का सिद्धांत और दूसरा न्याय का सिद्धांत। अधिकारों का सिद्धांत कहता है कि हमें दूसरों के साथ शांतिपूर्वक और स्वैच्छिक आदान प्रदान से व्यापार करना चाहिए और उनके खिलाफ किसी बल प्रयोग की शुरुआत किए बिना। इसी तरह से ही हम अपने उत्पादक प्रयासों के आधार पर स्वतंत्र रूप से रह सकते हैं। जो व्यक्ति दूसरों को नियंत्रित करके जीने का प्रयास करता है वो एक परजीवी होता है। इसके अलावा, एक संगठित समाज के भीतर अगर हम चाहते हैं कि हमारे अपने स्वयं के अधिकारों का सम्मान हो तो हमें दूसरों के अधिकारों का सम्मान भी करना चाहिए। केवल इसी तरह से हम सामाजिक संपर्क से आने वाले बहुत से लाभ प्राप्त कर सकते हैं। जैसे कि आर्थिक और बौद्धिक आदान प्रदान का लाभ प्राप्ति और साथ ही अधिक अंतरंग रिश्तों के मूल्यों के लाभ, इन लाभों के स्रोत हैं समझदारी, उत्पादकता, अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व। इन बातों में स्वतंत्रता के पनपने की आवश्यकता होती है। अगर बल द्वारा जीता हूं तो मैं मूल्यों की जड़ पर हमला करता हूँ।

रैंड, न्याय के सिद्धांत को व्यापारी सिद्धांत कहते हैं; व्यापार के द्वारा जीना, मूल्य के लिए मूल्य की पेशकश करना और न अनर्जित धन की मांग करना और ना ही देना। एक सम्माननीय व्यक्ति दूसरों पर एक दावे के रूप में अपनी जरूरतों की पेशकश नहीं करता, बल्कि वह किसी भी रिश्ते को आधार के रूप में मूल्य प्रदान करता है और ना ही वह दूसरों की जरूरतों के अनुकूल एक अचयनित दायित्व स्वीकार करता है, जो अपने जीवन की कद्र करता है वह अस्थायी जिम्मेदारी स्वीकार कर सकता है, जैसे अपने भाई का रक्षक होने के लिए। न ही एक स्वतंत्र व्यक्ति चाहेगा कि किसी मालिक द्वारा उसको रखा जाए और ना ही स्वास्थ्य और मानव सेवा विभाग द्वारा। रैंड का निरीक्षण है कि व्यापार का सिद्धांत ही एक बुनियाद है जिस पर मनुष्य एक दूसरे के साथ स्वतंत्र बराबरी से व्यापार कर सकते हैं।

संक्षेप में, निष्पक्ष नैतिकता, इस शब्द के पूरे अर्थ में एक व्यक्ति का वर्णन है जो कि स्वयं के लिए मौजूद है। निहितार्थ यह है कि पूंजीवाद ही सही और नैतिक प्रणाली है। पूंजीवादी समाज व्यक्तिगत अधिकारों की मान्यता और संरक्षण पर आधारित है। पूंजीवादी समाज में अपने मन के अभ्यास के द्वारा अपने लक्ष्य को आगे बढ़ाने के लिए मनुष्य स्वतंत्र है। किसी भी समाज में, प्रकृति के नियमों की वजह से मनुष्य को रोका गया है। खाद्य, आवास, कपड़े, किताबें और दवा पेड़ पर नहीं उगते, इसलिए उनका उत्पादन होना आवश्यक है। किसी भी समाज में मनुष्य उसकी अपनी प्रकृति की सीमाओं में बंधा होता है जो कि व्यक्तिगत क्षमता की सीमा है। जो दूसरों से सेवा की इच्छा रखते हैं उन्हें बदले में मूल्य देने की जरूरत के पूंजीवाद पर ही सामाजिक बाधा होती है। जो दूसरों का उत्पादन है, उसे जब्त करने का अधिकार किसी को नहीं दिया सकता है।

बाजार में आर्थिक परिणाम का होना, आय और धन का वितरण स्वैच्छिक कार्यों और सभी प्रतिभागियों की बातचीत पर निर्भर करता है।

न्याय की अवधारणा परिणाम पर नहीं बल्कि आर्थिक गतिविधि की प्रक्रिया पर लागू होती हैं। एक व्यक्ति की आय अगर स्वैच्छिक आदान प्रदान के माध्यम से जैसे मूल्य के इनाम की पेशकश के रूप में, और उन लोगों के न्याय से जिनको ये पेशकश की गई है, वही आय उचित होती है। माल के मूल्य के बारे में बाजार सहभागियों के निर्णय के अलावा, अर्थशास्त्रियों से लंबे समय से जान चुके हैं कि माल के लिए वाजिब कीमत जैसी कोई चीज नहीं है। यही बात मानव उत्पादक सेवाओं की कीमत के लिए भी सच है। कहने की बात ये नहीं कि मुझे अपनी अच्छाई अपनी आय से नापनी होगी, लेकिन अगर मैं दूसरों के साथ व्यापार करके जीने की इच्छा रखता हूँ तो मैं मांग नहीं कर सकता कि वे मेरी शर्तों को अपने ही स्वार्थ के बलिदान पर स्वीकार करें।

चयनित मूल्य के रूप में परोपकार

जो गरीब हैं, विकलांग हैं या वो जो स्वयं सहायता करने में असमर्थ हो, उनके बारे में क्या ? जब हम सामाजिक व्यवस्था के बारे में पूछते हैं तो ये पहला सवाल नहीं उठता, लेकिन यह भी एक वैध सवाल है। परोपकारिता की विरासत का मानना है कि प्राथमिक मानक द्वारा एक समाज का मूल्यांकन होता है, यह एक तरीका है जिससे कम उत्पादक सदस्यों से कैसे व्यवहार किया जाता है। यीशु ने कहा है, "आत्मा में धन्य गरीब हैं और

धन्य विनम्र हैं।" लेकिन गरीब या विनम्र को किसी विशेष सम्मान में या उनकी जरूरतों को प्राथमिकता के रूप में रखने की कोई बुनियाद न्याय नहीं है। एक समूहवादी समाज जिसमें कोई मुक्त नहीं है लेकिन कोई भूखा भी नहीं है और एक व्यक्तिवादी समाज जिसमें सब मुक्त है लेकिन कुछ लोग भूखे रहते हैं, अगर इन दो समाजों के बीच एक चयन करना हो तो मैं दूसरे समाज को चुनूंगा जो मुक्त है और यही नैतिक विकल्प है। भले ही अगर उसका अपना जीवन इस पर निर्भर करता हो, लेकिन कोई भी दूसरों को अनायास सेवा करने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता है।

लेकिन जो हमारे सामने है वो विकल्प नहीं है। वास्तव में, कल्याणकारी राज्य में या समाजवाद के तहत तुलना में गरीब पूंजीवाद के नीचे से ज्यादा बेहतर है। ऐतिहासिक तथ्य से, पूर्व सोवियत संघ की तरह जिस समाज में कोई भी मुक्त नहीं है, ये वह समाज है जिसमें बड़ी संख्या में लोग भूखे रहते हैं। एक बाजार क्रम में आर्थिक और तकनीकी विकास सबसे तेजी से होते हैं और जो लोग काम करने में सक्षम हैं, उन में विकास के लिए महत्वपूर्ण हित होता है। जो लोग अपने समर्थन करने के लिए हैं, वे ज्यादा उत्पादन नहीं कर सकते। उन लोगो का रोजगार पूंजी के निवेश और मशीनरी के उपयोग से संभव हो पाता है। उदाहरण के लिए, जो गंभीर रूप से विकलांग लोग है वे कंप्यूटर और संचार उपकरण के जरिए अपने घर पर ही काम कर सकते हैं।

जो लोग सरलता से काम नहीं कर सकते उन लोगों के लिए मुक्त समाज ने हमेशा बाजार के बाहर निजी सहायता और परोपकारिता कई रूपों में प्रदान की है; धर्मार्थ संगठनों, उदार समाजों और भी ऐसी सहायता मिली है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अहंकार और दान के बीच कोई विरोधाभास नहीं है। दूसरों के साथ काम करने से हमें कई लाभ होते हैं और इसी प्रकाश में अपने साथियों को इस सामान्य परोपकार की भावना में समझना स्वाभाविक है, उनके दुर्भाग्य के साथ सहानुभूति देना और हमारे खुद के हितों के बलिदान के बिना उनकी सहायता करना। लेकिन एक अहंकारी और दान के एक परोपकार के सिद्धान्त गर्भाधान के बीच प्रमुख मतभेद रहे हैं। एक परोपकार के सिद्धान्त के लिए, दूसरों के लिए उदारता एक नैतिक प्राथमिकता है और 'तब तक दें, जब तक कि ये दर्द न दें' के सिद्धांत पर बलिदान किया जाना चाहिए। किसी भी अन्य मूल्यों की परवाह किए बिना, देना एक नैतिक कर्तव्य है, और प्राप्तकर्ता को इसका अधिकार है। एक अहंकारी के लिए उदारता मूल्यों को आगे बढ़ाने के कई साधनों में से एक है और इसमें दूसरों की भलाई का मूल्य भी शामिल है। "तब दो जब मदद करे" के सिद्धांत पर, एक दूसरे के मूल्यों के संदर्भ में होना चाहिए। यह एक कर्तव्य नहीं है और न ही प्राप्तकर्ताओं को इसे करने का एक अधिकार है। सक्षम, सफल, उत्पादक या अमीर होने में दोष या संदिग्ध है, इस धारणा पर परोपकार का सिद्धान्त उदारता को अपराध की एक परिहार के रूप में मानता है। एक अहंकारी के लक्षण गुण के रूप में और उदार गर्व की अभिव्यक्ति के रूप में देखता है।

चौथी क्रांति

आरंभ में मैंने कहा कि पूंजीवाद तीन क्रांतियों, जिनका प्रत्येक के अतीत के साथ एक कट्टरपंथी तोड़ रहा, का परिणाम है। राजनीतिक क्रांति ने व्यक्तिगत अधिकारों की प्रधानता और सरकार आदमी की स्वामी नहीं बल्कि सेवक के सिद्धांत की स्थापना की। आर्थिक क्रांति बाजारों का ज्ञान लेकर आई। औद्योगिक क्रांति ने मौलिक रूप से उत्पादन की प्रक्रिया के लिए ज्ञान के अनुप्रयोग का विस्तार किया। लेकिन मानव जाति ने अपने नैतिक अतीत का साथ कभी नहीं छोड़ा। नैतिक सिद्धांत है कि व्यक्तिगत क्षमता एक सामाजिक संपत्ति है और यह सिद्धांत एक मुक्त समाज के साथ असंगत है। यदि जीवित रहना और संपन्न होना ही स्वतंत्रता है, तो हमें जरुरत है चौथी क्रांति की, एक नैतिक क्रांति जो खुद के लिए जीने के लिए व्यक्ति का नैतिक अधिकार स्थापित करती है।

खंड 3

धन का उत्पादन और वितरण

भारत की चुनौती : आर्थिक स्वतन्त्रता का असमान वितरण

पार्थ जे शाह

इस निबंध मे, थिंक टैंक प्रेसिडेन्ट और अर्थशास्त्री पार्थ जे. शाह बताते हैं कि ज़्यादातर भारतीय गरीब 1991 के सुधारों के बाद उतनी तेजी से आगे नहीं बढ़ सके जितना हो सकता था, यद्यपि सुधारों ने अमीर और माध्यम वर्ग को ज्यादा आर्थिक स्वतन्त्रता उपलब्ध कराई, मगर उन्होने लाइसेन्स के दमनकारी सिस्टम और उनके जीवन यापन क्षेत्र मे प्रतिबंध के जरिये गरीबों की स्वतन्त्रता को नजरंदाज किया।

पार्थ जे. शाह सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी के संथापक और अध्यक्ष हैं, यह दिल्ली की एक लाभ निरपेक्ष शोध एवं शैक्षिक संस्था है जो सिविल सोसायटियों को पुनर्जीवित कर भारत के सभी नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता मे सुधार के लिए तत्पर है। वह कई पुस्तकों के संपादक हैं जैसे, लॉ, लिबर्टी एंड लाईवलीहूड मेकिंग अ लिविंग ऑन द स्ट्रीट द टेरकोटा रीडर ए मार्केट एप्रोच टु द एनवायर्नमेंट और मोरैलिटी ऑफ मार्केट।

– –

"अमीर और अमीर होते जा रहे हैं और गरीब और गरीब!" यह भारत की एक सामान्य रुकावट है। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद भारत की आर्थिक स्वतंत्रता मे बड़ा बदलाव आया है, इसका असर अंदरूनी और बाहरी दोनों स्तरों पर हुआ है, अंदरूनी स्तर पर नियमों मे सुधार और लाइसेन्स की प्रतिबद्धता मे बदलाव के जरिए और बाहरी तौर पर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और विदेशी निवेश के जरिये। तथापि, बढ़ती असमानता के लिए एक अपमानजनक भावना बढ़ी, और आर्थिक स्वतंत्रता, मुक्त बाजार और पूंजीवाद के लिए नैतिकता की टिप्पणी आने लगी।

यह सच्चाई महसूस की जाने लगी कि गरीबों तक स्वतंत्रता का यह बीज पर्याप्त मात्रा मे इकट्ठा नहीं हो रहा। हालांकि, यह सच नहीं है, कि सुधारों ने साधारणतः गरीबों की हालत को बदतर किया है अथवा गरीबों के खर्च पर अमीर और अमीर होते गए हैं। वास्तव मे, भारत के गरीबों के एक बड़े हिस्से ने उदारीकरण के बाद अपने जीवन स्तर मे सुधार महसूस किया। ऐसे मे उदारीकरण के प्रभाव मे असमानता की व्याख्या कैसे हो सकती है?

इस बात मे बमुश्किल कोई संदेह है कि देश की संपन्नता बढ़ी है। सवाल यह है कि गरीबों की स्थिति मे समान सुधार क्यों नहीं आया। मेरा साधारण जवाब है कि आय और

संपत्ति मे असमानता का कारण उस आर्थिक स्वतन्त्रता मे असमानता होना है जिनका उपभोग भारत के विभिन्न समूह कर रहे हैं। जिन क्षेत्रों मे उच्च व मध्य वर्ग अपना जीवन यापन कर रहा है उसमे काफी ज्यादा आर्थिक स्वतंत्रता है, मगर जिन क्षेत्रों मे गरीब जीवन यापन कर रहे हैं उनमे कुछ नियम व निषेध हैं। उन लोगों के लिए आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ गई जो शिक्षित हैं और उनके पास पूंजी है, मगर उन लोगों की आर्थिक स्वतंत्रता मे सुधार नहीं आया जो अशिक्षित हैं और उनके पास पूंजी नहीं है। आर्थिक स्वतंत्रता का असमान वितरण ही संपन्नता के असमान वितरण की सही वजह है। इस पर विचार करना होगा कि 1991 के सुधारों मे क्या हुआ और क्या नहीं हुआ।

1991 के सुधार : कुछ लोगों के लिए पूंजीवाद

यह 1991 मे आए भयंकर आर्थिक संकट का परिणाम है कि वर्षों से चले आ रहे निषेधात्मक आर्थिक नियमों मे बदलाव किया गया। शुक्रिया, उन संचालकों का (प्रधानमंत्री नरसिंहराव और वित्त मंत्री मनमोहन सिंह) जिन्होने दिवालियापन से बचने के लिए नियमों मे बदलाव की जरूरत महसूस की। उन्होने लाइसेन्स राज को ध्वस्त करना शुरू किया– केन्द्रीय योजना का भारतीय तरीका।

यह एक आमूल–परिवर्तन की घटना थी–आधुनिक भारतीय इतिहास का दूसरा सबसे निर्धारक समय था 1947 मे आजादी मिलने के बाद। प्रतिकूल राजनीतिक बदलावों के माध्यम से भारत की बाजार शक्तियाँ मामूली रूप से अंततः उन्मुक्त हुईं। भारत की संभावनाएं, जिसे आजादी के समय तकरीबन सभी ने महसूस किया, बेइंतहा हुईं। तकरीबन 300 वर्षों से भी ज्यादा समय बाद अंततः यहाँ के लोगों को खुद संपन्नता हासिल करने की स्वतंत्रता मिली।

1991 के सुधारों ने संपत्ति बनाने और जीवन यापन की स्थिति मे सुधार के एक युग से भेंट कराया। 1991 से 2000 के बीच प्रति व्यक्ति आय (1993–94 के नियतांक रुपयों में) 7,345 से बढ़कर 10,207 रूपये तक पहुँच गई। विकास दर 3.5 से बढ़ कर दशक के अंत तक 6.3 तक पहुँच गया।

वास्तविक रूप से इसे समझने के लिए, सिर्फ एक नियम हटाई जाने वाली सेवा–टेलीफोन का उदाहरण लेते हैं। 1995 तक, 40 वर्षों से अधिक के सरकारी एकाधिकार के बाद भी, देश मे सिर्फ 9.38 मिलियन टेलीफोन कनेक्शन थे, दुनिया मे सबसे कम टेलीडेंसिटी। 2005 तक, 46.19 मिलियन फिक्स लाइन ग्राहक और 52.22 मिलियन मोबाइल फोन थे। मौजूदा समय मे 884,371,296 से भी ज्यादा मोबाइल फोन हैं और 73.44% आबादी तक इसकी पहुँच है। अब एक गली के विक्रेता द्वारा और एक किराने का समान बेचने वाले को सेल फोन पर होम डिलिवरी के ऑर्डर लेते देखना कोई असामान्य बात नहीं लगती, एक दूसरे के साथ संपर्क बढ़ाना आसान होने के साथ उनका व्यापार मे बढ़ोतरी का मौका भी बढ़ा है।

सुधारों का गरीबी स्तर पर भी नाटकीय असर दिखा है। गरीबी स्तर 1993–1994 और 1980 के तकरीबन 45% के मुकाबले 2000 मे 26% तक गिर गया। 1973–1993 के बीच, गरीबों की संख्या 320 मिलियन बनी रही। 1993–1999 के बीच इस संख्या मे 60

मिलियन की गिरावट बताई गई और कुछ अनुमानों के मुताबिक 100 मिलियन लोगों को गरीबी रेखा से बाहर किया जा सका। 2007 की मैकेन्जी ग्लोबल इंस्टीट्यूट की रिपोर्ट के मुताबिक, "जब हम जनसंख्या वृद्धि के नजरिए से देखते हैं तो, कुछ 431 मिलियन लोग अब भी गरीबी के पहले वाले स्तर को जारी रखे हुए हैं। इन तथ्यों को देखते हुए आर्थिक सुधारों को भारतीय इतिहास का सबसे बड़ा गरीबी विरोधी अभियान कह सकते हैं। अगर मौजूदा विकास दर आगे भी जारी रही तो अगले दो दशकों मे 291 अन्य लोगों के भी गरीबी रेखा से बाहर आ जाने की उम्मीद है।

इन सुधारों की जो इकलौती सबसे बड़ी असफलता है, वह है सुधारों के तर्क का तीन महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर लागू कर पाने मे अक्षमता, ये हैं; कृषि, उत्पादन और सेवाएँ। सेवा क्षेत्र–आईटी, टेलीकॉम, एयरलाइन, बीमा और बैंकिंग–मे सबसे ज्यादा सुधार देखा गया। उत्पादन के क्षेत्र मे कुछ सुधार दिखे, मगर कृषि के क्षेत्र मे शायद ही कोई सुधार दिखा। अधिकतर सेवा क्षेत्र और पूंजी आधारित उत्पादन क्षेत्र खासतौर से शिक्षित वर्ग के लिए हैं, और ये ही वह वर्ग है जिसने भारत मे सुधार के बाद सबसे बेहतर प्रदर्शन किया। तो कम शिक्षित अथवा बिना पूंजी वाले लोग अपना जीवन यापन कहाँ से कर रहे हैं?

व्यापक सुधार : आम जनता के लिए पूंजीवाद

गरीबी मे कमी की अच्छी खबर के बावजूद, यह स्वीकार करने के पर्याप्त कारण उपलब्ध हैं कि ज्यादा गरीब लोग उतनी तेजी से आगे नहीं बढ़ सके जितनी तेजी से उन्हें बढ़ना चाहिए था। इसके लिए पूंजीवाद को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है, बल्कि कमियां जिम्मेदार हैं। गरीब अब भी निष्ठुर लाइसेन्स–परमिट–कोटा राज मे जीने को मजबूर हैं।

वे तीन मुख्य क्षेत्र हैं, जिनके जरिये भारत मे गरीब लोगों का जीवन यापन हो रहा है, इनमे शहरी अनियमित क्षेत्र, कृषि क्षेत्र और प्रकृतिक संसाधन, जंगलों पर निर्भर आबादी, जैसे कि आदिवासी। इन क्षेत्रों मे सबसे कम अथवा शून्य के बराबर आर्थिक स्वतन्त्रता अथवा बाजार आधारित सुधार दिखाई देते हैं।

रेहड़ी पटरी के उद्यमी; लाइसेन्स राज, अनौपचारिकता और गैर इरादतन परिणाम शहरी क्षेत्र मे आर्थिक स्वतन्त्रता का असमान वितरण समझें। एक फैक्ट्री अथवा कॉल सेंटर खोलने के लिए लाइसेन्स की जरूरत नहीं होती है। लेकिन अगर कोई एक चाय की दुकान खोलना चाहता है, स्ट्रीट हॉकर बनना चाहता है, साइकल रिक्शा चालक बनना चाहता है, अथवा एक कूली बनना चाहता है तो उसे लाइसेन्स की जरूरत पड़ती है। शुरुआती स्तर के व्यवसाय, जिसमे कम कौशल और थोड़ी पूंजी की जरूरत होती है, के लिए अब भी लाइसेन्स जरूरी है। इनमें से कुछ के लाइसेन्स की संख्या तो 30–40 साल पहले फिक्स की गई थी और इनमे अब तक कोई बदलाव नहीं किया गया। शुक्र है, इस तरह के निषेध छोटे–स्तर के उद्यमों को बंद नहीं करते। अगर ये ऐसा करने मे सक्षम होते तो लाखों अन्य लोगों को भी असमान वितरण मे खींच लेते। यद्यपि ये, स्ट्रीट व्यवसायियों को अवैध या अनौपचारिक रूप से कार्य करने से रोकते हैं। ये औपचारिकताएँ इन्हें पुलिस और नगर निगम अधिकारियों द्वारा उत्पीड़ित किए जाने

अथवा रिश्वत देने को मजबूर बनाती हैं। अकेले दिल्ली मे, 600,000 हॉकर औसतन 200 रुपये प्रति माह रिश्वत देते हैं, यानि कुल 12 मिलियन प्रति माह! यह दिल्ली के सबसे गरीब लोगों पर लाइसेन्स–राज, आर्थिक अस्वतंत्रता का बोझ है।

यहाँ तक कि रिश्वत देने के बावजूद, वेंडर अवैध ही रहते हैं। यह सबसे बड़ी विडम्बना है। नगर निगम अधिकारियों के छापे के डर से वेंडर अपना व्यवसाय बढ़ा नहीं पाते हैं। अगर हॉकर अधिक सामान बेचने के लिए थोड़ी ज्यादा जगह घेर लेता है तो, निगम की गाड़ी आने पर उसे सब कुछ समेटकर भागना पड़ता है। हॉकर सिर्फ अपनी बांह के प्रसार तक ही अपना व्यवसाय बढ़ा सकता है! उसके व्यापार का आकार छोटा रखने को मजबूर कर हम उसे सीमित दायरे वाले जीवन यापन को मजबूर करते हैं।

दमघोंटू लाइसेंसिंग सिस्टम के अलावा, अनगिनत नियम और अधिनियम आगे रुकावटें लाते हैं। हालांकि, इनमे से अधिकतर नियमों का उद्देश्य अच्छा है, मगर इनका परिणाम विपरीत दिखता है। उदाहरण के तौर पर, दिल्ली मे साइकल रिक्शा मालिक और रिक्शा चालक दोनों एक ही व्यक्ति होना चाहिए। दूसरे शब्दों मे, रिक्शा किराए पर लेना–देना अवैध है। इस नियम का उद्देश्य मालिकाना अधिकारों को प्रोत्साहन देना और बिचौलियाँ द्वारा शोषण को नियंत्रित करना है।

इन नियमों का वास्तविक असर देखते हैं। अधिकतर रिक्शा चालक मौसमी प्रवासी होते हैं। वे ऐसे समय मे शहर आते हैं जब उनके पास काम नहीं होता, ताकि कुछ पैसा कमा कर वापस खेतों मे मजदूरी करने लौट सकें। ऐसे मे उनके लिए आर्थिक रूप से यह संभव नहीं है कि हर कुछ महीने बाद वे रिक्शा खरीदें और फिर बेचें। अगर मान लो किसी तरह एक गरीब आदमी रिक्शा खरीद भी लेता है तो उस स्थिति मे क्या होगा जब उसे कुछ महीनो के लिए अपने गाँव वापस जाना पड़ा? इन महीनों के लिए वह अपना रिक्शा किराए पर नहीं दे सकता। अधिक से अधिक, एक व्यक्ति 12 से 15 घंटों के लिए रिक्शा खींच सकता है, ऐसे मे इसे पूरे दिन के लिए किराए पर नहीं दिया जा सकता है। एक अमीर आदमी की पूंजी –एक कॉल सेंटर– 24 घंटे तक काम कर सकता है, लेकिन एक गरीब आदमी की पूंजी –एक रिक्शा– नहीं कर सकता। अगर वह बीमार हो जाता है तो उसका रिक्शा ठप पड़ जाएगा। वह जिस काम के बारे मे जानता है, उसे वह बढ़ा नहीं सकता– वह ज्यादा रिक्शा नहीं खरीद सकता, क्योंकि वह इसे किराए पर नहीं दे सकता। ऐसे मे उसकी आय हमेशा उतनी ही सीमित रह जाती है, जितनी कि स्वस्थ रहने की दशा में प्रतिदिन 12 से 15 घंटें तक रिक्शा चला कर वह कमा सकता है। अब हम यह समझ सकते हैं कि वह गरीब क्यूँ है!

रिक्शा को किराए पर देने के प्रतिबंध के नियम का आगे क्या विपरीत असर होता है। किराया जितना होना चाहिए उससे कहीं ज्यादा है। किराए मे अवैध रूप से रिक्शा चलाने के खतरे का प्रीमियम भी शामिल हो जाता है, इसके साथ ही इसकी आपूर्ति भी जरूरत की तुलना मे कम रहती है क्योंकि ईमानदार लोग अवैध कारोबार को बढ़ावा देना पसंद नहीं करते। यहाँ तक कि एक एनजीओ, एक लाभ निरपेक्ष संस्था भी कम पैसों में रिक्शा किराए पर नहीं दे सकती। परिणामस्वरूप, पाँच महीने के लिए रिक्शा किराए पर लेने पर लगभग उतना ही खर्च आ जाता है जितने में नया रिक्शा आ जाता

है। एक नियम जिसे गरीब को लाभ पहुंचाने के लिए बनाया गया, वह उन्हीं को हर तरह से नुकसान पहुंचा रहा है, जैसा कि अनभिप्रेरित परिणामों का पूर्वानुमान लगाया गया था।

रिक्शा के विकल्प को सिर्फ उन गरीबों तक सीमित क्यूँ कर दिया गया जिनके पास इन्हें खरीदने के लिए पर्याप्त पैसा नहीं है? यह उनके लिए सही कैसे हो सकता है? क्या सच मे रिक्शा चालक भारत के उदारीकरण और वैश्वीकरण की वजह से गरीब है? क्या उनके खर्च पर अमीर लोग ज्यादा अमीर हो रहे हैं? अथवा उन्हे जीवन यापन के लिए हमारे द्वारा प्रवेश स्तर के व्यवसाय तक सीमित रहने हेतु बाध्य करना है?

भोजन का उत्पादन करने वालों के भूखे रहने का विरोधाभास

ग्रामीण गरीब जिसका जीवन यापन कृषि से होता है, बेहतर स्थिति मे नहीं है। भारत मे कृषि वह क्षेत्र है जिसमे सबसे कम सुधार हुआ है। अधिकतर कृषि उत्पादित वस्तुएँ पूरे जिले तक नहीं पहुँच पातीं, राज्य और देश की सीमा तो बहुत दूर की बात है। महाराष्ट्र मे एक नियम है जिसके तहत किसानों के अपना गन्ना जिले के विशेष मिल मे ही बेचना अनिवार्य होता है। केरल मे, एक बार अगर कोई खेत किसी खास फसल की उपज के लिए रजिस्टर हो जाता है तो बिना सरकारी अनुमति के उसमे बदलाव नहीं किया जा सकता है। हाल ही मे, केरल मे देखा गया कि जब किसानों ने धान की जगह गन्ना उगाया तो यूनियन कार्यकर्ताओं ने उनकी फसल को जड़ से उखाड़ डाला। धान और गन्ना किसान अलग–अलग यूनियन से संबन्धित होते हैं और यूनियन फसल मे बदलाव को प्रोत्साहित नहीं करती है।

सरकार प्रभावी रूप से किसानों को उनकी सबसे आवश्यक वस्तुएँ देती है–बिजली, पानी, बीज–और फिर मूल्य, स्टोरेज और यातायात को नियंत्रित करती है और यह तय करती है कि इसे किसको बेचना है। किसानों को उनकी फसल राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत थोक बाजार मे बेचना जरूरी होता है –कृषि उत्पादित विप्पणन कमिटी (एपीएमसी)– जहां सिर्फ कुछ लाइसेन्स एजेन्टों को दाम लगाने की अनुमति है, इससे किसानों को मिलने वाली कीमत कम होती है। अनिवार्य वस्तु अधिनियम, एक अन्य कठोर नियम, कृषि उत्पादों को आवश्यक की श्रेणी मे शामिल करता है, इन उत्पादों को अपनी गरीबी मिटाने के लिए उत्पादक स्थायी तौर पर प्रतिबंधित नहीं कर सकता है। एक औसत अनुमान के मुताबिक, 30% तक कृषि उत्पाद थाली तक पहुँचने से पहले ही सड़ जाता है। बावजूद इसके, अब तक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, जो कि स्टोरेज के सिस्टम को आधुनिक बना सकता है, अब तक प्रतिबंधित है।

आदिवासी बनाम बाघ, राष्ट्रीय बनाम जनजातीय विकास : मिथ्या संघर्ष

बाघ संरक्षण के नाम पर, आदिवासियों को उन जंगली स्रोतों के इस्तेमाल की आर्थिक स्वतन्त्रता प्रतिबंधित की जाती है जिसे उन्होने सदियों से संभाला है और जो उनका घर रहा है। यहाँ तक कि एक मामूली जंगली उत्पाद बांस भी उनकी पहुँच मे नहीं है।

भारतीय जंगल अधिनियम के मुताबिक बांस एक वृक्ष है, ऐसे मे फॉरेस्ट डिपार्टमेन्ट को इसका इस्तेमाल नियंत्रित करने का अधिकार है। वानस्पतिक रूप से बांस एक घास है, एक नवीनीकरण योग्य स्रोत। अगर कानून मे इस तथ्य को मान्यता दी जाती तो, आदिवासी अपने जीवनयापन के लिए बेहतर अर्जन करने मे सक्षम होते, साथ ही बांस को लकड़ी मे तब्दील होने से भी बचा सकते। साथ ही, कुछ देशों, जैसे कि नेपाल और जिम्बाब्वे जैसे देशों मे देखा गया है, कम्यूनिटी फॉरेस्टी असल मे जंगल और इसकी प्रजातियों का बेहतर संरक्षण करती है, इसके साथ ही आदिवासियों को जीवनयापन की स्वतन्त्रता भी देती है।

भारत मे आदिवासी इलाकों की भूमि मे सबसे ज्यादा खनिज व प्रकृतिक स्रोत हैं। सरकार ने राष्ट्रीय अथवा आदिवासी विकास के गलत द्विगुणों के तहत इन स्रोतों का राष्ट्रीयकरण कर दिया है। अगर इन स्रोतों पर आदिवासियों के अधिकारों को मान्यता मिलती है तो इससे राष्ट्रीय विकास कैसे आहत होगा? आदिवासी इन स्रोतों के साथ क्या करते? प्राथमिक फर्क ये होता कि सरकार के बजाय आदिवासी इन स्रोतों के लिए निविदा आमंत्रित करते और स्रोतों को ढूँढने और खनन के लिए अनुबंध करते। इससे आदिवासी लाभ प्राप्त करते और सरकार को इसपर टैक्स मिलता–ठीक उसी तरह जैसे नारायण मूर्ति ने इन्फोसिस शुरू किया। आदिवासी विकास राष्ट्रीय विकास के विरुद्ध कैसे हो सकता है?

आदिवासी, ग्रामीण और शहरी अनौपचारिक समुदाय बेहतर नहीं कर पा रहे क्योंकि ये जिन क्षेत्रों से अपनी जीविका कमाते हैं उनके उदारवाद के लिए पर्याप्त सुधार नहीं हुआ है। उनकी समस्या की एक वास्तविक समझ यह स्पष्ट सुझाव देती है कि आर्थिक स्वतन्त्रता की कमी जिन बेड़ियों मे 1991 के सुधारों से पहले औपचारिक क्षेत्र जकड़े हुए थे उनमे निम्न आय वर्ग आज भी फंसा हुआ है।

संयुक्त विकास के लिए जरूरी है संयुक्त सुधार

आर्थिक और अनुभविक प्रमाण यह स्पष्ट दिखाते हैं कि गरीबी के निर्मूलन के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता सबसे आवश्यक है। 1991 के सुधारों ने औपचारिक औद्योगिक क्षेत्रों के लिए जो किया वही सुधार आदिवासी, ग्रामीण और शहरी अनौपचारिक समुदायों के लिए भी होना चाहिए। संयुक्त विकास के लिए संयुक्त सुधार जरूरी है।

असमानता को लेकर चिंतित ना हों

स्वामीनाथन एस अंकलेसरिया अय्यर

इस निबंध मे, सफल स्तंभकार और टेलीविजन कमेंटेटर स्वामीनाथन अय्यर, अवसरों मे समानता बनाम परिणामों मे समानता के बीच भेद पर चर्चा की है और इस बात से संबन्धित तर्क प्रस्तुत किए हैं कि परिणामों की समानता का माप आर्थिक सुख का सबसे उपुक्त माप नहीं होता।

स्वामीनाथन टाइम्स ऑफ इन्डिया मे प्रकाशित होने वाले एक लोकप्रिय साप्ताहिक स्तम्भ स्वामीनोमिक्स के लिए प्रसिद्ध हैं। वह केटो इंस्टीट्यूट के रिसर्च फेलो भी हैं जिसका केंद्र बिन्दु भारत और एशिया है। इनके शोध अभिरुचियों मे विकासशील देशों मे आर्थिक बदलाव, मानवाधिकार और नागरिक विवाद, राजनीतिक अर्थशास्त्र, ऊर्जा, व्यापार एंव उद्योग जैसे विषय शामिल हैं। वह स्केप फ्रॉम द बनेव्लंट जूकीपर्स– द बेस्ट ऑफ स्वामीनोमिक्स के लेखक हैं। वह इकनॉमिक टाइम्स और फाइनन्शियल एक्सप्रेस के एडिटर रह चुके हैं, और दो दशकों तक द इकोनोमिस्ट के भारतीय कोरेस्पोंडेंट रहे हैं। वह विश्व बैंक और एशियन विकास बैंक के कई बार सलाहकार रहे हैं।

यह लेख द इकोनोमिक टाइम्स (भारत) मे 11 मई 2011 को प्रकाशित हुआ था।

– –

अगर लोग पूरी तरह स्वतंत्र हों, तो सबसे ज्यादा बुद्धिमान और किस्मत वाले सबसे कम बुद्धिमान और बदकिस्मत लोगों के मुकाबले बहुत ही ज्यादा अमीर होंगे। ऐसे मे स्वतन्त्रता असमानता को बढ़ावा देगी। वामपंथी देश सर्वसत्तावदी नियंत्रण के माध्यम से परिणामों मे बराबरी की कामना की, मगर यह ढोंग था। यहाँ उन लोगों की शक्तियों मे कोई बराबरी नहीं थी जो या तो नियमों को तोड़ते थे अथवा जिनपर अनिवार्य रूप से इनके पालन का दबाव डाला जाता था। स्वतन्त्रता और समानता के मध्य तनाव को कम करने हेतु, देश आमतौर पर अवसरों की समानता की कामना करते हैं न कि परिणामों की। परिणामों के संदर्भ मे अर्थशास्त्रियों द्वारा किए गए मापन के मुताबिक, यद्यपि असमानता तकरीबन हर तरफ है लेकिन अवसरों की नहीं। इससे एक असत्य सा डाटा मिलता है और आंकलन दोषपूर्ण होता है।

साथ मे दिये गए टेबल मे उपभोग के संदर्भ मे 6 सबसे ज्यादा बराबरी वाले अथवा असमानता वाले देश लिस्ट किए गए हैं, गिनी कोएफिशिएंट द्वारा आंकलन, समानता का

स्तरमान सांख्यिकीय माप अनुक्रम 0 से 1 है। 1 का ऊंचा गिनी मतलब पूरी असमानता और जीरो का सबसे कम गिनी का मतलब है पूरी समानता।

मुख्य राज्यों का गिनी कोएफिशिएंट, 2004–05

ग्रामीण	शहरी
बिहार	0.17 0.31
असम	0.17 0.30
झारखंड	0.20 0.33
राजस्थान	0.20 0.30
यूपी	0.23 0.34
एमपी	0.24 0.37
गुजरात	0.24 0.32
पंजाब	0.26 0.32
तमिलनाडु	0.26 0.34
महाराष्ट्र	0.27 0.35
केरल	0.29 0.35
हरियाणा	0.31 0.36
पूरा भारत	0.25 0.35

नाटकीय रूप से, सबसे ज्यादा उपभोग समानता वाले क्षेत्र (अन्य शब्दों मे, कम से कम ग्रामीण गिनीज के साथ) सबसे गरीब हैं। बिहार और असम सबसे ज्यादा समान हैं सिर्फ 0.17 गिनीज के साथ। लेकिन क्या ये सबसे ज्यादा निष्पक्षता और सुख वाली जगह के तौर पर प्रतिनिधित्व करते हैं? बिल्कुल नहीं, इन्होंने दशकों तक भयंकर गरीबी, खराब शासन प्रणाली और धीमी विकास दर झेली है। शासन प्रणाली की यह असमानता–और अवसरों की असमानता–डाटा मे शामिल नहीं किया गया है।

हाल मे बिहार के विकास दर मे काफी वृद्धि हुई है और नितीश सरकार की अगुआई मे वहाँ शासन तंत्र भी सुधरा है। जब 2009–2010 का डाटा जारी होने पर, यह स्पष्ट दिखेगा कि बिहार मे उपभोग की असमानता बढ़ी है। विश्लेषक इसे निष्पक्षता बढ़ने का लक्षण होना खारिज कर सकते हैं, मगर ऐसा करना निरर्थक होगा। गरीब राज्यों के पदस्थ मुख्यमंत्री (जैसे कि बिहार, ओडिसा, छत्तीसगढ़) विकास दर बढ़ने की वजह से बदतर गिनीज के बावजूद आमतौर पर चुनाव मे दोबारा चुनकर सत्ता मे आ जाते हैं। ऐसे राज्यों मे, सुधार के अवसर सुधरे हैं, और यह परिणाम की समानता से अधिक मायने रखता है।

ग्रामीण गिनी के मामले मे सबसे ज्यादा असमानता वाले राज्य सबसे अमीर हैं। हरियाणा 0.31 से सबसे आगे है, इसके बाद केरल (0.29), महाराष्ट्र (0.27), तमिलनाडु (0.26), पंजाब (0.26) और गुजरात (0.25) है। गरीब राज्यों मे उपभोग असमानता तकरीबन सदा एक सा नीचे है (और अमीर राज्यों मे करीब–करीब सदा एक सा ऊपर है) सम्पूर्ण भारत का औसत 0.25 है। इस तरह की समानता निष्पक्ष या संतुष्टिप्रद से अधिक तनाव वाला होता है। लोग तकरीबन समान लेकिन गरीब राज्यों से दूर प्रवास

करने जाते हैं ऐसे राज्यों मे जहां समान असमानता है लेकिन ये अमीर राज्य हैं। लोग गाँव से भी प्रवास करते हैं (जो कि अपेक्षाकृत समान हैं) शहरों मे (जो कि उपभोग के संदर्भ मे अपेक्षाकृत आसमान हैं)। जिन जगहों पर अमीर और गरीब के बीच फर्क सबसे ज्यादा है वहाँ प्रवासियों से लाभ बढ़ रहा है। ऐसे मे विश्लेषक इस बात को खारिज करते हैं कि राज्यों के बीच असमानता प्रवास से लौटने, गरीबों प्रवासियों के लिए अधिक अवसर मुहैया करने के लिए जिम्मेदार है।

टेबल मे जो लोगों को सबसे ज्यादा चकित करने वाली बात है, वह है केरल, यह खुद को सबसे पुराना गौरवशाली उदारवादी, समाजवादी स्वरूप वाला मानता है, लेकिन यह ग्रामीण उपभोग असमानता (0.29) के मामले मे ऊपर से दूसरे पायदान पर है। इस माप से, यह बिहार और उत्तर प्रदेश से कहीं ज्यादा खराब स्थिति मे है!

केरल मे वस्तुतः विप्रेषित धन वाली अर्थव्यवस्था है (राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का एक चौथाई भेजे हुए धन से आता है), और जो स्पष्ट रूप से विप्रेषित धन प्राप्त करते हैं। केरल भारत का सबसे अच्छा सामाजिक सूचकांक है, जिसका मतलब है अवसरों मे सबसे अधिक समानता। लेकिन यह आय कि समानता मे नहीं बदलता है, जबकि इसके पीछे कोई कारण नजर नहीं आता है। बावजूद इसके बिहार और उत्तर प्रदेश की तुलना मे केरल रहने के लिए अपेक्षाकृत बेहतर जगह है, क्योंकि यहाँ अपनी कुशलता बढ़ाने के अवसर अधिक हैं, जो कि बाजार मे टिके रहने और आय मे बढ़ोतरी के लिए महत्वपूर्ण है, और यह वह चीज है जो वास्तव मे मायने रखती है।

हरियाणा मे ग्रामीण उपभोग मे सबसे ज्यादा असमानता है। दिल्ली से इसकी नजदीकी ने यहाँ की भूमि की कीमत करोड़ों रुपये प्रति एकड़ तक बढ़ा दिया है, और इसने बड़े किसानों को धनाढ्य बना दिया है। इसी प्रक्रिया ने एक–एकड़ जमीन वाले किसानों को भी करोड़पति बना दिया है, ऐसे मे गिनीज के मापन मे कुछ गलतियाँ हो सकती हैं। मगर इसे विडम्बना ही कहेंगे, कि ये असमान एक–एकड़ भूमि वाले किसान भी बहुत सारे ऐसे शहरी लोगों की तुलना मे भी कहीं ज्यादा अमीर हैं, जो एक लाख रूपये तक महीना कमाते हैं, लेकिन उनके पास कोई अचल संपत्ति नहीं है।

जैसा कि टेबल मे दिखाया गया है, शहरी इलाकों के गिनीज के मामले मे राज्यों के बीच मे ज्यादा फर्क नहीं है। भारत मे अधिकतर प्रवास अंतःर्राज्यीय होता न कि अंतर्राज्यीय। अधिकतर गरीब ग्रामीण अपने नजदीकी शहरों मे जाते हैं ताकि उन चंद भूमिहार धनाढ्य और ताकतवर लोगों की निर्दयता से बच सकें, जिनके हाथ मे पुलिस और आयकर अधिकारी होता है और उनके सहारे वे गरीब ग्रामीणों को ऊपर नहीं उठने देना चाहते।

प्रवास प्रायः होता है, लेकिन इसे परेशानी के लक्षण के तौर पर गलत देखा जाता है। वास्तव मे, यह अवसरों की नई पहचान का लक्षण है। बिहार के पिछले राज्य स्तरीय चुनाव मे, राहुल गांधी ने रैलियों मे कहा कि बिहार की स्थिति नितीश कुमार की अगुआई मे बदतर हुई है, क्योंकि लोगो ने यहाँ से प्रवास किया है। मगर मतदाताओं ने उनकी इस दलील को दरकिनार कर कॉंग्रेस को सिर्फ 4 सीटों तक सीमित कर दिया।

निश्चित तौर पर ऐसे देश हैं (खासतौर से अफ्रीका), जहां उपभोग की असमानता परेशानी और अन्याय का लक्षण हो सकती है। लेकिन भारत मे, दोनों सबसे बेहतरीन अवसरों वाली अर्थव्यवस्था (महाराष्ट्र और गुजरात मे) और बेहतरीन सामाजिक संकेतक (केरल मे) आसमान परिणामों के मामले मे अग्रणी हैं।

यह कहना आसान है कि, दूसरी चीजें बराबर हैं, कम आय से बेहतर है ज्यादा आय वाली असमानता। मगर अन्य चीजें समान नहीं हैं, क्योंकि अवसरों की समानता मे बढ़ोतरी परिणामों मे असमानता को बढ़ा रही है। हमे गिनी कोएफिशिएंट को निष्पक्षता का मापक मानने से परित्याग करना होगा, और एक ऐसा मापक बनाना होगा जो अवसरों की समानता और योग्यता के आधार पर आपको अपने पड़ोसी से अधिक अमीर बनने की स्वतन्त्रता मुहैया कराए। जिस तरह से सकल घरेलू उत्पाद संपन्नता का एक अधूरा मापक है, ठीक उसी तरह आय की समानता निष्पक्षता की एक अधूरी मापक है।

बाजार आधारित अर्थव्यवस्था और धन का वितरण

लुडविग लैचमन

इस निबंध में, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री लुडविग लैचमन मुक्त बाजार पूंजीवाद के सामाजिक न्याय की प्रत्यालोचना की जाँच करते हैं और इसकी संबद्धता के बारे में तर्क करते हैं। वह भस्वामित्व और "धन" के बीच अंतर बताते हैं और स्पष्ट करते हैं कि कैसे बाजार के माध्यम से धन के भारी पुनर्वितरण के साथ संपत्ति (स्वामित्व) के लिए सम्मान के मेल के योग्य होता है। यह निबंध पूंजीवादी आदेश में सामाजिक और आर्थिक गतिशील प्रकृति को समझने के लिए महत्वपूर्ण है।

लुडविग लैचमन (1906–1990) ने बर्लिन विश्वविद्यालय में पी.एच.डी प्राप्त की। उन्होंने इंग्लैंड के लिए 1933 में जर्मनी छोड़ दिया, जहाँ उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स में अपना अनुसंधान जारी रखा। लैचमन ने अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र की प्रणाली संबंधी नींव, और पूंजी, आर्थिक विकास के सिद्धांत में महत्वपूर्ण योगदान दिया। पूंजी और इसकी संरचना, मैक्स वेबर की विरासत, लघु आर्थिक सोच और बाजार अर्थव्यवस्था, पूंजी, उम्मीदें और बाजार प्रक्रिया और एक आर्थिक प्रक्रिया के रूप में बाजार, ऐसी किताबों के वह लेखक थे।

यह निबंध 1956 के मूल प्रकाशन का एक संक्षिप्त संस्करण है।

— —

जैसे प्रोफेसर माइसेस ने तीस साल पहले कहा कि एक राजनीतिक प्राधिकारी द्वारा हर हस्तक्षेप अपरिहार्य आर्थिक नतीजों को रोकने के लिए एक और हस्तक्षेप को उक्त प्रकार स्थिर करता है, अब इसमें संदेह कौन कर सकता है? "नियंत्रित मुद्रास्फीति" का विषैला प्रभाव आज कौन नहीं जानता और एक निर्देशित अर्थव्यवस्था को मुद्रास्फीति के माहौल में काम करने की जरुरत है, इस बात से कौन इंकार करेगा? हालांकि कुछ अर्थशास्त्रियों ने प्रशंसात्मक शब्द "धर्मनिरपेक्ष मुद्रास्फीति" का आविष्कार किया है। स्थाई मुद्रास्फीति का वर्णन करने के लिए जो हम अच्छी तरह से जानते हैं, कोई धोखा खाए इसकी संभावना नहीं है। एक बाजार अर्थव्यवस्था में यहां तक कि प्रतिकूल परिस्थितियों में, प्रशासनिक रूप से नियंत्रित अराजकता के बाहर क्रम उत्पन्न करेगा, यह बताने के लिए हाल ही में दिए गए जर्मन उदाहरण की बिलकुल आवश्यकता नहीं है । स्वैच्छिक सहयोग पर आधारित आर्थिक संस्था का एक रूप और वैश्विक विनिमय का ज्ञान किसी पदानुक्रमिक ढांचे से अनिवार्य रूप से श्रेष्ठ है, भले ही यह नियंत्रकों की

योग्यता की तर्कसंगत परीक्षा ही क्यों न हो। कारण और अनुभव से जो सीख पाते हैं, वह पहले से परिचित होते हैं और जो नहीं होते हैं वे अब भी नहीं सीख सकते।

इस स्थिति में, बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के विरोधियों ने अपने विरोध के आधार में परिवर्तन कर लिया है। अब वे इसका विरोध आर्थिक आधार पर नहीं बल्कि "सामाजिक आधार" पर करते हैं। अकुशल होने के बजाय वे इसे अन्यायपूर्ण होने का आरोप लगाते हैं। अब वे धन के स्वामित्व के "विकृत प्रभाव" पर ध्यान केन्द्रित करते हैं और "बाजार का जनमत संग्रह बहुमत के द्वारा बह रहा है" वे दावे के साथ कहते हैं। वे बताते हैं कि धन के वितरण का उत्पादन और आय वितरण पर असर पड़ता है, चूंकि धन के स्वामी को सामाजिक आय का "अनुचित हिस्सा" ही नहीं मिलता लेकिन छोटे उत्पादों की रचना पर भी प्रभाव डालते हैं विलासिता ज्यादा होती है और जरूरतें कम। इससे भी ज्यादा चूंकि इन मालिकों के पास बचत नहीं होती है इसलिए वे पूंजी संचय की दर और इसी प्रकार आर्थिक प्रगति का पता लगा लेते हैं।

इन विरोधियों में से कुछ एक साथ इंकार नहीं करते कि आर्थिक बलों के खेल के संचित परिणाम में धन के वितरण में अर्थ है लेकिन इस संचय संचालन को ऐसे रूप में संभालते हैं कि वर्तमान भूतकाल का दास बन जाए और वर्तमान में एक मनमाना कारक। आज की आय वितरण को आज के धन वितरण से आकृति दी गई है और यहां तक कि आज के धन को पिछले कल में आंशिक रूप से संचित किया गया था, इसे पिछले कल से पहले के दिन के धन वितरण के प्रभाव की प्रक्रिया द्वारा संचित किया गया था। मुख्य रूप से बाजार अर्थशास्त्र के विरोधियों के यह तर्क 'विरासत' के संस्थान पर आधारित हैं जिनके बारे में हमें बताया गया है कि एक प्रगतिशील समाज में मालिकों के बहुमत के पास धन होता है।

इस तर्क को आज व्यापक रूप से स्वीकार कर लिया गया है, उनके द्वारा भी जो वास्तव में आर्थिक आजादी के पक्षमें हैं। ऐसे लोग मान रहे हैं कि आर्थिक परिणामों में 'धन का पुर्नवितरण' उदाहरण के लिए मृत्यु निर्वाह द्वारा सामाजिक रूप से वांछित होता लेकिन लाभकारी नहीं होता। इसके विपरीत आज की जरूरतों से आज की आय का सामंजस्य बिठाने में अतीत के 'मृत हस्त' से वर्तमान में मुक्त मदद के माप हैं। धन का वितरण बाजार का डाटम है और डेटा बदलकर हम बाजार के तंत्र में हस्तक्षेप किए बिना परिणाम बदल सकते हैं। इससे पता चलता है कि मौजूदा धन के पुर्नवितरण की निरंत. रता के लिए बनाई गई नीति के साथ होने पर ही बाजारकी प्रक्रिया को "सामाजिक रूप से स्वीकार्य' परिणाम कहा जा सकता है। जैसा कि हमने कहा, यह विचार कई लोगों द्वारा स्वीकार किया गया है और कुछ अर्थशास्त्री जो निर्देशित अर्थशास्त्र पर बाजार अर्थव्यवस्था की विशिष्टता और हस्तक्षेपवाद की खिन्नता को समझते हैं, उनके द्वारा भी माना गया है, लेकिन जिसे वे बाजार अर्थव्यवस्था के सामाजिक परिणाम मानते हैं, उन्हें नापसंद करते हैं। वे बाजार अर्थव्यवस्था को तभी स्वीकारने को तैयार हैं जब संचालन ऐसे पुर्नवितरण की नीति के साथ होता है।

यह लेख इसी विचार के आधार पर आलोचना को समर्पित है।

पहले 'डाटम' शब्द के महत्वाकांक्षी अर्थ से पैदा होने वाले मौखिक भ्रम के तर्क पर पूरा अर्थ टिका है। साधारण इस्तेमाल में 'डाटम' का अर्थ कुछ है, किसी खास समय पर

स्थिति समझने के लिए दिया गया है। इस स्थिति में निश्चित रूप से स्वयंसिद्ध सत्य दिए गए समय पर एक डाटम धन के वितरण का रूप है, इसका अस्तित्व सीधे नगण्य रूप में है और किसी रूप मे नहीं। लेकिन संतुलन सिद्धान्तों में अच्छा हो या बुरा, आज की अर्थव्यवस्था के विचार का अभिप्राय होना चाहिए और इसकी सामग्री विशाल रूप से अकृत होनी चाहिए। 'डाटम' शब्द ने दूसरा और बहुत अलग अर्थ अर्जित कर लिया है। यहां डाटम के अभिप्राय के लिए संतुलन की अनिवार्य शर्त, एक स्वतंत्र अस्थिर होना चाहिए, और डेटा का सामूहिक अर्थ आवश्यकता और पर्याप्त शर्तों का कुल योग है जिससे हम आगे बिना कुछ जोड़े सम मूल्य और मात्रा निकाल सकते हैं। इस दूसरी धारणा में धन का वितरण दूसरे डेटा के साथ एकत्र कर, निर्धारक बनाकर हालांकि न सिर्फ विभिन्न सेवाओं और खरीदे बेचे गए उत्पादों की मात्रा और मूल्य का निर्धारक है। हालांकि इस लेख में हमारा मुख्य कार्य यह बताना होगा कि दूसरी धारणा में धन का वितरण डाटम नहीं है।

बाजार प्रक्रिया के 'स्वतंत्र अस्थिर' से दूर होते हुए इसके विपरीत बाजार की ताकत द्वारा लगातार संशोधन का विषय है। कहने की जरूरत नहीं है कि निकट भविष्य में बाजार प्रक्रिया के रास्ते की आकृति पर बल लगाने वाले समय से इनकार नहीं किया जा सकता, लेकिन वितरण के रूप को इस प्रकार खारिज करने के स्थाई प्रभाव हो सकते हैं। हालांकि धन को हमेशा इसी रूप में वितरित किया जाता है और वितरण के रूप हमेशा बदलते रहते हैं। अगर अवधि दर अवधि के बाद भी विरासत द्वारा हस्तांतरित धन का एक हिस्सा आर्थिक बाजार में स्थाई निरतंर रूप में रह सकता है। वास्तव में ऐसा नहीं होता। बाजार की ताकतों द्वारा धन के वितरण को एक वस्तु की तरह लिया जाता है न कि एक प्रतिनिधि के रूप में, और आज चाहे जो भी रूप हो, यह अप्रासंगिक होकर बीते हुए समय में बदल जाएगा। इसलिए धन के वितरण के लिए संतुलन के डेटा में कोई स्थान नहीं है। हालांकि महान अर्थशास्त्र और सामाजिक हित एक समय के धन वितरण के रूप नहीं है लेकिन समय के साथ परिवर्तन के रूप हैं। हम देखते हैं कि ऐसे परिवर्तन समस्यात्मक मार्ग पर होने वाली घटनाओं में अपना स्थान खोज लेते हैं और संतुलन की ओर बढ़ते हैं, जो वास्तव में विरले ही होते हैं। यह आमतौर पर एक 'गतिशील' घटना है। यह उत्सुक तथ्य है कि एक समय जब गतिशील अध्ययन के प्रायोजन की जरूरत और प्रसार के बारे में बहुत कुछ कहा गया, इसपर बहुत कम रूचि उत्पन्न हुई।

स्वामित्व एक कानूनी धारणा है जो ठोस सामग्री वस्तुओं के संदर्भ में है। धन एक आर्थिक धारणा है जो दुर्लभ संसाधन के संदर्भ में है। सभी बहुमूल्य संसाधन या प्रतिबिंबित होते हैं या प्रकट होते हैं या सामग्री वस्तुएं होती हैं, लेकिन सभी सामग्री वस्तुएं संसाधन नहीं होते। छोड़े गए घर या कचरे के ढेर इसके स्वाभाविक उदाहरण हैं, यह ऐसी चीजें हैं जिनके मालिक उन्हें स्वेच्छा से देने के लिए तैयार हो जाएंगे अगर इन्हें हटाने के लिए तैयार हो जाए।

जो आज संसाधन है, वह कल समाप्त भी हो सकता है। इसी तरह जो आज मूल्यहीन वस्तु है वह कल मूल्यवान हो सकती है। इसलिए सामग्रीवस्तु का संसाधन स्तर हमेशा समस्यायुक्त रहता है और यह दूरदर्शिता की सीमा पर निर्भर करता है। एक वस्तु में धन तभी है अगर यह आय का साधन है। मालिक के लिए वस्तु की कीमत वास्तविक

या संभावित हो सकती है, यह निर्भर करता है कि किसी समय विशेष पर अनुमानित आय अनुवर्ती क्या है। यह इस पर भी निर्भर करेगा कि वस्तु का क्या प्रयोग किया जाता है। इसलिए वस्तु का स्वामित्व मात्र धन होने को अनिवार्य नहीं बनाता है। अगर इसका कोई सफल उपयोग है, तभी यह अनिवार्य होता है। स्वामित्व नहीं, बल्कि आय और धन को साधन संसाधन उपयोगी बनाते हैं। न्यूयॉर्क में एक आइसक्रीम का कारखाना इसके मालिक के लिए धन हो सकता है लेकिन ग्रीनलैंड में इसी आइसक्रीम के कारखाने को शायद ही संसाधन कहा जाए।

अप्रत्याशित परिवर्तन के इस संसार में धन का रखरखाव हमेशा ही समस्या पैदा करने वाला रहा है और लंबे समय में इसे असंभव भी कहा जा सकता है। एक निश्चित राशि के धन को बनाए रखना, जिसे एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक हस्तातंरित किया जा सके तो उस परिवार को स्थाई आय को बनाए रचाने के लिए अपने संसाधन जुटाने होंगे, अर्थात स्वामित्व के संसाधनों से अनुपूरक सेवा के शुल्क पर प्राप्त मूल्य से अधिक की आवक। ऐसा प्रतीत होता है कि यह सिर्फ स्टेशनरी संसार में संभव है जहां कल और आने वाले कल में भी सब समान था। ऐसे में दिन प्रतिदिन, और वर्ष प्रतिवर्ष समान आय स्वामी और उसके उत्तराधिकारियों को मिलती रहेगी, या सभी मालिकों की दीर्घ दूरदृष्टि हो।

दोनों स्थितियां वास्तविकता से दूर हैं और हम उन्हें नजरअंदाज कर सकते हैं। लेकिन अप्रत्याशित परिवर्तन के संसार में धन को वास्तव में क्या होता है।

समस्त धन में एक या दूसरी तरह से पूंजी संपदा होती है जिसमें मूल्यवान नतीजे के साधन, उत्पादन के सामग्री संसाधन को कम से कम प्रतिबिंबित करता है या सन्ननिहित होता है। समस्त परिणाम को मानव श्रम द्वारा ऐसे संसाधनों के संयुक्तिकरण की मदद से उत्पादित किया जाता है। इस प्रायोजन के लिए संसाधनों का प्रयोग निश्चित संयुक्तिकरण, संसाधन प्रयोग की अनिवार्यता के अनुपूरक से होता है। अनुपूरक के रूप किसी भी रूप में उद्यमी को नहीं दिए जाते हैं जो उत्पादन योजना बनाता है, आरंभ करता है और पूरा करता है। वास्तव में उत्पादन विशेषता जैसी कोई चीज नहीं होती है। इसके विपरीत उद्यमी का काम परिर्वतन के संसार में खोजने का होता है जिसका संयुक्तीकरण संसाधनों को एकत्र करता है और आज की स्थिति में निर्विष्ट मूल्य पर उपज मूल्य की अधिकता, कल की संभावित स्थितियों में करने योग्य कार्य का अनुमान, कब उपज का मूल्य होगा, अनुपूरक निविष्टी का मूल्य और तकनीक, सब में परिवर्तन होता है।

अगर सभी पूंजी संसाधन असीमित विशाल होते तो इन बदलावों से लाभ बनाने के प्रयोग की सफलता से संसाधन के संयुक्तकिरण से बाहरी शर्त के बदलने तक कोई उद्यमी समस्या नहीं आती। जैसा की यह है, संसाधनों के नियमानुसार व्यापकता की सीमा है और प्रत्येक का एक खास संख्या तक इस्तेमाल किया जा सकता है। इसलिए 'पूंजी पुर्नसामूहन' के लिए संसाधन समूह बनाने में बदलाव के लिए स्थिर बदलाव को तालमेल की आवश्यकता होती है। पूंजी के लाभ और हानि में दी गई वृद्धि से पदार्थ संसाधन के मूल्य का प्रभाव पूरक रूप में प्रत्येक बदलाव पर होगा। उद्यमी उन संसाधनों की सेवाओं के लिए ऊंची बोली लगाएंगे जिनसे उन्हें अधिक लाभ के उपयोग मिले होंगे और कम लाभ वाले संसाधनों के लिए न्यूनतम बोली लगाएंगे। सीमित स्थिति

में जहां अब तक बनाए गए लाभ के समीकरण के लिए संसाधन का कोई प्रयोग (वर्तमान या संभावित भविष्य) नहीं मिला, वहां संसाधन अपनी संसाधन विशेषता एक साथ खो देगा। कम बुरी स्थितियों में भी अप्रत्याशित परिवर्तन के संसार में अपरिहार्य सहवर्ती स्थिर संपदा पर पूंजी का लाभ या हानि होती है।

इस प्रकार बाजार प्रक्रियाको समतल प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। एक बाजार अर्थशास्त्र में धन के पुर्नवितरण की प्रक्रिया आधुनिक नेताओं की संस्थागत आदतों में समान प्रक्रियाओं के चलने से कहीं पहले हो जाती है, तुलनात्मक निरर्थकता में, इस बात की कोई वजह नही होती कि बाजार उन्हें धन दे जो इसे संभाल सकें, जबकि नियम के मुताबिक नेता उन्हें किसी घटक को देते हैं जो नहीं संभाल सकते। धन के पुर्नवितरण की प्रक्रिया खतरों की कड़ी से प्रेरित नहीं हेाती। इसके भागीदार अवसर के खेल के नहीं बल्कि कौशल के खेल के खिलाड़ी होते हैं। सभी वास्तविक गतिशील प्रक्रियाओं की तरह यह प्रक्रिया भी मस्तिष्क से मस्तिष्क तक ज्ञान के हस्तांतरण को प्रतिबिंबित करता है। यह इसीलिए संभव है क्योंकि कुछ लोगों के पास ज्ञान है और बाकियों के पास यह अभी नहीं आया है क्योंकि पूरे समाज में परिवर्तन का ज्ञान और इसके प्रभाव असमान रूप से और धीमी गति से पड़ते हैं। इस प्रक्रिया में वही सफल है जो दूसरों की अपेक्षा पहले समझता है कि कोई संसाधन जिसे हम आज नए या खरीदे हुए के रूप में प्रस्तुत करते हैं, वह वर्तमान में एक निश्चित मूल्य का संसाधन है और कल यह किसी उत्पाद का संयुक्त हिस्सा बनकर दूसरे निश्चित मूल्य का होगा। पूंजी के ऐसे अवसर या जरूरत या एक संसाधन से दूसरे संसाधन में बदलकर प्रयोग, परिवर्तनीय संसार में धन के अभिप्राय के आर्थिक पदार्थके रूप में और पुर्नवितरण की प्रक्रिया के मुख्य वाहन हैं। इस प्रक्रिया में संभव नहीं हो सकता है कि एक ही व्यक्ति समय–समय पर मौजूदा या संभावित संसाधन के प्रयोग के लिए अनुमान लगाने में हमेशा सही होगा बशर्ते वह सर्वश्रेष्ठ न हों। इस स्थिति में उसके उत्तराधिकारी का ऐसी ही सफलता का प्रदर्शन करना मुश्किल है, बशर्ते वे भी सर्वश्रेष्ठ न हों। अप्रत्याशित परिवर्तन के संसार में पूंजी की हानि पूंजी के लाभ की तरह अटल है। पूंजीपतियों में स्पर्धा और स्थिर संसाधनों की विशेष प्रकृति, हालांकि यह 'बहु विशिष्टता' की वजह से है, हानि के बाद लाभ और लाभ के बाद हानि आती ही है। इन आर्थिक तथ्यों के कुछ निश्चित सामाजिक परिणाम होते हैं। बाजार अर्थव्यवस्था के आलोचक के अपना पक्ष सामाजिक आधार पर रखते हैं, भले ही बाजार प्रक्रिया के वास्तविक सामाजिक परिणामों को यहां प्रदर्शित करना अनुचित न हो। हम इसके बारे में समतल प्रक्रियाके रूप में पहले ही कह चुके हैं। अब हमें अधिक हाजिरजवाबी के साथ इन परिणामों को उस उदाहरण के साथ बताना होगा जिसे पैरेटो ने 'कुलीनों का प्रसार' कहा है।

धन का लंबे समय तक एक ही हाथों में रुकना मुश्किल होता है। यह एक हाथ से दूसरे में जाता है चूंकि मूल्य में अनापेक्षित परिवर्तन आते हैं। अब इस पर उन निश्चित संसाधनों से पूंजी के लाभ और हानि होते हैं। हम शुमपीटर के साथ कह सकते हैं कि धन के स्वामी एक रेलगाड़ी के यात्री या होटल के मेहमान की तरह होते हैं। वे हमेशा वहां होते हैं लेकिन हर बार लोग अलग होते हैं। हमने देखा है कि बाजार के अर्थशास्त्र में सारा धन समस्या की प्रकृति में होता है। ज्यादा स्थिर संपदा, ज्यादा निश्चित, प्रयोग की ज्यादा सीमित सूची में बदल जाते हैं और समस्या ज्यादा स्पष्ट रूप से नजर आती

है। लेकिन समाज में माल के भंडार के रूप को सबसे संचित धन में छोटी सीमित पूंजी, खासकर कृषि और विनाशशील विभिन्न लंबाई के अवधि तक लिए गए और एक समाज जिसमें घरों और फर्नीचर को छोड़कर शायद ही कोई स्थिर ग्राहक वस्तु हो, इसमें समस्या स्पष्ट रूप से जाहिर नहीं थी। ऐसे समाज में बड़े स्तर पर कुछ प्राचीन अर्थशास्त्री रहते थे और इसी से उन्होंने स्वाभाविक रूप से कुछ गुण लिए। इसलिए अपने समय की शर्तों में प्राचीन अर्थशास्त्री कुछ हद तक, खासकर वास्तविक सजातीय और पूर्ण व्यापकता के संबंध में सही थे, केवल निश्चित और उत्पादकताहीन संसाधन भूमि के साथ विषमता थी। लेकिन हमारे समय में ऐसे दो भागों में विभाजन के बहुत थोड़ी या दरअसल कोई जगह नहीं है। जहां ज्यादा तय पूंजी है और ज्यादा स्थिर है वहां ऐसे पूंजी संसाधन की संभावनाएं भी ज्यादा हैं। इसका वहन करने से पहले वास्तविक रूप से तैयार प्रायोजनों के अलावा सभी का प्रयोग करना होगा। इसका अभिप्राय है कि आधुनिक बाजार अर्थशास्त्र वास्तव में स्थाई आय का साधन नहीं हो सकता। स्थिरता और सीमित व्यापकता ने इसे असंभव बना दिया है।

इस लेख में जिस मुख्य तथ्य पर हमने जोर दिया है वह साधारण अवलोकन का तथ्य है कि अप्रत्याशित परिवर्तन के संसार में बाजार का बल धन के पुर्नवितरण की वजह से है। फिर से लगातार नजरअंदाज क्यों किया जाता है। हम समझ सकते हैं कि नेताओं ने क्यों इसे अनदेखा किया। आखिरकार उनके चुनाव क्षेत्रों में बहुसंख्यक इससे सीधे प्रभावित नहीं होंगे और जैसा कि इसे मुद्रास्फीति में दिखाया गया है उसे समझ नहीं सकेंगे। लेकिन अर्थशास्त्रीयों ने इसे नजरअंदाज क्यों किया। आर्थिक बल के संचालन का परिणाम धन के वितरण का रूप है, यह एक ऐसा कथन है जिससे कोई सोचेगा, उन्हें अपील करेंगा। फिर ऊपर दूसरी धारणा में बताए गए अनुसार धन के वितरण को बहुत से अर्थशास्त्री 'डाटम' क्यों मानते हैं। हम मानते हैं कि कारण का संतुलन की समस्या के साथ अत्याधिक व्यस्तता में पता लगाया जाना चाहिए।

हमने पहले देखा कि असंतुलन के संसार से धन के वितरण के सफल रूप संबंध रखते हैं। पूंजी लाभ और हानि होते हैं क्योंकि स्थिर संसाधनों का ऐसे रूप में प्रयोग किया जाता है जैसी योजना नहीं बनाई गई थी और कुछ लोग पहले के लोगों के मुकाबले बेहतर समझते हैं कि परिवर्तन को क्या चाहिए और संसार के संसाधन गति में चलते हैं। संतुलन का अर्थ योजना की निरंतरता है, लेकिन बाजार में धन का पुर्नवितरण निश्चित रूप से अनियमित कार्रवाईका परिणाम है। जिन्हें संतुलन शब्द के साथ सोचने के लिए प्रशिक्षित किया गया है वे शायद स्वाभाविक रूप से मानते हैं कि ऐसी संपदा को सिर्फ 'सम्मानीय' के रूप में वर्णित नहीं करना चाहिए। उनके लिए 'वास्तविक' आर्थिक ताकतें वह हैं जो संतुलन की स्थापना और अनुरक्षण की पक्षधर हैं। असंतुलन में संचालित ताकतें बहुत रुचिकर नहीं मानी जाती और इसलिए इन्हें नजरअंदाज किया जाता है।

निसंदेह हम यह नहीं कह रहे हैं कि आधुनिक अर्थशास्त्र संतुलन के व्याकरण से आया है और इसीलिए बाजार के तथ्यों को नजरअंदाज करता है, आर्थिक परिवर्तन के साथ सहयोग में असमर्थ है, यह कहना अनुचित होगा। हम कह रहे हैं कि वह काफी कठोर पैटर्न के अनुरूप होने के लिए पूरी तरह से यंत्रबद्ध है।

राजनैतिक एवं आर्थिक स्वतंत्रता का संयोजन मानवता के चमत्कारों को जन्म देता है

तेम्बा ए नोलुत्शुंगु

इस निबंध में दक्षिण अफ्रीकी अर्थशास्त्री टेम्बा ए. नोलूट्शुंगु अपने देश के हाल ही के इतिहास बहुमत शासन (जिसे हाल ही में सत्ता के अल्पसंख्यक एकाधिकार के खिलाफ दशकों के संघर्ष के बाद हराया गया) से आजादी के अंतर को बताते हुए आर्थिक आजादी की उदार संभावनाओं को दिखाते हैं। दक्षिण अफ्रीका में मुक्त व्यापार फाउंडेशन के निर्देशक हैं। वह देश भर में आर्थिक सशक्तिकरण कार्यक्रम के बारे में पढ़ाते हैं और दक्षिण अफ्रीकी प्रेस में निरंतर योगदान करते हैं। वह मुगाबे की नीतियों के उत्पात के बाद जिम्बाब्वियन पुर्नउद्धार के लिए प्रस्तावित नीतियों, जिम्बाब्वे पेपर्स के कमिश्नर थे, जिन्हें जिम्बाब्वे के प्रधानमंत्री मोर्गन त्स्वांगीरै को सौंपा गया था। नोल्तशुंगु अपनी जवानी में दक्षिण अफ्रीका की अश्वेत जागृति मुहिम में सक्रिय थे।

1794 में क्रांतिकारी गणतंत्रवादी, उग्र प्रजातंत्री और फ्रांस की क्रान्ति, जिसके दौरान 'राष्ट्र के शत्रु' के रूप में लगभग 40000 फ्रेंच महिलाओं और पुरुषों को गिलोटिन पर मार डाला गया, में आतंक के राज्य के पीछे की मुख्य ताकत मैक्सिमिलियन रोबेस्पियरे की उनके राजनैतिक विरोधियों ने हत्या करवा दी थी। मृत्यु से कुछ समय पहले उन्होंने उस भीड़ को संबोधित किया जो पहले उनकी खुशामद करती थी और अब उनके खून की प्यासी हो रही थी, उन्होंने कहा, ''मैंने तुम्हें आजादी दी, अब तुम्हें रोटी भी चाहिए।'' इसी के साथ आतंक के राज्य का अंत हो गया। इससे शिक्षा मिलती है कि राजनैतिक आजादी और आर्थिक कल्याण में संबंध हो सकता है लेकिन दोनों एक ही चीज नहीं हैं।

आर्थिक कल्याण आजादी का परिणाम है। दक्षिण अफ्रीका में औपचारिक रूप से दर्ज 25.2 प्रतिशत (इसमें उन लोगों के आकंड़ें नहीं हैं जिन्होंने अब काम खोजना बंद कर दिया है) बेरोजगारी दर राजनीतिक आजादी और आर्थिक कल्याण का अंतर संभावित प्रलयकारी राज्य के मामलों को दर्शाता है कि उनके क्षेत्रों को सभी लाभ देने के क्रमिक राजनीतिक प्रशासनिक वादे खतरनाक होते हैं। हमारे सामने आने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए हमें कुछ निश्चित गलतफहमियां दूर करनी होंगी।

रोजगार उत्पादन में सरकार की भूमिका नहीं है। नौकरियों को बनाए रखने के लिए उनका निर्माण निजी क्षेत्र को करना होगा। सरकार द्वारा उत्पादित नौकरियां करदाताओं के खर्च पर होती हैं और यह राशि रोजगार को सब्सिडी होती है। सतत न होने से उनका कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं होता है। निजी क्षेत्र धन का मुख्य निर्माता है और सरकारी क्षेत्र उपभोक्ता है।

धन केवल सेवाओं और सामान के लिए विनिमय का माध्यम है और इसलिए इसे उत्पादकता से प्रतिबिंबित और संबंधित होना चाहिए। जब मैं 1991 में साम्यवाद के बाद के रूस और चेकोस्लोवाकिया में गया तो यह चुटकुला चलता था कि कामगार काम करने का नाटक करते थे और सरकार उन्हें वेतन देने का नाटक करती थी। इसलिए मेरी राय में जब हम सार्थक नौकरियां पैदा करने के बारे में बात करते हैं तो हमें पूरा ध्यान निजी क्षेत्र पर देना होगा। इससे सवाल पैदा होता है कि निजी उद्यमों पर कौन सी नीति लागू होनी चाहिए। कौन सी नीति से उनकी उत्पादकता बढ़ाएगी और कौन इसे खत्म करेगी। क्या करना चाहिए।

आइए हम दो दलों के बीच विनिमय के साधारणतम सिद्धान्त का विश्लेषण करते हैं। साधारण लेन–देन उदाहरण हो सकता है और बड़ी अर्थव्यवस्था का सूक्ष्म जगत है। उन्हें नीतिनिर्धारकों को बताना चाहिए कि मानव की प्रकृति के अनुसार कौन सी नीति सबसे अनुरूप है क्योंकि आर्थिक संदर्भ में मनुष्य केंद्रीय बिन्दु है। बहुत पहले के समय में जब गुफा में रहने वाले मनुष्य जो शिकार में निपुण थे लेकिन शिकार के हथियार बनाने में निपुण नहीं थे। हमारे गुफा के आदमी की मुलाकात कुशल हथियार निर्माता से हुई और एक शिकार के बदले हथियार लेने सहमत हो गए। दोनों व्यक्ति लेने देन के बदले में मिले लाभ की अनुभूति से दूर आ गए। शीघ्र और विलंब से हथियार बनाने वाले को महसूस हुआ कि वह शिकार पर जाने के बजाय हथियार बनाकर मांस, फर और हाथी दांत पा सकता है। वह व्यापार में है। वह समृद्ध हुआ और उसके उपभोक्ता समृद्ध हैं क्योंकि वे अब अधिक सक्षम हथियारों का प्रयोग कर रहे हैं। इस पर ध्यान देना आवश्यक कि इस दृश्य में कोई बल या धोखा शामिल नहीं है। इसमें कोई तीसरा दल शामिल नहीं है। किसी भी दल ने व्यापार कराने के नियमों को प्रस्तावित किया है। लेनेदेन करने वाली पार्टियों के नियम अनायास ही आते हैं। वे प्राकृतिक क्रम के माध्यम से चलते हैं। स्वर्गीय अर्थशास्त्री फ्रडरिक हायेक ने इसी अनायास क्रम का संदर्भ दिया है और इस क्रम का भाग निजी संपत्ति का परस्पर सम्मान है।

इस साधारण उदाहरण से कोई भी अंदाजा लगा सकता है कि जब आधुनिक दिन की अर्थव्यवस्था में किसी देश की सरकार आर्थिक क्षेत्र में हस्तक्षेप करने से बचती है तो उच्च आर्थिक विकास और सहगामी सामाजिक आर्थिक लाभ होगा। दूसरे शब्दों में अगर कोई सरकार उत्पादकों व उपभोक्ताओं की आर्थिक आजादी को प्रोत्साहित करती है और उन्हें ऐसे लेनेदेन में शामिल होने देती है जिसमें बल या धोखा न हो तो देश और इसके लोग समृद्ध होंगे। इस तरीके से बेरोजगारी घटेगी, शिक्षा में सुधार होगा और बेहतर स्वास्थ्य देखभाल प्राप्त कर सकेंगे।

यह मौलिक सिद्धान्त सभी अर्थव्यवस्थाओं पर उस सांस्कृतिक संदर्भ के बिना लागू होता है जिसमें प्रत्येक आकृति बनी थी। जिद्दी 'कार्य नियम' मिथक आलोचनात्मक अवधान देता है। यह विचार कार्य नियम होने या न होने पर कि राष्ट्रीय या जातीय समूहों के जड़वत होने के पुष्ट संकेत देखता है जिसका तार्किक विस्तार है कि गरीब लोग गरीब ही रहते हैं क्योंकि उनमें कार्य नियमों की कमी होती है तथा अमीर लोग सफल हो जाते हैं क्योंकि उनकेपास ऐसे नियम होते हैं। यह बेहद खतरनाक विचार है खासकर जब इसे जाति से जोड़ दिया जाए।

1989 में बर्लिन की दीवार तोड़े जाने से पहले पश्चिम जर्मनी दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था थी जबकि पूर्व जर्मनी आर्थिक आपदा की स्थिति में था। वे एक जैसी संस्कृति के समान लोग थे और दूसरे विश्वयुद्ध के बाद विभाजित होने से पहले बहुत से परिवार भी एक थे। ऐसी ही राय दोनों कोरियाई देशों के बारे में बनाई जा सकती है। दक्षिण कोरिया आर्थिक महाकाय है और उत्तर कोरिया आज भी आर्थिक रसातल में है और विदेशी मदद लेता है। यह भी एक जैसे एक ही संस्कृति के लोग हैं। वर्ष 1992 से पहले मुख्य चीन और हांगकांग में क्या फर्क थे जब डेंग शिओपिंग ने यह कहते हुए उग्र मुक्त बाजार उदारवाद को स्वीकार किया कि अमीर होना गौरवशाली है और जब तक बिल्ली चूहे पकड़ रही है तब तक इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उसका रंग काला है या सफेद। यहां भी एक जैसे लोग, एक संस्कृति और एक जैसी आर्थिक विसंगतियां थी। हर बार अंतर आर्थिक कार्यों में आजादी से आया।

1992 तक, हाल के वर्षों में हुए सबसे उग्र मुक्त बाजार सुधारों की बदौलत चीन आज दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। बर्टेल शमिट के शब्दों में दुख की बात है कि ''संयुक्त राज्य ने उस सामाजिक आर्थिक किताब को उठा लिया जिसे फेंकने में डेंग शिओपिंग ने समझदारी दिखाई थी।''

विधान और संस्थागत ढांचा जिसमें आर्थिक गतिविधियां होती हैं और खासकर अर्थशास्त्र के विषयक नियमों का परिमाप होता है वही तय करता है कि सरकार और इसके अंग कितने स्वस्थ रहेंगे। दूसरे शब्दों में जिस परिमाप तक सरकारें लोगों को आर्थिक आजादी देती हैं उसी से उनके आर्थिक परिणाम तय होते है।

सोच को झकझोरने वाली किताब दक्षिण अफ्रीका की पूंजी के खिलाफ लड़ाई के लेखक प्रोफेसर वॉल्टर विलियम्स के 1986 के शब्द सब कुछ कह जाते हैं.... ''दक्षिण अफ्रीका की समस्या का समाधान कोई विशेष कार्यक्रम नहीं है, यह स्वीकारात्मक कार्य भी नहीं है, यह शासकीय सूचना और कल्याण भी नहीं है। यह आजादी है। आप संसार में चारों ओर देखते हैं और आपको अमीर लोग नजर आते हैं, विविध लोग नजर आते हैं जिनमें भलाई करने की क्षमता है, आपको ऐसे समाज भी नजर आते हैं जिनमें व्यक्तिगत आजादी का विशाल भाग नजर आता है।''

खंड 4

वैश्विक पूंजीकरण

वैश्विक पूंजीवाद और न्याय

जून अरूंगा

इस निबंध में जून अरूंगा अफ्रीका में मुक्त–बाजार पूंजीकरण की मांग करती हैं और व्यापार की आजादी के माध्यम से दुनिया के अर्थशास्त्र में अफ्रीकियों के आने का विरोध करने वालों का सामना भी करती हैं। उनके विचार मुक्त व्यापार के सैद्धान्तिक समर्थन में हैं, वह विशेषाधिकृत स्थानीय उद्यमियों या विदेशी निवेशकों को विशेष अधिकार (और कई बार स्थानीय लोगों के संपत्ति के अधिकारों के उल्लघंन करने) देने वाली प्रतिष्ठित 'व्यापार जोन' और दूसरों की समान रूप से व्यापार या निवेश करने की आजादी को रोकने की आलोचना करती हैं। वह अफ्रीकी लोगों के संपत्ति के अधिकारों के सम्मान और विशेष अधिकारों और एकाधिकार वाली शक्तियों से मुक्त– बाजार पूंजीकरण की मांग करती हैं।

जून अरूंगा केन्या की उद्यमी महिला और फिल्म निर्माता हैं। वह ओपन क्वेस्ट मीडिया एलएलसी की संस्थापक और सीईओ हैं तथा अफ्रीका में कई टेलीकॉम कंपनियों के साथ काम कर चुकी हैं। उन्होंने अफ्रीका पर दो बीबीसी डॉक्यूमेंट्री बनाई है। द डेविल्ज फुटपाथ, इसमें कायरो से केपटाउन तक 5,000 मील ट्रेक की उनकी छह सप्ताह बिताने का विवरण है। हू टु ब्लेम में अरूंगा और घाना के पूर्व राट्रपति जैरी रॉलिंग्स के बीच की चर्चा व बातचीत है। वह अमेरिकन लिबर्टी डॉट ओआरजी के लिए लिखती हैं और केन्या में सेल फोन क्रान्ति की सहलेखिका हैं। अरूंगा ने युनाइटेड किंगडम में ब्रमिघम विश्वविद्यालय से कानून की डिग्री ली है।

मेरा अनुभव है कि अधिकतर असहमति : लगभग 90 प्रतिशत; एक तरफ या दूसरी तरफ जानकारी के अभाव की वजह से होती है। यह खासकर तब महत्वपूर्ण है जब लोग एक सांस्कृतिक स्थल से दूसरी जगह जाते हैं। संरक्षणवाद, राष्ट्रवाद और गलतफहमियों की वजह से लंबे समय तक एक दूसरे से अलग – थलग रहने के बाद हम अफ्रीका, अफ्रीकियों में व्यापार की प्रगाढ़ इच्छा दे रहे हैं। मुझे लगता है कि हमें व्यापार की प्रगति का उत्सव मनाना चाहिए। कुछ लोग व्यापार बढ़ने से डरते हैं, मुझे लगता है कि उन्हें और जानकारी चाहिए।

वैश्वीकरण हो रहा है और मुझे लगता है कि हमें इसका स्वागत करना चाहिए। इससे कौशल का हंस्तातरण संभव हुआ है, संसार भर में तकनीक तक पहुंच बढ़ी है और भी बहुत कुछ हुआ है। हालांकि बहुतों को इससे अलग रखा गया है।

प्रश्न है कि क्यों। मेरी मुलाकात 2002 में आंख खोलने वाली किताब 'इन डिफेंस ऑफ ग्लोबल कैपिटलिज्म' के लेखक स्वीडिश अर्थशास्त्री जोहान नॉरबर्ग से हुई। मैं हैरान थी कि कैसे उन्होंने जानकारी को समझा। वह मुक्त व्यापार के विरोधियों को यूं ही खारिज नहीं करते। इसके बजाय वह उन्हें सुनते हैं, उनके विचार समझते हैं और उनकी जानकारी को परखते हैं। तथ्यात्मक जानकारी में उनकी दिलचस्पी ने शुरूआत में पूंजीवाद के प्रति उन्हें आकर्षित किया था।

मैं इससे भी हैरान थी कि कैसे उन्होंने सबसे ज्यादा प्रभावित लोगों, गरीबों का दृष्टिकोण जाना। नॉरबर्ग ने सवाल पूछते हुए दुनिया की यात्रा की। उन्होंने लोगों को यह नहीं बताया कि उन्हें क्या सोचना चाहिए। उन्होंने पूछा कि वे क्या सोचते हैं। उन्होंने उन गरीब लोगों से पूछा जिन्हें व्यापार से जुड़ने का मौका मिला (या तो व्यापारी या कारोबारी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में जुड़े उद्यमियों के कर्मचारियों के रूप में), उन्होंने इस तथ्य का खुलासा किया कि आधिकारिक जानकारी गायब थी। नए कारखाने में नौकरी ने आपके जीवन को बुरा बना या बेहतर। आपके पहले सेलफोन ने आपकी जिंदगी को बेहतर बनाया या खराब। आपकी आय कम हुई या बढ़ी। आप कैसे यात्रा करते हो– पैदल, साइकल से या मोटरबाइक से या कार से। आप कार से चलना पसंद करते हो या मोटरबाइक से। नॉरबर्ग जोर देकर जमीन पर तथ्यों को देखने के लिए कहते हैं। वह शामिल लोगों से पूछते हैं कि वे क्या सोचते हैं और क्या मुक्त बाजार से उनकी जिंदगी में कोई सुधार हुआ है। वह व्यक्तिगत राय जानना चाहते हैं।

हमें पूछना चाहते हैं कि हमारी सरकार हमारे लिए क्या कर रही है, सिर्फ हमारे लिए नहीं। हमारी अपनी सरकारें हमें दुख पहुंचा रही है। वे हमसे चोरी कर रहे हैं, हमें व्यापार करने से रोक रहे हैं, और गरीबों को नीचे ही रख रहे हैं। कम आय वाले देशों में कानून की कमी की वजह से स्थानीय निवेशकों को स्पर्धा की अनुमति नहीं है। शायद इसी वजह से वे कम आय वाले देश हैं क्योंकि उनकी अपनी सरकारें लोगों का सम्मान नहीं करती हैं।

बहुत से गरीब देशों की सरकारें 'विदेशी निवेशकों' को आकर्षित करने पर ध्यान दे रही हैं, लेकिन वे अपने लोगों को बाजार में नहीं जाने दे रहे हैं। बाजार खोलना और स्थानीय लोगों को स्पर्धा देना उनके अजेंडे में नहीं है। स्थानीय लोगों में अंतर्दृष्टि है, समझ है और 'स्थानीय ज्ञान' है। लेकिन अफ्रीका में हमारी अपनी सरकारें विदेशियों या स्थानीय विशेष हित समूहों के पक्ष में अपने लोगों को बाजार से बाहर रखती हैं।

उदाहरण के लिए, सेवा क्षेत्रों जैसे बैंकिंग और जल प्रावधान में स्थानीय स्पर्धा को रोकने वाले भारी प्रतिबंध ढ़ांचागत, प्राथमिकता, तकनीक के स्थानीय ज्ञान के इस्तेमाल की अपने लोगों की क्षमता की अनदेखी है। 'विदेशी निवेशकों' को विशेष लाभ देना सही 'वैश्वीकरण' नहीं है जबकि अपने लोग दूर कर दिए गए हों और उन्हें स्पर्धा की अनुमति नहीं हो।

अगर सरकार का 'विशेष आर्थिक क्षेत्र' (स्पेशल इकनॉमिक जोन) बनाकर 'विदेशी निवेशकों' को आकर्षित करना अच्छी बात है तो इससे ज्यादातर लोगों को फायदा क्यों

न हो। सबके लिए व्यापार की आजादी का हिस्सा होने के बजाय उनके लिए अधिकारों की स्पेशल जोन क्यों बनाई गई। व्यापार की आजादी लोगों की सेवा के लिए मुक्त स्पर्धा होनी चाहिए, न कि स्थानीय उद्यमियों को विशेष अधिकार के लिए या विदेशी निवेशकों के लिए जिन्हें मंत्रियों के साथ विशेष श्रोता मिलते हैं।

यह 'मुक्त व्यापार' नहीं है जब इंटरनैशनल कंपनियां सरकार से विशेष लाभ लें और बाजार से उनकी अपनी सरकार ने स्थानीय फर्मों को प्रतिबंधित कर दिया है। मुक्त व्यापार के लिए सब के लिए कानून का राज हो और कार्य के सबसे स्वाभाविक रूप; स्वैच्छिक आदान प्रदान में सबके लिए आजादी हो।

अफ्रीकियों के रूप में हमारी संपन्नता विदेशी मदद या आसान धन से नहीं आएगी। हमारे पास यह अफ्रीका में पहले बहुत था लेकिन इसका गरीबों के जीवन पर सकारात्मक प्रभाव नहीं था। इस तरह की 'मदद' भ्रष्टाचार बढ़ाती है और कानून के राज को कमतर करती है। इससे मदद देने वाले देशों में कुछ विशेष लोगोंसे खरीदी हुई सेवाएं साथ में आती हैं। लेकिन सबसे खराब बात यह है कि यह 'मदद' सरकार को अपने लोगों से अलग कर देती है क्योंकि जो लोग बिल दे रहे हैं वे अफ्रीका में नहीं, बल्कि पेरिस, वांशिगटन या ब्रूसेल्स में हैं।

व्यापार को स्थानीय उद्यमियों द्वारा सीमित और विकृत किया जाता है जिनकी बात मंत्रियों तक पहुंच जाती है। आप जानते हैं कि क्यों। व्यापार को स्थानीय और विदेशी स्पर्धा के अपवाद को एकाधिकार देकर विकृत किया जा सकता है। इससे भी ज्यादा, व्यापार को सीमित और विकृत विदेशी उद्यमी बनाते हैं जो उनकी अपनी सरकार के साथ मिलीभगत में मदद की डील के माध्यम से स्थानीय सरकार से एकाधिकार लेते हैं। इस डील में स्थानीय और विदेशी स्पर्धक अपवाद होते हैं चूंकि डील तय होती है। वे सभी नियम हमारे बाजार और हमारी आजादी को रोकते हैं। हमें ऐसा सामान खरीदने और ऐसी सेवाएं लेने के लिए छोड़ दिया जाता है जो शायद उच्चतम गुणवत्ता और सर्वश्रेष्ठ मूल्य की न हों, क्योंकि हमारे पास चुनाव की आजादी नहीं है। आजादी की कमी हमें नीचे और परवर्ती गरीबी में रखती है।

हम सिर्फ न्यूनतम मूल्यों और बेहतर गुणवत्ता में ही नहीं लूटे जा रहे हैं। हमें नवीनता के अवसर, अपने दिमाग के प्रयोग, अपनी ऊर्जा और बुद्धिमता से अपनी हालत सुधारने के मामले में भी लूटा जा रहा है। इस लंबे दौर में हमारे साथ बड़ा अपराध हो रहा है। प्रतिरक्षण और विशेष लाभ को बनाए रखना न सिर्फ आर्थिक दिवालियापन है बल्कि हम में विश्वास, संकल्प, इच्छाशक्ति, चरित्र, साहस और बुद्धिमता पर प्रतिबंध है।

हमें जो चीज चाहिए वह जानकारी है। हमें जमीन से जुड़े लोगों से बात करनी होगी। हमें उन्हीं तथ्यों की जांच करनी होगी। अधिकतर मामलों में वे रहस्य नहीं हैं, लेकिन कुछ ही लोग जानने की कोशिश करते हैं। यह प्रमाण काफी है कि जनता के लिए कानून के राज के तहत मुक्त बाजार पूंजीवाद, व्यापार की आजादी, और समान अधिकारों से संपन्नता उत्पन्न की जा सकती है। हमें मुक्त बाजार पूंजीवाद की जरूरत है जो हमारी संभावनाओं का आभास कराते हुए हमारे लिए अवसर दे। पेरू के

अर्थशास्त्री हरनांडो डे सोटो, अपनी किताब द मिस्ट्री ऑफ कैपिटल में कहते हैं कि कैसे गरीब लोग 'मृत पूंजी' को 'सजीव पूंजी' में बदल कर अपना जीवन सुधार सकते हैं। पूंजी की कमी अपरिहार्य नहीं है। हमारे पास अफ्रीका में बहुत पूंजी है लेकिन इसमें से ज्यादातर का इस्तेमाल हम अपने जीवन सुधारने में नहीं कर सकते। यह मृत है। अपनी प्रचुर पूंजी को जिंदगी बनाने वाली 'संजीव पूंजी' में बदलने के लिए हमें अपने संपतति अधिकारों को सुधारने की जरूरत नहीं है। हमें संपत्ति चाहिए और हमारे अधिकारों का सम्मान होना चाहिए। हमें कानून में समानता चाहिए। हमें मुक्त बाजार पूंजी चाहिए।

वैश्वीकरण के माध्यम से मानवता की उन्नति

वरनॉन स्मिथ

इस निबंध में अर्थशास्त्री और नोबल पुरस्कार विजेता वेर्नोन स्मिथ बाजार की गति के माध्यम से मानव संपदा की प्रगति का जायजा लेते हैं और बताते हैं कि वैश्विक पूंजीवाद से मानव कल्याण कैसे होता है।

वेर्नोन स्मिथ कैलिफोर्निया में चौपमैन विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र पढ़ाते हैं और बढ़ते हुए क्षेत्र 'प्रयोगात्मक अर्थशास्त्र' में दिग्गज हैं। उनके शोध पदार्थ और पूंजी बाजार, संपत्ति बब्बल्स के उभरने, व्यवसाय चक्र, वित्त, प्राकृतिक संसाधन अर्थशास्त्र और बाजार संस्थानों के विकास पर केंद्रित हैं। वर्ष 2002 में उन्होंने प्रयोगसिद्ध आर्थिक विश्लेषण में प्रयोगशाला प्रयोगात्मक को यंत्र के रूप में स्थापित करने विशेषकर वैकल्पिक बाजार संयत्र के शोध में' संयुक्त नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। उनके शोध व्यापक रूप से अर्थशास्त्र, खेल सिद्धान्त और जोखिम के जर्नलों में प्रकाशित हुए हैं और वह प्रयोगात्मक अर्थशास्त्र और मोल–तोल एवं विपणन व्यवहार व प्रयोगात्मक अर्थशास्त्र में निबंध में लेखों के लेखक हैं। स्मिथ दुनिया भर में जाने–माने अध्यापक हैं और उन्होंने न सिर्फ आर्थिक प्रक्रिया में नई दृटि को प्रयोगात्मक अर्थशास्त्र में उपयोगी बनाने के लिए बल्कि अर्थशास्त्र के सिद्धान्त पढ़ाने के लिए भी कार्यक्रम विकसित किए हैं।

यह निबंध सितम्बर 2005 में 'ईवनिंग एट एफईई' में दिए गए एक भाषण से लिया गया है।

– –

आज मेरा संदेश सकारात्मक है। यह विनिमय और बाजार के बारे में है जो हमें कार्य और विशेषज्ञ ज्ञान से जोड़ता है। यह वो विशिष्टता है जो समस्त धन उत्पत्ति का रहस्य है और सतत मानव कल्याण का एकमात्र स्त्रोत है। यह वैश्वीकरण की आवश्कता है।

चुनौती यह है कि हम सभी लगातार विनिमय के दो संयुक्त संसारों में काम करते हैं। पहला, हम छोटे समूहों, परिवारों और समुदायों में पारस्परिक और साझे नियमों पर आधारित व्यक्तिगत, सामाजिक विनिमय के संसार में रहते है। 'आपका एक एहसान मुझ पर रहा', इस कहावत को हम दुनिया भर में कई भाषाओं में जानते हैं जहां लोग स्वेच्छा से कर्ज को एहसान के रूप में समझते हैं। आदिम काल से ही व्यक्तिगत विनिमय ने कर्म (शिकार, एकत्रीकरण और यंत्र निर्माण) की विशेषज्ञता को अनुमति दी और कल्याण एवं उत्पादकता बढ़ाने को आधार बनाया। श्रमिकों के विभाजन ने आदि मानव के लिए

संसार में विस्थापन को संभव बनाया। इसलिए औपचारिक बाजारों के उदय से कहीं पहले विशेषज्ञता ने वैश्वीकरण को आरंभ कर दिया।

दूसरा, हम व्यक्तित्वहीन बाजार विनिमय के संसार में रहते हैं जहां अन्जान लोगों के बीच लंबी दूरी के व्यापार के माध्यम से संचार और सहयोग का विकास हुआ। व्यक्तिगत विनिमय के कार्य में हम आमतौर पर दूसरों का भला करने की इच्छा रखते हैं। बाजार में इस संवेदना को हम आमतौर पर खो देते हैं क्योंकि हममें से प्रत्येक का ध्यान अपने व्यक्तिगत हित पर होता है। हालांकि, हमारे नियंत्रित प्रयोशाला के प्रयोग बताते हैं कि जो लोग व्यक्तिगत विनिमय में सहयोग का रास्ता अपनाते हैं, वही बड़े बाजार में अपना फायदा बढ़ाने में लग जाते हैं। बाजार के व्यवहार में इरादा न होते हुए भी वे समूह द्वारा अर्जित संयुक्त लाभ को भी बढ़ा देते हैं। क्यों? संपत्ति के अधिकारों की वजह से। व्यक्तिगत विनिमय में प्रशासनिक नियम शामिल दलों की स्वैच्छिक सहमति से आते हैं। व्यक्तिहीन बाजार विनिमय में प्रशासनिक नियम, – जैसे संपत्ति के अधिकार जो बिना दिए कुछ लेने से रोकते हैं, संस्थागत ढ़ांचे में सांकेतित होते हैं। इसलिए विनिमय के दो संसार एक जैसे रूप में कार्य करते हैं – कुछ पाने के लिए आपको कुछ देना होगा।

समृद्धि की बुनियाद

वस्तु और सेवा बाजार धन बनाने के आधार हैं और विशिष्टता का सीमा तय करते हैं। संगठित बाजार में उत्पादक उत्पादन के संभावित मूल्य को महसूस करता है और उपभोक्ता मूल्य की सामग्री की संभावित आपूर्ति पर आश्रित रहता है। लगातार दोहराई जाने वाली बाजार की यह गतिविधियां व्यापार में बहुतायत सामग्रियों के साथ बेहद जटिल बाजार संबंधों में भी अत्यधिक कारगर हैं।

हमने बाजार के अपने अनुभवों से यह भी जाना है कि आमतौर पर लोग इस बात से इंकार करते हैं कि किसी भी तरह का कोई मॉडल उनके अंतिम व्यापार मूल्य और जितनी सामग्री वे खरीदने या बेचने वाले हैं, उसकी भविष्यवाणी कर सकता है। दरअसल, बाजार की सक्षमता को बड़ी संख्या में भागीदारों, पूर्ण जानकारी, आर्थिक समझ या किसी विशेष आधुनिकता की आवश्यकता नहीं होती है। अंततः बाजार की प्रक्रिया पर शोध करने वाले अर्थशास्त्रियों के अस्तित्व से कहीं पहले से लोग बाजार में व्यापार कर रहे हैं। आपको बस इतना जानने की जरूरत है कि कब आप ज्यादा कमा रहे हैं और कब कम कमा रहे हैं। और क्या आप अपने काम में सुधार कर सकते हैं।

वस्तु और सेवा बाजार की कसौटी विविधता, स्वाद की विविधता, मानव कौशल, ज्ञान, प्राकृतिक संसाधन, भूमि और मौसम हैं। परन्तु विविधता निहित गरीबी के विनिमय की आजादी के बिना होनी चाहिए। कोई भी व्यक्ति, चाहे उसमें एक कौशल या एक संसाधन की भरमार हो, व्यापार के बिना स्मृद्ध नहीं हो सकता। मुक्त व्यापार के माध्यम से हम दूसरे लोगों पर निर्भर करते हैं जिन्हें हम जानते, पहचानते या समझते तक नहीं हैं। बाजार के बिना हम गरीब, दुखी, पाश्विक और अज्ञानी होते। बाजार को आर्थिक विनिमय और सामाजिक परस्परता के नियमों के स्वैचछिक क्रियान्वन की जरूरत होती है। डेविड ह्यूम से बेहतर इसे 250 साल में कोई नहीं बता पाया– प्रकृति के सिर्फ तीन

नियम हैं; कब्जा करने का अधिकार, सहमति से हस्तांतरण और वचन का प्रदर्शन। यह अनुक्रम के परम आधार हैं जो बाजारों और स्मृद्धि को संभव बनाते हैं।

ह्यूम के प्रकृति के नियम प्राचीन कथनों से बने हैं – तुम्हें चोरी नहीं करनी चाहिए, तुम्हें पड़ोसी की चीजों पर कब्जा नहीं करना चाहिए और तुम्हें झूठी गवाही नहीं देनी चाहिए। ''चोरी'' का खेल धन को खा जाता है और इसके पुर्नउत्पादन में बाधा बनता है। दूसरों की संपत्ति को हथियाने से धन के पुर्नवितरण में आक्रामक स्थिति आती है और इस प्रकार कल की फसल का उत्पादन खतरे में पड़ जाता है। झूठी गवाही देने से समुदाय, प्रबंधन की विश्वसनीयता, निवेशक का भरोसा, लंबे समय का लाभ और व्यक्तिगत विनिमय कम होता है।

सामग्री की आपूर्ति सिर्फ बाजार से

आर्थिक विकास निजी संपत्ति के अधिकारों और कानून द्वारा पोषित मुक्त अर्थशास्त्र और राजनीतिक व्यवस्था के साथ जुड़ा है। जहां भी सशक्त केंद्रीय योजना कार्यकाल का प्रयास हुआ है, सामग्री की आपूर्ति असफल रही है। इस बात के बहुत से उदाहरण हैं जब बड़े और छोटे दोनों तरह के देशों (चीन से न्यूजीलैंड और आयरलैंड) की सरकारों ने आर्थिक आजादी की कुछ रुकावटों को दूर किया है। इन देशों ने सिर्फ लोगों को अपने आर्थिक बेहतरी करने की अनुमति देकर ही उल्लेखनीय आर्थिक प्रगति हासिल की है।

चीन स्पष्ट रूप से आर्थिक आजादी की दिशामें बढ़ा है। सिर्फ एक साल पहले चीन ने लोगों को संपत्ति रखने, खरीदने और बेचने का अधिकार देने के लिए संविधान संशोधन किया। क्यों? चीन सरकार के सामने एक समस्या यह आ रही थी कि लोग संपत्ति खरीद और बेच रहे थे भले ही इस लेन–देन को सरकार से मान्यता नहीं मिली थी। इससे भू अधिकारी व्यापार कर कानून तोड़ने वालों से धन वसूल रहे थे। संपत्ति अधिकारों को मान्यता देकर केंद्र सरकार स्थानीय नौकरशाही के भ्रष्टाचार को ताकत देने वाले स्त्रोत को खत्म करने का प्रयास कर रही है, जिसे केंद्र से नियंत्रित करना और संभालना बहुत मुश्किल है। इस संवैधानिक परिवर्तन को मैं आर्थिक विकास के साथ राजनीतिक हस्तक्षेप और बढ़ते सरकारी भ्रष्टाचार को सीमित करने के प्रयोग के रूप में देखता हूं। हालांकि यह बदलाव आजादी के लिए किसी राजनीतिक संघर्ष का परिणाम नहीं है लेकिन यह मुक्त समाज की ओर रास्ता जरूर बना सकता है। तात्कालिक प्रभाव अभी से दिखाई दे रहे हैं – 500 में से 276 भाग्यशाली कंपनियां बीजिंग के पास विशाल आर एंड डी पार्क में चीनी सरकार से फायदेमंद 50 वर्ष की लीज के तहत निवेश कर रही हैं।

आयरलैंड की स्थिति इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करती है कि उदारवादी सरकारी आर्थिक नीति के माध्यम से धन उगाने के लिए आपका एक बड़ा देश होना आवश्यक नहीं है। अतीत में आयरलैंड लोगों को बड़ा निर्यातक था। इससे संयुक्त राज्य और ग्रेट ब्रिटेन को लाभ हुआ जिन्हें अपने देश की जिंदगी छोड़कर आने वाले कई बेहतरीन आयरिश विस्थापित मिले। दो दशक पहले तक आयरलैंड को तीसरी दुनिया के गरीब

देशों में गिना जाता था लेकिन अब अपनी पूर्व उपनिवेशाधिपति को प्रति व्यक्ति आय में पछाड़ कर यह प्रतिबद्ध यूरोपियन खिलाड़ी बनता जा रहा है। विश्व बैंक की सांख्यिकी के मुताबिक आयरलैंड के सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 1980 में 3.2 से उछलकर 1990 में 7.8 प्रतिशत तक जा पहुंची। हाल ही में आयरलैंड प्रति व्यक्ति जीडीपी के मामले में आठवें स्थान पर था जबकि युनाइटेड किंगडम 15वें स्थान पर था। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (व्यापार की पूंजी सहित) को बढ़ावा देकर और वित्तीय सेवाओं एवं सूचना प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहन देकर आयरलैंड ने दुर्जेय प्रतिभा पलायन को वापस आते देखा है– युवा लोग अब घर वापस आ रहे हैं।

यह युवा लोग इसलिए लौट रहे हैं क्योंकि उनके घर में आर्थिक आजादी के विस्तार से नए अवसर मिलने लगे हैं। वे 'कर सकते हैं' के ज्ञान आधारित उद्यमी हैं जो न सिर्फ अपने पड़ोसी देशों, बल्कि संयुक्त राज्य और दुनिया के दूसरे देशों के लिए भी धन कमा रहे हैं और मानव कल्याण कर रहे हैं। इन लोगों की कहानियां बताती हैं कि कैसे सरकार की बुरी नीतियों को अच्छे आर्थिक अवसरों में बदलकर देश की प्रतिभा को नाटकीय ढंग से परिवर्तित किया जा सकता है।

डरने की कोई बात नहीं

परिवर्तन, प्रगति और आर्थिक बेहतरी की प्रक्रिया का आवश्यक हिस्सा बीते हुए कल की नौकरियों को बीते हुए कल की तकनीक का रास्ता बनने देना है। घरेलू कंपनियों को आउटसोर्सिंग करने से रोक कर उनके विदेशी प्रतिस्पर्धकों को ऐसा करने से नहीं रोका जा सकता। हालांकि आउटसोर्सिंग के माध्यम से विदेशी प्रतिस्पर्धक अपनी कीमतें कर सकेंगे, कम हुई कीमतों की बचत का इस्तेमाल करेंगे और तकनीक उन्नत करेंगे और इस प्रकार बाजार में बड़ा फायदा कमाएंगे।

आउटसोर्सिंग का सबसे अच्छा उदाहरण दूसरे विश्वयुद्ध के बाद दक्षिणी राज्यों में कम भत्तों की प्रतिक्रिया के रूप में न्यू इंग्लैंड के वस्त्र उद्योग का दक्षिण में चले जाना है। (उम्मीद के मुताबिक इससे दक्षिण में भत्ते बढ़ गए और उद्योग को एशिया में कम खर्च वाले स्त्रोतों की ओर जाना पड़ा।) लेकिन न्यू इंग्लैंड में नौकरियां खत्म नहीं हुई। वस्त्र उद्योग की जगह उच्च तकनीक के उद्योगों; इलेक्ट्रॉनिक इन्फॉर्मेशन और बायोटेक्नॉलजी, ने ले ली। इससे एक बार का महत्वपूर्ण उद्योग गंवाने के बावजूद न्यू इंग्लैंड ने भारी लाभ कमाया। वर्ष 1965 में वॉरेन बफेट को मैसाचुसेट्स की लुप्त होती एक वस्त्र उत्पादक इकाई बर्कशायर हैथवे का नियंत्रण मिल गया। उन्होंने कंपनी का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया लेकिन कम मूल्य के व्यापारिक संस्थानों के मेजबान के रूप में धन के पुर्ननिवेशन के लिए अवसर के नगदी प्रवाह को रोक दिया। वे सफल हो गए और 40 वर्ष बाद बफेट की कंपनी के पास 113 बिलियन डॉलर की पूंजी थी। ऐसा ही लेन–देन आज के–मार्ट और सियर्स रोएबक में हो रहा है। कुछ भी हमेशा के लिए नहीं होता है; जब पुराना व्यवसाय डूबता है तो उसके संसाधन नए के लिए रास्ता खोलते हैं।

नैशनल ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक रिसर्च ने यूएस में बहुराष्ट्रीय निगमों के द्वारा घरेलू और विदेशी निवेश पर एक नया शोध किया। शोध में पता चला कि वे विदेशों में एक डॉलर का निवेश करते हैं तो संयुक्त राज्य में साढ़े तीन डॉलर निवेश करते हैं। इससे विदेशी और घरेलू निवेश में पूरक संबंध का पता चलता है; जब एक बढ़ता है तो दूसरा भी बढ़ता है। मैक्किनसे एंड कंपनी ने अनुमान लगाया है कि यूएस कंपनियां भारत में एक डॉलर निवेश करती हैं तो संयुक्त राज्य को 1.14 डॉलर का फायदा देती हैं। लगभग आधा लाभ निवेशकों और उपभोक्ताओं के पास वापस चला जाता है और बचा हुआ अधिकतर हिस्सा नई नौकरियां उत्पन्न करने में लग जाता है। इसके विपरीत, जर्मनी में विदेश में निवेश किया गया प्रत्येक यूरो घरेलू अर्थव्यवस्था में सिर्फ 80 प्रतिशत लाभ ही पैदा कर पाता है। इसका कारण यह है कि विस्थापित जर्मन वर्करों की पुर्नरोजगार दर बड़ी तादाद में सरकारी नियमों की वजह से निम्नतर रह जाती है।

मेरा मानना है कि विश्व नवीनता सूचकांक में संयुक्त राज्य पहले स्थान पर रहेगा, हमें आउटसोर्सिंग से डरने की जरूरत नहीं है। डरने की बात यह है कि इसका विरोध करने वाले हमारे नेता न सफल हो जाएं। अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र संस्थान के मुताबिक 1999–2003 के दौरान एक सौ पन्द्रह हजार से भी ज्यादा उच्च आय वाली कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर नौकरियां उत्पन्न हुई, जबकि आउटसोर्सिंग की वजह से 70 हजार नौकरियां चली गई। इसी तरह सर्विस क्षेत्र में 10 मिलियन पुरानी नौकरियों के बदले में 12 मिलियन नई नौकरियां उत्पन्न की गई। तीव्र तकनीकी परिवर्तन और पुरानी नौकरियों के बदले नई नौकरियों के आने की प्रक्रिया ही आर्थिक विकास है।

विदेशों में आउटसोर्सिंग से अमेरीकी कारोबार में नई तकनीक में निवेश के लिए धन बचा और विश्व बाजार में स्पर्धा में बने रहने के क्रम में नई नौकरियां उत्पन्न हुईं। दुर्भाग्य से, हस्तांतरण के कष्ट से गुजरे बिना हम लाभ का आनंद नहीं उठा सकते। परिवर्तन निश्चित रूप से कष्टदायक होता है। जो लोग अपनी नौकरी गंवाकर नए करियर की तलाश करते हैं, उनके लिए यह कष्टदायक होता है। जो नई तकनीक में निवेश को जोखिम उठाकर घाटे में रहते हैं, उनके लिए यह कष्टदायक होता है। परन्तु विजेताओं द्वारा अर्जित लाभ संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए नई पूंजी लाता है। ये लाभ खोज की प्रक्रिया और स्पर्धा में सीखने के अनुभव के माध्यम से बाजार को स्थिर करते हैं।

वैश्वीकरण नया नहीं है। यह प्राचीन मनुष्य की व्याख्या करने वाला नया शब्द है, वह शब्द जो विशिष्टता के वैश्विक प्रसार और विनिमय के माध्यम से कल्याण के लिए मानव सभ्यता की खोज के लिए है। यह शांतिपूर्ण शब्द है। महान फ्रेंच अर्थशास्त्री फ्रेडरिक बास्तियात बुद्धिमता पूर्वक कहते हैं कि अगर सामग्री सीमा पार नहीं करेगी तो योद्धा करेंगे।

क्या मुक्त बाजार नैतिक चरित्र को विकृत करता है? एक विरोधाभास

जगदीश भगवती

इस लेख मे, प्रोफेसर और आर्थिक शोधार्थी जगदीश भगवती इस धारणा का जवाब देते हैं जिसमे यह माना जाता है कि वैश्वीकरण नैतिक चरित्रों का अवमूल्यन करता है। वे बाजारों के खुलने से बाल मजदूरी, लिंग समानता, गरीबी मे कमी और भौतिक सुखों पर पड़ने वाले प्रभाव पर चर्चा करते हैं। अंततः, वह दावे के साथ कहते हैं कि, वैश्वीकरण हमे संयत और शांत बनाता है, साथ ही यह हमारे दायरे और समनुभूति को सम्पूर्ण विश्व तक प्रसारित करता है।

जगदीश भगवती कोलम्बिया यूनिवर्सिटी मे अर्थशास्त्र और विधि के प्रोफेसर हैं, काउंसिल ऑफ फॉरेन रिलेशन मे अंतर्राट्रीय अर्थशास्त्र के फेलो हैं, और इन डिफेंस ऑफ ग्लोबलाइजेशन के लेखक हैं। वह जन कानून और अंतर्राट्रीय व्यापार पर काफी लिखते हैं।

मैं अपने निजी अनुभवों से यह सत्यापित कर सकता हूँ कि, अगर आप आज के यूनिवर्सिटी परिसरों मे मुक्त बाजार के बारे मे बात करने की कोशिश करते हैं तो, आपको वैश्वीकरण की समालोचना के पहाड़ के नीचे दफन कर दिया जाएगा। इसके अधिकतर विरोधी फैकल्टी और स्टूडेंट अंतर्राष्ट्रीय बाजार के विस्तार के पर्यायवादी सिद्धांत के होते हैं। वे ऐसा सामाजिक और नैतिक मुद्दों को लेकर अपनी चिंता की वजह से करते हैं। साधारण तौर पर, वे यह मानते हैं कि वैश्वीकरण का कोई मानवीय चेहरा नहीं है। मेरा नजरिया इसके विपरीत है, मैं मानता हूँ कि, वैश्वीकरण, न सिर्फ संपन्नता को बढ़ाने और इसके प्रसार का काम करता है बल्कि इसके हिस्सेदारों नैतिक परिणाम और बेहतर नैतिक चरित्र का प्रसार भी करता है।

बहुत से समालोचक यह मानते हैं कि वैश्वीकरण सामाजिक और नैतिक मुद्दों को पीछे धकेल देता है, जैसे कि बाल मजदूरी और गरीब देशों मे गरीबी कम करने और लिंग समानता को बढ़ावा देने व सभी जगहों पर पर्यावरण संरक्षण जैसे मसलों को, लेकिन जब मैंने अपनी पुस्तक, इन डिफेंस ऑफ ग्लोबलाइजेशन, मे इन मसलों की जांच की तो पाया कि वास्तविक परिणाम इन आशंकाओं के विपरीत थे।

उदाहरण के तौर पर, बहुत सारे लोग यह मानते हैं कि वैश्वीकरण के आने का बाद देहाती गरीबों को अपने बच्चों को स्कूल से निकालकर काम पर लगा देना बेहतर अवसर के तौर पर दिखा। ऐसे मे यह माना जाता है कि, मुक्त बाजार के प्रसार ने एक अनिष्टकर शक्ति के रूप मे काम किया। लेकिन मैंने पाया कि वास्तविकता इसके विपरीत थी। यह कई मामलों मे बेहतर साबित हुआ, वैश्वीकरण से आय बढ़ने के परिणामस्वरूप जो देखा गया–जैसे कि वियतनाम मे चावल का उत्पादन करने वालों की आय बढ़ी तो–परिजनों ने अपने बच्चों की पढ़ाई जारी रखना बेहतर समझा। क्योंकि अब उन्हें उस मामूली आय की जरूरत नहीं रही जो उनका बच्चा स्कूल से बाहर रहकर बाल मजदूरी से उपलब्ध करा सकता था।

अथवा लिंग समानता को ले लें, वैश्वीकरण के साथ, जो उद्योग व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन करती हैं अथवा सेवाएँ मुहैया कराती हैं उन्हे गंभीर अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। इस प्रतिस्पर्धा ने उन्हें पुरुष व महिला कार्यकर्ताओं को दी जाने वाली आय के बीच फासले को कम करने के लिए मजबूर किया। क्यों? क्योंकि वैश्विक तौर पर प्रतिस्पर्धा मे शामिल कंपनियाँ अपने ऊपर लिंग भेद का ठप्पा लगने से होने वाला नुकसान नहीं झेलना चाहतीं। साथ ही, कम खर्च और कम समय मे अधिक उत्पादन के दबाव के चलते उन्होने महंगे पुरुष कर्मचारियों के बदले सस्ती महिला कर्मचारियों को काम देना बेहतर समझा, ऐसे मे कामकाजी महिलाओं की संख्या पुरुषों के मुकाबले बढ़ी। हालांकि, वैश्वीकरण अब तक मेहनताने के बीच अंतर को खत्म नहीं कर पाया है, लेकिन निश्चित तौर इसे कम जरूर किया है।

इस बात के प्रचुर प्रमाण उपलब्ध हैं कि गरीबी कि भयंकर समस्या से जूझ रहे दो देश, भारत और चीन ने व्यापार और विदेशी निवेश का लाभ उठाते हुए काफी तेजी से विकास किया है, और ऐसा करके उन्होंने नाटकीय तौर पर गरीबी भी कम की है। अभी इन्हें काफी लंबा रास्ता तय करना है, मगर वैश्वीकरण ने इन्हें अपने सैकड़ों लाखों लोगों की स्थिति मे सुधार लाने का अवसर मुहैया कराया है। बहुत से विश्लेषक आर्थिक विकास के जरिये धीरे–धीरे गरीबी पर प्रहार करने की रणनीति को दोषी ठहराते हैं। वो उन तस्वीरों का आह्वान करते हैं जिनमे, पेटू कुलीन वर्ग और बुर्जुआ वर्ग बेहतरीन मांस खाते हैं और दास व कुत्ते उनकी मेज के नीचे बैठकर कतरन और रोटी का टुकड़ा चबाते हैं। वास्तव मे, एक्टिविस्ट बनकर खिंचाई करने के बजाय विकास को केन्द्रबिन्दु मे रखकर देखने से स्थिति बेहतर स्पष्ट होती है। बढ़ती अर्थव्यवस्था गरीबों को फायदेमंद रोजगार मे खींचती है और इससे गरीबी कम होती है।

यहाँ तक कि यह स्वीकार करने के बावजूद कि वैश्वीकरण कई सामाजिक उद्देश्यों को पूरा करने मे सक्षम रहा है, बहुत से विश्लेषक यह दलील बरकरार रखते हैं कि यह नैतिक चरित्रों का अवमूल्यन करता है। वे मानते हैं कि, मुक्त बाजार अपने प्रसार के साथ उन सभी क्षेत्रों को अपने दायरे मे ले लेता है जहां से उसे लाभ दिखता है, ऐसे मे यह लाभ के पीछे भागने वालों को ज्यादा स्वार्थी और अनैतिक बनाता है। मगर इसका सत्याभास कठिन है। जिस तरह से साइमन चामा ने नीदरलैंड के अपने इतिहास मे बहुत सख्त नागरिक का विवरण किया है। उन्होने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से अपनी तकदीर तो बनाई लेकिन वे अपनी खुद की भूख के बारे मे सोचने के बजाय पर्यायवाद

मे शामिल रहे, जिसे चामा ने समुचित रूप से "अमीरों की उलझन" कहा है। इसी तरह का आत्म–संयम गुजरात के जैनियों मे भी देखा जाता है, भारत का वह राज्य जहां से महात्मा गांधी थे। वह संपन्नता जिसे जैन अपनी व्यावसायिक गतिविधियों से इकट्ठा करते हैं, वही उनके नैतिक मूल्यों को नुकसान पहुँचाती है, लेकिन दूसरी तरह से नहीं।

वैश्वीकरण का नैतिक चरित्र है, इस विचार को प्रभावशाली बनाने के लिए मैं जॉन स्टुअर्ट मिल का एक अनोखा वक्तव्य प्रस्तुत करता हूँ। जैसा कि उन्होने प्रिंसिपल्स ऑफ पोलिटिकल इकोनोमी (1848) मे लिखा है। व्यापार का आर्थिक लाभ इसके प्रभाव मे आने वालों के द्वारा ही महत्वपूर्ण रूप से परे कर दिया गया, जो कि बौद्धिक और नैतिक हैं। मूल्यों का अधिमूल्यांकन कठिन है, मानवीय सुधार की मौजूदा स्थिति मे, लोगों को उनकी तुलना मे असमान लोगों के संपर्क मे लाना, और ऐसी स्थिति और ऐसी सोच के बारे मे बताना जिनसे वे परिचित नहीं हैं..... ऐसा कोई देश नहीं है जिसे अन्य से उधर लेने की जरूरत न हो, न ही महज विशेष कला या अभ्यास, बल्कि अनिवार्य प्रकार के चरित्रों के भी अपने प्रकार निम्न बिन्दु होते हैं.... बिना अत्युक्ति के यह कहा जा सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मे बड़े विस्तार और तेज बढ़ोतरी, दुनिया मे शांति बनाए रखने के सिद्धांत को सुरक्षित रखते हुए, नियमित अबाध विकास को सुरक्षित रखते हुए, संस्थानों और मानवता के चरित्र को बनाए रखकर हुआ है।

आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था मे हम मिल द्वारा वर्णित तथ्यों के लक्षण लगातार देख सकते हैं। जब जापानी बहुराष्ट्रीयों ने 1980 के दशक मे प्रसार किया, तब उनके पुरुष कर्मचारी अपनी पत्नियों को अपने साथ न्यू यॉर्क, लंदन और पेरिस ले आए। जब इन परंपरागत जापानी महिलाओं ने देखा कि पश्चिम मे महिलाओं के साथ किस तरह का व्यवहार होता है, तब उनमे महिला अधिकारों और समानता का भाव पनपा। जब वे वापस जापान गईं तब वे ही सामाजिक सुधारों का जरिया बनीं। हमारे अपने काल मे, टेलीविजन और इन्टरनेट हमारे सामाजिक और नैतिक चेतना का प्रसार समुदाय और राष्ट्र–राज्य की सीमा के इतर किया है।

एडम स्मिथ ने सुविदित रूप से लिखा है "यूरोप मे मानवता का एक व्यक्ति" जो आज रात "सोया नहीं" कि" अगर कल उसे अपनी छोटी उंगली खो देनी थी" मगर "सबसे अगाध सुरक्षा के साथ खर्राटे लिया" अगर चाइना के 100 मिलियन लोग "अचानक एक भूकंप द्वारा निगल लिए जाएँ,"क्योंकि" उसने उन्हें कभी नहीं देखा। हमारे लिए, चीनी अब अदृश्य नहीं रहे, अब वे डेविड हयूम द्वारा कहे गए हमारी समनुभूति के सकेंद्रिक घेरे की सीमा से बाहर रह रहे हैं। पिछली गर्मियों मे चीन मे जब भूकंप आया, हमारे स्क्रीन पर तुरंत इस आपदा के परिणाम की तस्वीरें प्रसारित होने लगीं, इसने पूरी दुनिया को इसके प्रति बेपरवाही से नहीं बल्कि चीनी पीड़ितों के प्रति नैतिक जवाबदेही की समनुभूति से जोड़ दिया था। यह वैश्वीकरण का सबसे सूक्ष्म पल था।

स्वतंत्रता की संस्कृति

मारियो वर्गास लोसा

इस निबंध में साहित्य में नोबल पुरस्कार पा चुके मारियो वर्गास लोसा वैश्विक पूंजीकरण के दूषण और अपक्षरण संस्कृति के डर को खारिज करते हैं और तर्क देते हैं कि 'सामूहिक पहचान' की धारणा बर्बर हो रही है। इन प्रभावों को रोकने और अपने अविष्कार के मुक्त कर्म के साथ मुकाबला करने की मानव क्षमता ही इसकी पहचान बनती है।

मारियो वर्गास लोसा दुनिया भर में मशहूर उपन्यासकार और बुद्धिजीवी हैं। उन्हें 2010 में 'व्यक्ति के विरोध, विद्रोह और पराजय के प्रखर चित्रों और शक्ति के ढ़ांचे के मानचित्रीकरण के लिए' साहित्य का नोबल पुरस्कार मिला था। वह द फीस्ट ऑफ द गोट, द वॉर ऑफ द एंड ऑफ द वर्ल्ड, ऑन्ट जूलिया एंड द स्क्रिप्टराइटर, द बैड गर्ल, द रियल लाइफ ऑफ एलेजैंड्रो मायटा और दूसरे कई कथा साहित्य के लेखक हैं।

यह निबंध विदेश नीति के मुद्दे पर 1 जनवरी, 2001 को लिखा गया था और इसे लेखक की अनुमति से पुर्नप्रकाशित किया जा रहा है। वैश्वीकरण पर सबसे प्रभावशाली आक्रमण आमतौर पर अर्थशास्त्र से संबंधित नहीं हैं। इसके विपरीत यह हमले सामाजिक, नैतिक और सबसे ज्यादा सांस्कृतिक हैं। इन तर्कों को 1999 में सीएटल के टुमुल्ट में रखा गया था और दावोस, बैंकॉक और पराग्वे में दोहराया गया। उनका कहना था; राष्ट्रीय सीमाओं के लुप्त होने और परस्पर संबंधित विश्व बाजारों की स्थापना प्रत्येक देश या क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान निश्चित करने वाले रिवाजों, मान्यताओं व परम्पराओं तथा क्षेत्रीय व राष्ट्रीय संस्कृति के लिए घातक है। संसार का अधिकतर भाग स्वयं को विकसित देशों या यूं कहा जाए कि सुपरपावर संयुक्त राज्य से सांस्कृति उत्पादों की घुसपैठ रोकने में असमर्थ हैं। वे मजबूत बहुराष्ट्रीय निगमों को अनिवार्य रूप से पीछे छोड़ रहे हैं और विविध संस्कृतियों की घनी शाखाओं को मिटाने और विश्व के मानकीकरण पर उत्तरी अमेरिका की संस्कृति को थोपने का काम कर रहे हैं। इस शैली में न सिर्फ छोटे और कमजोर बल्कि बाकी सभी लोग अपनी पहचान खो देंगे और उनकी आत्मा 21वीं सदी के उपनिवेश में बदल जाएगी। एक नए साम्राज्यवाद के सांस्कृतिक नियमों को लाशों या कलाकृतियों के मॉडल इसकी पूंजी, सेना और वैज्ञानिक जानकारी के शासन के अतिरिक्त दूसरों पर इसकी भाषा और सोचने, विश्वास करने, आनंद लेने और सपने देखने के तरीके पर भी थोपा जाएगा।

वैश्वीकरण की वजह से दिवास्वप्न या नकारात्मक कल्पना की दुनिया अपनी भाषायी और सांस्कृतिक विविधता खो रही है तथा संयुक्त राज्य की सांस्कृतिक उपयुक्तता को अपना रही है, यह मार्क्स, माओ या चे ग्वेरा के लिए उदासीन वामपंथी राजनेताओं के क्षेत्र नहीं है।

उत्तरी अमेरिका के महाकाय के लिए विद्वेष और नफरत से फैला उत्पीड़न का प्रलाप विकसित देशों और उच्च सांस्कृतिक राष्ट्रों में साफ नजर आता है और यह वामपंथी, दक्षिणपंथी व मध्यपंथी के राजनीतिक क्षेत्रों में साझा है। इसमें सबसे कुख्यात उदाहरण फ्रांस का है, जहां वैश्वीकरण के खतरे को देखते हुए फ्रेंच 'सांस्कृतिक पहचान' के बचाव में लगातार सरकारी प्रचार देखते हैं। बुद्धिजीवियों और नेताओं के विशाल समूह को इस संभावना से डर है कि मोंटैग्ने, डेसकार्टेस, रैसीन और बौडलेयर उगाने वाले धरती और लंबे समय तक कपड़ों में फैशन, विचारों, कला, डाइनिंग और भावना के सभी क्षेत्रों के लिए मशहूर रहे देश पर मैक्डॉनॉल्ड, पिज्जा हट, केंटकी फ्राइड चिकन, रॉक, रैप, हॉलिवुड फिल्मों, ब्लू जींसों, स्नीकरों और टी शर्ट का कब्जा हो जाएगा। इस डर के फलस्वरूप संयुक्त राज्य से आने वाली फिल्मों को सीमित रखने और राष्ट्रीय फिल्मों के शो निश्चित संख्या में थियेटरों में दिखाने के लिए आरक्षणकी मांग और स्थानीय फिल्म उद्योग की बड़ी संख्या में फ्रेंच सब्सिडी देने की मांग उठ रही है। इस डर का एक कारण यह भी है कि नगरपालिकाओं ने एजेंलिक्स्मस द लैग्वेज ऑफ मोलिरै के साथ छेड़छाड़ करने वाली किसी सार्वजनिक घोषणा पर ऊचां जुर्माना लगाने और सजा देने के निर्देश क्यों दिए। (हालांकि पेरिस की गलियों में पैदल चलने वाले के विचार जानने पर पता चला कि निर्देशों का पालन नहीं किया गया।) यही वजह है कि फ्रांस के किसान–रक्षक जोस बोव मशहूर नायक बन गए। हाल ही में उन्हें तीन महीने की जेल की सजा ने उनकी लोकप्रियता को और भी बढ़ा दिया।

हालांकि मेरा मानना है कि वैश्वीकरण के खिलाफ यह सांस्कृतिक तर्क अस्वीकार्य है। हमें पहचानना होगा कि इसके भीतर कहीं ऐसा सच है जिस पर सवाल नहीं उठाए नहीं जा सकते। इस सदी में जिस संसार में हम रहते हैं वह कम रंगीन और चित्रमय है क्योंकि हमने इसमें बहुत कम स्थानीय रंग छोड़े हैं। त्योहार, पोशाक, रिवाज, समारोह, संस्कार और विश्वास ने मानवता को इतिहास में लोककथाएं और मानव विज्ञान दिया है जो अब या तो तेजी से गायब हो रहा है या अल्पसंख्यक क्षेत्र तक सिमट रहा है। जबकि समाज का बड़ा हिस्सा इन चीजों से अलग होकर आज के वक्त के अधिक अनुरूप तरीकों को अपना रहे हैं। धरती के सभी देश इस प्रक्रिया का अनुभव करते हैं। कुछ दूसरों से तेजी से करते हैं परन्तु ऐसा वैश्वीकरण की वजह से नहीं होता। ऐसा आधुनिकता की वजह से होता है जो इसका प्रभाव है न कि कारण।

इस प्रक्रिया में निराशा होना और जीवन के पुराने तरीकों के लिए विषाद को अनुभव करना संभव है, खासकर आनंद, वास्तविकता और रंगो से भरे आज के सहूलियत भरे आरामदायक रास्ते से। लेकिन यह प्रक्रिया अटल है। क्यूबा और उत्तरी कोरिया जैसे एकदलीय सत्ता वाले देशों को डर बना रहता है कि रास्ते खुलने से वे खत्म हो जाएंगे और इसलिए वे आधुनिकता के खिलाफ सेंसर और प्रतिबंध लगा देते हैं। लेकिन वे भी आधुनिकता की धीमी घुसपैठ को रोकने में नाकाम हैं और धीरे–धीरे अपनी कथित

सांस्कृतिक पहचान को खो रहे हैं। इस सिद्धान्त में कोई देश तभी अपनी पहचान बरकरार रख सकता है जब वह अफ्रीका या अमेजन में कुछ दूरस्थ आदिवासियों की तरह दूसरे देशों से रिश्ते काटकर खुद को पूरी तरह अलग–थलग कर आत्मनिर्भर होकर रहें। इस तरह से बचाई गई सांस्कृतिक पहचान समाज को फिर से पाषाण युग में ले जाएगी। यह सच है कि आधुनिकता से परम्परावादी जीवन के कई रूप लुप्त हो जाते हैं। लेकिन इससे पूरे समाज को आगे बढ़ने के लिए अवसर और महत्वपूर्ण कदम मिलते हैं। यही वजह है कि आजादी से चुनने का अवसर मिलने पर कई बार लोग अपने नेताओं या बुद्धिजीवी परम्परावादियों की इच्छा के खिलाफ किसी अस्पष्टता के बिना आधुनिकता को चुनते हैं।

वैश्वीकरण के खिलाफ और सांस्कृतिक पहचान के पक्ष में आरोप संस्कृति की स्थिर धारणा का खुलासा करते हैं जिसका कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। वक्त के साथ कौन सही संस्कृति नहीं बदली है और एक जैसी ही रही है। उन्हें जानने के लिए हमें आदिम काल की जादुई धार्मिक समुदायों की खोज करनी होगी जो गुफाओं में रहते हों, बिजली गरजने और जानवरों की पूजा करते हों और अपने आदिम काल की वजह से तबाही और शोषण की चपेट में सहजता से आ जाते हों। दूसरी सभी संस्कृतियों, खासकर जिन्हें आधुनिक और जीवित कहे जाने का अधिकार है और दो या तीन पीढ़ी पहले के बिन्दु को दूर छोड़ कर आगे बढ़े हों। इस क्रांति को फ्रांस, स्पेन और इंग्लैंड जैसे देशों ने कर दिखाया है जहां पिछली आधी सदी में यह सब हुआ है। आज अगर मार्केल प्राउस्ट, फेडरिको गर्सिया लोर्का या विर्जिनिया वूल्फ शायद ही पहचान पाएं कि इसी समाज में उनका जन्म हुआ था– वह समाज जो उनके काम की वजह से बदला है।

'सांस्कृतिक पहचान' की धारण खतरनाक है। सामाजिक नजरिए से यह विचार महज एक भ्रम, काल्पनिक संकल्पना को दर्शाता है लेकिन राजनीतिक नजरिए से यह मानवता की सबसे अमूल्य उपलबधि : आजादी को छीनता है। मैं इस बात से इंकार नहीं करता हूं कि जो लोग एक भाषा बोलते हैं, वे एक ही राज्य में पैदा हुए और पले, उनके सामने एक जैसी समस्याएं आती हैं, वे एक ही धर्म को मानते हैं और एक जैसे रिवाज अपनाते हैं। लेकिन सामूहिक चिह्न उनमें से प्रत्येक को पूरी तरह पहचान नहीं दे सकते। यह सिर्फ अद्वितीय हेय माध्यमिक विमान को नष्ट करता है और समूह के एक सदस्य से दूसरे की भिन्नता को गौण करता है। पहचान की संकल्पना को जब व्यक्तिगत पैमाने पर न मापा जाए तो यह न्यूनकारी और बर्बर होती है। किसी व्यक्ति की रचनात्मकता और वास्तविकता का सामूहिक व वैचारिक चीजों को विरासत, भूगोल और सामाजिक दबाव पर नहीं थोपा जा सकता। वास्तव में किसी व्यक्ति की सही पहचान उसकी अपनी कल्पना के साथ मुक्त कार्यों के प्रभावों से जूझना और उनका सामना करने से है।

'सामूहिक पहचान' की धारणा वैचारिक कल्पना है और राष्ट्रवाद का आधार है। मानव जाति के विज्ञान और वैज्ञानिकों के लिए सबसे आदिम समुदायों में भी सामूहिक पहचान सच को नहीं दर्शाती है। संयुक्त रिवाज और अभ्यास किसी समूह के लिए अहम बचाव हो सकते हैं परन्तु इसके सदस्यों में समूह से खुद को अलग दिखाने में पहल और रचनात्मकता का अंतर विशाल होता है। जब किसी व्यक्ति को सामूहिक परिधि के तत्वों

को न देखते हुए उसकी अपनी शर्तों पर नापा जाए तो सामूहिक विशेषता पर व्यक्तिगत मतभेद भारी पड़ते हैं। वैश्वीकरण इस धरती के सभी लोगों की उनकी प्राथमिकताओं और अंतरंग मंशाओं के अनुसार स्वैच्छिक कार्य से व्यक्तिगत पहचान बनाने की संभावना दिखाता है। अब नागरिक पहले की तरह और कई जगहों पर अब भी उस पहचान के प्रति आभारी नहीं होते जो उनसे बंधी होती है और उससे बचने का कोई रास्ता नहीं होता– ऐसी पहचान उन पर उनकी भाषा, राष्ट्र, चर्च और उनके जन्मस्थान की रिवाजों से मिलती है। इस रूप में वैश्वीकरण का स्वागत होना चाहिए क्योंकि इससे व्यक्तिगत आजादी की सीमाओं को प्रसार हुआ है।

एक महाद्वीप के दो इतिहास

सामूहिक पहचान स्थापित करने की मूर्खता और चालाकी के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण शायद लैटिन अमेरिका में देखने को मिलते हैं। लैटिन अमेरिका की सांस्कृतिक पहचान क्या हो सकती है। इस क्षेत्र की धार्मिक मान्यताओं, अभ्यास, परम्परा, रिवाज और विश्वास के संगत गठजोड़ में क्या शामिल किया जा सकता है जो एकल व्यक्तित्त्व, अद्वितीय और अहस्तांतरणीय भी हो। हमारा इतिहास बौद्धिक बहस – कुछ क्रूर – समस्याओं में जकड़ा है और इस सवाल का उत्तर लेने को कोशिश कर रहा है। सबसे अधिक प्रसारित 20वीं सदी के शुरू में हिस्पैनिस्ट इंडेनिस्ट के खिलाफ खडे हो गए और उनका अक्स पूरे महाद्वीप पर नजर आया।

जोस डी ला रिवा अगयूरो, विक्टर एंड्रेस बेलॉन्डे और फ्रांसिस्को गार्सिया कॉल्डेरोन जैसे हिस्पैनिस्ट के लिए लैटिन अमेरिका का जन्म तब हुआ था जब खोज और विजय के बाद इसने स्पैनिश और पुर्तगाली भाषा को अपनाया व ईसाई धर्म को अपनाकर पश्चिमी सभ्यता का हिस्सा बना। हिस्पैनिस्टों ने हिस्पैनिक काल से पहले की संस्कृति को छोटा नहीं किया लेकिन माना कि यह एक परत के रूप में – प्राथमिक नहीं – सामाजिक और ऐतिहासिक वास्तविकता के रूप में अपनी प्रकृति और व्यक्तित्त्व से पश्चिम के प्रभाव को धन्यवाद देते हुए पूरा किया।

दूसरी तरफ इंडेनिस्टों ने यूरोपियनो द्वारा लैटिन अमेरिका में लाभ लाने के नैतिक आक्रोश के आरोपों को खारिज कर दिया। उनके लिए हमारी पहचान, इसकी जड़ें और आत्मा हिस्पैनिक संस्कृति और सभ्यता से पहले से जुड़ी है जिसके विकास और आधुनिकता को न सिर्फ तीन सदियों के उपनिवेशवाद के दौरान बल्कि बाद में गणतंत्र ढांचे में भी हिंसा से दबाया गया और निंदा, दमन व दरकिनार किया। इंडेनिस्ट विचारकों के मुताबिक, प्रामाणिक 'अमेरिकन एक्सप्रैशन' सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में होता है; मूल भाषा से विश्वास तक, संस्कार, कला और लोकप्रिय चीजें जिन्होंने पश्चिमी संस्कृति के दबाव का विरोध किया और हमारे दिन बने रहे। इस पर पेरू उल्लेखनीय इतिहासकार के लुईस ई. वल्कार्सेल ने यहां तक कह दिया कि चर्च, मठों और उपनिवेशी वास्तुकला के स्मारकों को जला देना चाहिए क्योंकि उन्होंने पेरू के विरोध को प्रदर्शित किया। वे पाखंडी थे, जो प्राचीन अमेरिकन पहचान के विरोधी थे और वे सिर्फ स्वदेशी ही हो सकते हैं। लैटिन अमेरिका के सबसे मूल उपन्यासकार जोस मारिया अर्गुएड जीवंत नैतिक विरोध और महान विनम्रता की कहानियों में बताते हैं कि पश्चिम की

घुटन और विकृत उपस्थिति के बावजूद रेडियन विश्व में क्वेशुआ संस्कृति का बने रहना महाकाव्य है।

हिस्पैनिसिज्म और इंडिगेनिज्म ने बेहतरीन ऐतिहासिक निबंध लिखे और कथा साहित्य में उच्च रचनात्मक कार्य किया लेकिन आज के हालातों से आंकलन किया जाए तो दोनों मत एक समान रहस्यवादी, न्यूनकारी और गलत थे। इनमें से कोई भी लैटिन अमेरिका की विस्तृत विविधता को वैचारिक जाल और नस्लवाद के जहाज में समेटने में सक्षम नहीं है। आज कौन यह दावा कर सकता है कि सिर्फ 'हिस्पैनिक' या 'इंडियन' ही लैटिन अमेरिका की विरासत को दर्शाते हैं। हालांकि आज भी राजनीतिक और बौद्धिक घून हमारी 'सांस्कृतिक पहचान' को अलग करने और मिटाने में जुटी है जो चिंता का विषय है। सांस्कृतिक पहचान को लोगों पर थोपना किसी को जेल में बंद कर उसकी सबसे बहुमूल्य आजादी; कि वह कैसे और क्यों बनना चाहता है, को खत्म करने जैसा है। लैटिन अमेरिका की एक नहीं लेकिन बहुत सी सांस्कृतिक पहचानें हैं। कोई भी इस पर दूसरों से अधिक अधिकार और शुद्धता का दावा नहीं कर सकता।

निसंदेह, लैटिन अमेरिका हिस्पैनिक– पूर्व विश्व और इसकी संस्कृति का प्रतीक है जिसमें मैक्सिको, गुवांटेमाला और रेडियन देशों में अभी भी सामाजिक बल है। लेकिन लैटिन अमेरिका में पांच सदियों तक स्पैनिश और पुर्तगाली बोलने वाले लोगों की परम्परा भी रही है जिनकी उपस्थिति और कार्य प्रायद्वीप को इसके वर्तमान विशेषताएं देते हैं। और क्या लैटिन अमेरिका का अफ्रीका से भी कोई मतलब है जो यूरोप के साथ ही समुद्र तट पर आया था। क्या अफ्रीका की मौजूदगी ने हमारी त्वचा, हमारे संगीत, हमारे स्वभाव और हमारे समाज पर कोई असर नहीं डाला। संस्कृति, जातीय और सामाजिक तत्व लैटिन अमेरिका को दुनिया के सभी क्षेत्रों और संस्कृतियों से जोड़ते हैं। हमारी कई सांस्कृतिक पहचानें हैं और यह एक समान तो बिल्कुल नहीं है। वास्तविकता यह है कि राष्ट्रवादियों के विश्वास के विपरीत यह हमारी महानतम विरासत है। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है जो हमें महसूस कराता है कि हम वैश्विकृत संसार के पूर्ण नागरिक हैं।

स्थानीय आवाज, वैश्विक पहुंच

दुनिया के अमेरिकीकरण होने का डर वास्तविकता के बजाय मानसिक उन्माद है। इसमें कोई शक नहीं है कि वैश्वीकरण के साथ अंग्रेजी हमारे वक्त की आम भाषा बन चुकी है जैसे मध्यकाल में लैटिन थी। यह आगे भी ऐसा बना रहेगा क्योंकि यह भाषा अंतर्राष्ट्रीय संचार और लेन–देन की भाषा बन चुकी है। लेकिन क्या इसका मतलब यह है कि अंग्रेजी का विकास दूसरी भाषाओं की कीमत पर हो। निश्चित रूप से नहीं। दरअसल, इसके विपरीत की बात सही है। सीमाओं के खत्म होने और विश्व की परस्पर निर्भरता ने दूसरी संस्कृतियों से सीखने और नई पीढ़ी को श्रेय देने का चलन बढ़ा है। यह सिर्फ एक शौक नहीं है बलकि जरूरत की वजह से हुआ है। क्योंकि कई भाषाएं बोलने की क्षमता और दूसरी संस्कृतियों से असानी से संचालन व्यवसायिक सफलता के लिए आवश्यक हो गया है। स्पैनिश का उदाहरण देखिए। आधी सदी पहले, स्पैनिश बोलने वाले लोग आपस में ही रहने वाला समुदाय था। हमने खुद को पारंपरिक भाषाई किनारे के पार जाने वाले रास्तों पर सीमित रखा। आज स्पैनिश गतिशील और संपन्न है और समुद्री तटो, यहां तक कि पांचों महाद्वीपों में विशाल जोत की तरह बढ़ रहा

है। यह तथ्य है कि आज संयुक्त राज्य में 25 से 30 मिलियन स्पैनिश बोलने वाले लोग हैं, इसी से पता चलता है कि कुछ वक्त पहले दो यूएस राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारों, टेक्सास के गवर्नर जॉर्ज डब्ल्यू. बुश और उपराष्ट्रपति अल गौर ने न सिर्फ अंग्रेजी में बल्कि स्पैनिश में भी चुनाव प्रचार किया।

दुनिया भर के कितने युवाओं ने वैश्वीकरण से पैदा हुई चुनौतियों के जबाव में जापानी, जर्मन, मंडारियन, केंटोनीज, रूसी या फ्रेंच भाषा सीखी। सौभाग्य से यह क्षमता आने वाले दिनों में बढ़ेगी ही। यही वजह है कि हमारी संस्कृति और भाषा को बचाने का सबसे अच्छा तरीका नए संसार में उनका प्रचार करना है, न कि अंग्रेजी के खिलाफ इन भाषाओं को हथियार बनाना। जो लोग संस्कृति के बारे में ऐसी बातें कहते हैं, वे लापरवाह होते हैं जो राष्ट्रवाद का मुखौटा पहन लेते हैं। अगर संस्कृति के सार्वभौमिक झुकाव में कुछ गलत है तो वह राष्ट्रवादियों का अपवर्जनात्मक, संकीर्ण और भ्रमित नजर है जिसे वे सांस्कृतिक जीवन पर थोप रहे हैं। संस्कृति से सीखे जाने वाली सबसे अच्छा सबक यह है कि इसकी रक्षा के लिए नौकरशाहों या विभागाध्यक्षों की जरूरत नहीं है, न ही इसे सलाखों के पीछे रखने या जीवित और सक्षम रखने के लिए रिवाजों से अलग–थलग करने की आवश्यकता है। इसके विपरीत ऐसे प्रयासों से संस्कृति तुच्छ और महत्वहीन हो जाएगी। संस्कृति को मुक्त होना चाहिए और लगातार दूसरी संस्कृति के संपर्क में आना चाहिए। इससे इनमें सुधार होता है और नवीनताआती है, साथ ही जीवन की गति के साथ चलने की सक्षमता भी मिलती है। पुराने समय में भी लैटिन ने ग्रीक की हत्या नहीं की। इसके विपरीत यूनानी संस्कृति की बौद्धिक गहराई और कलात्मक मौलिकता ने रोमन सभ्यता तर कर दिया। इसके माध्यम से होमर की कविताओं और प्लैटो और अरस्तू के दर्शनशास्त्र ने पूरी दुनिया तक पहुंच बनाई। वैश्वीकरण स्थानीय संस्कृति को लुप्त नहीं होने देगा बल्कि इसके लिए दुनिया के द्वार खोलेगा। स्थानीय संस्कृति के मूल्य और असतित्व बनाए रखने में सक्षम तत्व खिलने के लिए उपजाऊ भूमि पा सकेंगे।

यूरोप में यह हर जगह हो रहा है। खासकर स्पेन में जहां क्षेत्रीय संस्कृति विशेष बल के साथ उभर रही है। जनरल फ्रांसिसको फ्रांसो की तानाशाही के दौरान क्षेत्रीय संस्कृति का दमन हुआ और निषेधित किया गया। परन्तु लोकतंत्र लौटने के साथ स्पेन की सांस्कृतिक विरासत को उभारा गया और मुक्त रूप से विकसित होने दिया गया। स्वायत्त काल में देश में स्थानीय संस्कृति को खासकर कैटालोनिया, गैलिसिया और बैस्क्यू कंट्री के साथ पूरे देश में अभूतपूर्व प्रसार मिला। निसंदेह, हमें सांस्कृतिक आजादी के लिए खतरनाक राष्ट्रवाद और सकारात्मक एंव स्मृद्ध क्षेत्रीय संस्कृति के पुर्नजन्म में भ्रमित नहीं होना चाहिए।

टी एस इलियट ने 1948 में अपने प्रसारित निबंध 'संस्कृति के परिभाषा के लिए टिप्पणी' में अनुमान लगाया था कि भविष्य में मानवता स्थानीय और क्षेत्रीय संस्कृति के पुर्नजागरण को अनुभव करेगी। एक समय पर उनकी भविष्यवाणी बहुत चुनौतीपूर्ण लग रही थी। हालांकि वैश्वीकरण ने इसे 21वीं सदी में वास्तविकता बना दिया है और हमें इसके लिए खुश होना चाहिए। छोटी और स्थानीय संस्कृतियों का उदय मानवता को वही अभिव्यक्ति और व्यवहार की समृद्ध बहुलता लौटाएगा जिसका राष्ट्र; राज्यों ने

तथाकथित राष्ट्रीय सांस्कृतिक पहचान बनाने के नाम पर 18वीं सदी के अंत और खासकर 19वीं सदी के शुरू में सत्यानाश कर दिया था। (यह तथ्य आसानी ने भुलाया जाता है या हम इसे इसके नैतिक अर्थ की वजह से भूल जाते हैं।)

राष्ट्रीय संस्कृति हमेशा खून और आग पर पली है और इसने राष्ट्र– राज्यों द्वारा आदर्श माने जाने वाले धर्मों या रिवाजों से दूरी बनाई या देशज भाषाओं के प्रकाशन या शिक्षण का रोका है। इस प्रकार दुनिया के कई देशों में राष्ट्र– राज्यों ने अधिकारिक जीवन से वंचित और दबाए गए स्थानीय लोगों पर सांस्कृतिक बल प्रयोग किया। परन्तु वैश्वीकरण से डरने वालों की चेतावनियों के बावजूद संस्कृति को पूरी तरह से मिटा पाना आसान नहीं है – भले ही उन्होंने कुछ को मिटा दिया हो, खासकर अगर इसके पीछे समृद्ध परम्परा और इसे मानने वाले लोग हों, चाहे यह रहस्य ही क्यों न हो। आज राष्ट्र– राज्यों के कमजोर होने की वजह से भुलाए जा चुकी, हाशिए पर धकेले गई और शांत स्थानीय संस्कृतियों को फिर से उदय होकर इस वैश्वीकृत ग्रह में महान सफलता के भव्य निशान पेश करते हुए देख रहे हैं।

मनोरंजन और लाभ हेतु कुछ और अध्ययन सामग्री

(और उन्नत स्कूली दस्तावेज)

पूंजीवाद की नैतिकता संबंधी असंख्य साहित्यिक रचनाएँ हैं। इनमे से अधिकतर बकवास हैं। यहाँ कुछ पुस्तकों के बारे मे बताया जा रहा है जो पठनीय हैं और आपको पूंजीवाद के बारे मे समझने मे सहायक साबित हो सकती हैं। यह लिस्ट काफी लंबी हो सकती थी, मगर बहुत सारी किताबों और लेखों के बारे मे इस लेख पूंजीवाद की नैतिकता मे पहले से उल्लेख किया गया है, जिनमे स्मिथ, माइसेस, हाएक, रैंड, मैक्लोस्की और अन्य मुक्त–बाजार पूंजीवाद के समर्थक ाामिल हैं। तो इस किताब के अंत मे उल्लिखित तथ्यों को पढ़ने से घबराएँ नहीं, किताब मे नीचे वर्णमाला के क्रम से लेखक या एडिटर को कुछ उपयोगी मानसिक व्यायाम उपलब्ध करना चाहिए।

–टॉम जी. पॉमर

बाजारों की नैतिकताएँ और संबन्धित लेख, एच. बी. एक्शन (इंडियानापोलिस लिबर्टी फंड, 1993)। ब्रिटिश तर्कशास्त्री एच. बी. एक्शन ने लाभ, प्रतिस्पर्धा, व्यक्तिवाद और संयुक्तवाद, योजना व अन्य विषयों पर बहुत ही स्पष्ट और समझदारी से लिखा था।

नैतिकता और बाजार; आधुनिक विश्व का एक विकासमूलक विवरण, डेनियल फ्रीडमैन (न्यूयॉर्क पालग्रेव मैकमिलन,2008)। लेखक ने बाजार और नैतिकता के समानान्तर विकास संबंधी परिज्ञान प्रस्तुत किया और दोनों मे सुधार के लिए कुछ विवादास्पद सुझाव भी प्रस्तुत किए।

घातक अहंकार; समाजवाद की त्रुटियाँ, एफ.ए. हायक (शिकागो; शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1988)। हायक को आर्थिक विज्ञान मे नोबल पुरस्कार मिला, लेकिन वह "मात्र अर्थशास्त्री" नहीं थे।

यह संक्षिप्त किताब–उनकी आखिरी–मुक्त–बाजार पूंजीवाद के व्यापक मामले के लिए उनकी अभिरुचियों को प्रस्तुत करने के लिए उनके तमाम शोधों को एक साथ चित्रित करती है।

पुनर्वितरण की नैतिकताएँ, बेट्रैंड डी जोवेनल द्वारा (इंडियानापोलिस लिबर्टी फंड, 1990)। यह बहुत ही छोटी सी किताब है जो प्रसिद्ध फ्रेंच राजनीति वैज्ञानिक द्वारा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे दिए गए एक व्याख्यान पर आधारित है।

इसके अध्याय छोटे व सारगर्भित हैं और यह नीतिपरक बुनियादों और आमदनी की बेहतरीन समानता हासिल करने के लिए पुनर्वितरण की कोशिश के निहितार्थ की पड़ताल करते हैं।

खोज और पूंजीवादी प्रक्रिया, इजरायल किर्जनर द्वारा (शिकागो : शिकागो विश्वविद्यालय प्रैस, 1985)। एक "आस्ट्रियन" अर्थशास्त्री ने पूंजीवाद, मध्यवर्त्यवाद, और समाजवाद की पड़ताल उद्यम के चश्मे से की और उनके पास सतर्कता, नवाचार, प्रोत्साहन और लाभ के बारे मे बताने के लिए बेहद रोचक तथ्य हैं।

बाजार की नैतिकता, जॉन मीडोक्राफ्ट द्वारा (न्यूयार्क पालग्रेव मैकमिलन, 2005)। मुक्त–बाजार पूंजीवाद के विभिन्न विरोधियों द्वारा उठाए गए मुद्दों संबंधी एक संक्षिप्त विवरण।

सद्गुणों का मूलः मानवीय प्रवृत्ति और सहयोग का उद्भव, मैट राइडली द्वारा (न्यूयार्क विकिंग, 1997)। राइडली एक जीवविज्ञानी और पेशेवर वैज्ञानिक लेखक हैं जिन्होंने विकासमूलक जीवविज्ञान के चश्मे से मानवीय व्यवहार को समझने के लिए अपनी बुद्धिमत्ता का इस्तेमाल किया। मूल, संपत्ति और व्यापार के संबंध मे उनका परिज्ञान सहायक और पढ़ने मे मनोरंजक है।

अधिकार, सहयोग और कल्याण का अर्थशास्त्र, रॉबर्ट सुडेन द्वारा (लंदनः पालग्रेव मैकमिलन, 2005)। लेखक ने खेल सिद्धान्त के माध्यम से संपत्ति और विनिमय की नैतिकता का बेहद अभिगम्य आकार प्रस्तुत किया है। गणित बहुत ही आधारभूत है (वस्तुतः) और तर्कशास्त्री डेविड ह्यूम के महान परिज्ञान को समझने मे हमारी सहायता करता है।

नैतिक बाजार; अर्थशास्त्र मे समीक्षात्मक मान्यताओं की भूमिका, पॉल जे. जैक (प्रिंसटनः प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रैस, 2008)।

इस किताब के लेख बाजार की नैतिकता के बारे मे तमाम विषयों का अन्वेषण करते हैं और खेल सिद्धांत, जीव विज्ञान, मनोविज्ञान और अन्य अभ्यासों से आधुनिक वैज्ञानिक परिज्ञान प्रस्तुत किया है।

डॉ. टॉम जी. पॉमर एटलस नेटवर्क के अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम के कार्यकारी उपाध्यक्ष हैं और शास्त्रीय उदारतावाद को आगे बढ़ाने की दिशा मे दुनिया भर मे काम कर रही टीमों का निरीक्षण करते हैं।

डॉ. पॉमर कैटो इंस्टीट्यूट के वरिष्ठ फेलो हैं, जहां वह पहले अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम के उपाध्यक्ष और मानवाधिकार प्रचार केंद्र के निदेशक रहे हैं। पॉमर, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, के हार्टफोर्ड कॉलेज के एच.बी. इयरहार्ट फेलो और जॉर्ज मैसन विश्वविद्यालय के मानवीय अध्ययन संस्थान के

उपाध्यक्ष भी रहे हैं। वह स्टूडेंट्स ऑफ लिबर्टी की सलाहकार समिति के सदस्य भी हैं। राजनीति और नैतिकता पर उनकी बहुत सारी समीक्षाएं और लेख अध्ययनशील जर्नल्स जैसे की हावर्ड जर्नल ऑफ लॉ एंड पब्लिक पॉलिसी, एथिक्स, कृतिकाल रिव्यू और कोन्स्टिट्यूशनल पोलिटिकल इकॉनमी, के अलावा कई प्रकाशनों जैसे कि, स्लेट, द वाल स्ट्रीट जर्नल, द न्यू यॉर्क टाइम्स, डाई वेल्ट, अल हयात, काइक्सिंग, द वाशिंगटन पोस्ट और द स्पेक्टेटर ऑफ लंदन मे प्रकाशित हुए हैं।

उन्होने एनापोलिस, मेरीलैंड के सेंट जोन्स कॉलेज से लिबरल आर्ट्स मे बी.ए. किया है। वाशिंगटन डी.सी., अमेरिका के कैथोलिक विश्वविद्यालय से उन्होने तर्कशास्त्र मे एम.ए. किया है और ऑक्सफर्ड विश्वविद्यालय से पॉलिटिक्स मे डाक्टरेट किया है। उनकी स्कॉलरशिप प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रैस, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस, रौटलेज और अन्य प्रकाशनों मे प्रकाशित हुई हैं और वह रियलाइजिंग लिबरटेरियन फ्रीडमैन सिद्धांत, इतिहास और कार्यप्रणाली, 2009 मे प्रकाशित।

पूंजीवाद की नैतिकता पुस्तक के अनुवादक अविनाश चंद्र वरिष्ठ पत्रकार और भारत के पहले व एकमात्र उदारवादी वेब पोर्टल आजादी.मी (www.azadi.me) के संपादक हैं। पूर्ण प्रतियोगिता युक्त मुक्त बाजार प्रणाली, सीमित सरकार, समस्त नागरिकों को समान अवसर की धारणा के समर्थक अविनाश चंद्र, वाराणसी स्थित महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ से हिंदी पत्रकारिता में स्नातकोतर की उपाधि धारक हैं। वे दैनिक जागरण व राष्ट्रीय सहारा के नई दिल्ली कार्यालय से लंबे समय तक जुड़े रहे हैं। उनके लेख व स्तंभ विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में नियमित रूप से प्रकाशित होते रहते हैं।

नोट्स

परिचय : पूंजीवाद की नैतिकता

1 रॉबर्ट नॉजिक, अनार्की, स्टेट एंड यूटोपिया (न्यूयॉर्क बेसिक बुक्स, 1974),पे. 163.

2 जोयसी अप्लेबी, द रिलेंटलेस रिवोल्यूशनः अ हिस्ट्री ऑफ कैपिटलिज्म (न्यूयॉर्क डब्ल्यू. डब्ल्यू. नोर्टन एंड कंपनी, 2010), पे. 25–26।

3 डेविड श्वाब और एलिनोर ओस्ट्रॉम, द व्हाइटल रोल ऑफ नॉर्म्स एंड रूल्स इन मेनटेनिंग ओपन पब्लिक एंड प्राइवेट इकोनॉमिक्स, इन मोरल मार्केट्सः द क्रिटिकल रोल ऑफ वैल्यूज इन द इकोनॉमी, पॉल जे. जैक द्वारा संपादित (प्रिंसटन : प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008), पे. 204–27।

4 डारड्रे मैकक्लोस्की, ब्रुजुआइस डिग्निटीः वाय इकोनॉमिक्स कैन नॉट एक्सप्लेन द मॉर्डन वर्ल्ड (शिकागो : यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रैस, 2010), पे. 48

5 तुलनात्मक फायदे के सिद्धांत की आसान अंकगणितीय विश्लेषण के लिए, देखें tomgpalmer-com/wpcontent/uploads/papers/The%20Economics%20of%20Comparative%20Advantage-doc-

6 मानवीय मामलों में अनुभव के बल में सामान्य अवनति के एक उत्कृष्ट विवरण के लिए देखें, जेम्स एल. पायनी, अ हिस्ट्री ऑफ फोर्स (सैंडपॉइंट, इडाह : लिट्टन पब्लिशिंग, 2004)।

7 उत्तेजना के तौर पर ईर्ष्या सामाजिक सहयोग और मुक्त–बाजार पूंजीवाद के लिए खतरा, कई विचारकों द्वारा अध्ययन किया गया है। एक हालिया और रोचक दृष्टिकोण जो भारतीय प्रतिष्ठित महाकाव्य महाभारत को चित्रित करता है गुरचरण दास द्वारा लिखित, द डिफिकल्टी ऑफ बीइंग गुडः ऑन द सब्टल आर्ट ऑफ धर्मा (न्यूयॉर्क ऑक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 2009), पेज 1–32।

8 फर्नांड ब्रौडेल, सिविलाइजेशन एंड कैपिटलिज्म, 15वीं से 18वीं शताब्दी : व्यापार के पहिये (न्यूयॉर्क हार्पर एवं रॉ, 1982) पे. 232।

9 उक्त, पे. 236।

10 लुईस ब्लान्स, ओर्गेनाइजेशन डू ट्रावेल, (पेरिस : ब्यूरो डे ला सोसाइटी डे इंडस्ट्री फ्रेटर्नेल, 1847), ब्रौडेल मे उल्लिखित, सिविलाइजेशन एंड कैपिटलिज्म, 15वीं से 18वीं शताब्दी द व्हील्स ऑप कॉमर्स, उक्त, उल्लिखित पे. 237.

11 कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंजल्स, मैनीफेस्टो ऑफ कम्युनिस्ट पार्टी, कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंजल्स के कलेक्टिव वर्क्स, वोल्यूम 6 (1976 : प्रोग्रेस पब्लिशर्स, मॉस्को), पेज 489।

12 मार्क्स के आर्थिक सिद्धांतों का एक विनाशकारी मौलिक आलोचना के लिए, यूजेन वॉन वावर्क – कार्ल मार्क्स एंड द क्लोज ऑफ हिज सिस्टम (1896, न्यूयॉर्क ऑगस्टस एम. केली, 1949). बोहम वावर्क के कार्यों का बेहतर शीर्षक होगा "मार्क्सवादी व्यवस्था के समापन पर"। कैपिटल के तीसरे अंक के प्रकाशन के लिए अपने शीर्षक में बोहम वावर्क संदर्भित करते है जो मार्क्सवादी प्रणाली का "निष्कर्ष" है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि बोहम वावर्क की आलोचना पूरी तरह एक आंतरिक आलोचना है, और 1870 में इकोनॉमिक साइंस के "मार्जिनल रिवोल्यूशन" के परिणामों पर निर्भर नहीं करता है। लुडविग वॉन माइसेस द्वारा लिखित निबंध "इकोनॉमिक कैलकुलेशन इन द सोशलिस्ट कॉमनवेल्थ" भी निबंध देखें। एफ ए हायेक द्वारा संपादित व आर्थिक गणना की समस्या के समाधान में सामूहिकता की असक्षमता पर आधारित कलेक्टिव इकोनॉमिक प्लानिंग (लंदन : जॉर्ज रूटलेज एंड संस, 1935)

13 कार्ल मार्क्स का, "द एटीन्थ ब्रमेयर ऑफ लुईस बोनापार्ट", डेविड फर्नबैक द्वारा संपादित कार्ल मार्क्सः सर्वेज फ्रॉम एग्जाइलः पॉलिटिकल राइटिंग्स, भाग 2 (न्यूयॉर्क विंटेज बुक्स, 1974), पृ. 186. मैं मार्क्सवादी अर्थशास्त्र और "क्लासिकल लिब्रलिज्म, मार्क्सिज्म एंड द कॉन्फ्लिक्ट ऑफ क्लासेजः द क्लासिकल थ्योरी ऑफ क्लास कॉन्फ्लिक्ट" के सामाजिक विश्लेषण, रीडिंग फ्रीडमः लिबरटेरियन थ्योरी, हिस्ट्री एंड प्रैक्टिस (वाशिंगटनः कैटो इंस्टिट्यूट, 2009) पृ. सं. 255 से 75 में विरोधाभासों और संदेहों का वर्णन करता हूं।

14 कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स, मेनिफेस्टो ऑफ कम्युनिस्ट पार्टी, पृ. 488.

15 कार्ल मार्क्स, "द एटीन्थ ब्रमेयर ऑफ लुई बोनापार्ट" पृ. 222 .

16 कार्ल मार्क्स, "द एटीन्थ ब्रमेयर ऑफ लुई बोनापार्ट" पृ. 238.

17 शर्ले एम. ग्रूनर, इकोनॉमिक मेटेरियलिज्म एंड सोशल मोरलिज्म (द हॉग : माउटन, 1973), पृ. 189–190.

18 उदाहरण के लिए , शेल्डन रिचमैन, "इज कैपिटलिज्म समथिंग गुड?" देखें, www-thefreemanonline-org/pub/columns/tgif/is&capitalism&something&good/-

19 जोसेफ शुम्पीटर, कैपिटलिज्म, सोशलिज्म एंड डेमोक्रेसी (लंदन : रूटलेज, 2006), पृ. 84.

20 डेविड बोअज, "क्रियेटिंग ए फ्रेमवर्क फॉर यूटोपिया" द फ्यूचरिस्ट, 24 दिसंबर, 1996, www-cato-org/pub_display-php\pub_id=5976-

21 कानूनी इतिहासकार हेनरी सम्नर मेन "प्रगतिशील समाजों की गतिशीलता" की व्याख्या एक पीढ़ी दर पीढ़ी संबंधों वाले परिवार आधारित सदस्यता से होते हुए व्यक्तिगत स्वतंत्रता और नागरिक समाज के आगे के तौर पर करते हैं जो कि "स्थिति से संबंधों की गतिशीलता" जैसा है। हेनरी सम्नर मेन, एनसिएंट लॉ (ब्रंसविक, एनजेः ट्रांजेक्शन पब्लिशर्स, 2003), पृ. 170 .

22 लियो मेलामेड द्वारा फॉर क्राइंग आऊट लाऊडः फ्रॉम ओपन आऊटक्राइ टू दू इलेक्ट्रॉनिक स्क्रीन में लिखा गया "रिमिनिसेंस ऑफ ए रिफ्यूजी" (होबोकेन, न्यू जर्सी : जॉन विले एंड संस, 2009), पृ. 136 .

23 मैनें गरीबी और मुक्त बाजार पूंजीवाद के मुद्दे का समाधान और अधिक व्यवस्थित ढंग से "क्लासिकल लिब्रलिज्म, पोवर्टी एंड मोरालिटी" व विलियम ए गाल्स्टोन एंड पीटर एच हॉफनबर्ग द्वारा संपादित, पोवर्टी एंड मोरालिटीः रिलीजियस एंड सेक्यूलर पर्स. पेक्टिव्स में किया है। (न्यूयॉर्क कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2010), पीपी 83–114 .

24 यह दार्शनिकों के बीच एक विशेष रूप से आम रवैया है, जिसमें से सबसे दुखद स्वर्गीय जी ए कोहेन, जिन्होंने अपनी अधिकांश बौद्धिक वृत्ति नॉजिक के एक विचार प्रयोग के खंडन की कोशिश करने और उसमें असफल रहने में व्यतीत किया रहा। कोहेन के लेख का उद्धरण और असफल लेख का प्रदर्शन रियलाइजिंग फ्रीडम में "जी ए कोहेन ऑन सेल्फ ओनरशिप, प्रॉपर्टी एंड इक्वैलिटी" में देखी जा सकती है। पीपी 139–54.

25 माइकल सैंडल के "जस्टिसः व्हाट इज द राइट थिंग टू डू?" का उद्धरण (न्यूयॉर्क फरार, स्ट्रेटस, एंड गिरॉक्स, 2009), पृ. 61.

26 मिल्टन फ्राइडमैन, कैपिटलिज्म एंड फ्रीडम (शिकागो : शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1962), पृ. 188ः "वार्षिकियों की अनिवार्य खरीद के लिए उदार सिद्धांतों पर एक संभव औचित्य यह है कि अदूरदर्शी अपने द्वारा लिए गए फैसले का परिणाम स्वयं भुगतेगा बल्कि लागत को दूसरों पर थोप सकेगा। ऐसा कहा जाता है कि हम सभी की इच्छा वृद्धावस्था में निर्धनता देखने की नहीं होती है। हम निजी और सार्वजनिक परोपकार और धर्म कर्म के द्वारा उनकी सहायता करेंगे। इस प्रकार, एक व्यक्ति जो अपनी वृद्धावस्था के लिए खर्च नहीं करता है वह सार्वजनिक उत्तरदायित्व बन जाता है। इस प्रकार एक वार्षिकी खरीदने के लिए मजबूर करना न केवल उसके लिए न्यायसंगत है बल्कि बाकी सबकी भलाई भी इसी में है।"

27 मिल्टन फ्रीडमैन, कैपिटलिज्म एंड फ्रीडम (शिकागो : शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1962), पृ. 188.

28 स्पष्टीकरण के लिए, एंथनी डी जसे कृत "लिब्रलिज्म, लूज ओर स्ट्रीक्ट", इंडिपेंडेंट रिव्यू, V-IX-N-3, विंटर 2005 पीपी 427– 432

29 एफ ए हायक, द कंस्टिट्यूशन ऑफ लिबर्टी (शिकागो : शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1960), पृ. 313.

नैतिकता का विरोधाभास

30 सौभाग्य से भिखारी एक बाहरी व्यक्ति था , यदि वह भद्रजनों के देश का होता तो विवाद अनिश्चित काल तक जारी रह सकता था।

31 ली फेंग (18 दिसंबर 1940 – 15 अगस्त 1962) पीपुल्स लिब्रेशन आर्मी में एक सैनिक था, जो 1962 में एक यातायात दुर्घटना में मृत्यु के बाद राष्ट्रीय नायक बन गया। "कामरेड ली फेंग से सबक लें" नामक एक राष्ट्रीय अभियान 1963 में शुरू किया गया। चीनी लोगों से चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी व समाजवाद के प्रति उसकी निष्ठा का अनुकरण करने को कहा गया।

एडम स्मिथ और लालच का मिथक

32 स्टीवन होम्स के पैशन एंड कॉसट्रेंट्सः ऑन द थ्योरी ऑफ लिब्रल डेमोक्रेसी में "स्वार्थ का गोपनीय इतिहास," (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागों प्रेस, 1995)

33 क्रिस्टीन काल्डवेल एम्स का उद्धरण, राइटियस पर्सिक्यूशनः इनक्विजिशन, डॉमिनिकन्स एंड क्रिस्चियानिटी इन द मिडल एजेस (फिलाडेल्फिया : यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया प्रेस, 2008), पृ. 44.

34 एडम स्मिथ, द थ्योरी ऑफ मोरल सेंटिमेंट्स, डी.डी. राफेल और ए.एल. मैकफी द्वारा एडम स्मिथ के कार्यों और पत्राचारों के ग्लासगो संस्करण का संपादन। (इंडियानापोलिसः लिबर्टी फंड, 1982) अध्याय : ए चैप्टर ऑफ ट्रू प्रशंसा वाले प्यार का, और उस प्रशंसा की पात्रता, और दोषारोपण का भय, और उस भय की पात्रता को http://oll-libertyfund-org/title/192/200125 on 2011–05–30.

35 एडम स्मिथ, द थ्योरी ऑफ मोरल सेंटिमेंट्स, डी.डी. राफेल और ए.एल. मैकफी द्वारा एडम स्मिथ के कार्यों और पत्राचारों के ग्लासगो संस्करण का संपादन। (इंडियानापोलिसः लिबर्टी फंड, 1982) अध्याय : बी अध्याय आई.बी : उस सुंदरता के बारे में जिसकी उपयोगिता की प्रस्तुति सभी कलाओं के उत्पादन पर निर्भर करता है और सुंदरता की इस प्रजाति का चरम प्रभाव http://oll-libertyfund-org/title/192/200137 2011–05–30 पर प्राप्त किया जा सकता है।

36 एडम स्मिथ, एन इंक्वायरी इंटू द नेचर एंड कॉजेज ऑफ द वेल्थ ऑफ नेशंस, भाग 1, आर. एच. कैम्पबेल व ए. एस. स्किनर द्वारा एडम स्मिथ के कार्यों व पत्रचारों के ग्लासगो संस्करण भाग 2 का संपादन (इंडियानापोलिसः लिबर्टी फंडः 1981)। अध्याय [IV- ii], अध्याय II: उन वस्तुओं के विदेशी आयात पर रोक लगाने के बाबत जिनका कि उत्पादन अपने देश में किया जा सकता है से संबंधित सूचना http://oll-libertyfund-org/title/220/217458/2313890 2010–08–23 पर प्राप्त की जा सकती है।

37 एडम स्मिथ, एन इंक्वायरी इंटू द नेचर एंड कॉजेज ऑफ द वेल्थ ऑफ नेशंस, भाग 1, आर. एच. कैम्पबेल व ए. एस. स्किनर द्वारा एडम स्मिथ के कार्यों व पत्रचारों के ग्लासगो संस्करण भाग 2 का संपादन (इंडियानापोलिसः लिबर्टी फंडः 1981)। अध्याय ख्ट. अपपप, अध्याय टप्प्रू व्यापारिक प्रणाली का निष्कर्ष। इसे http://

oll-libertyfund-org/title/200/217484/2316261 2010–08–23 पर प्राप्त किया जा सकता है।

38 "आर्थिक संबंधों की विशेषता उसके अहंकार में नहीं बल्कि इसके अत्ववाद से है"। फिलिप एच. विकस्टीड, द कॉमनसेंस ऑफ पोलिटिकल इकोनॉमी, इन्क्लूडिंग ए स्टडी ऑफ द ह्यूमन बेसिस ऑफ इकोनॉमिक लॉ (लंडनः मैकमिलन, 1910) अध्यायः अध्याय पाँच : बिजनेस एंड द इकोनॉमिक नेक्सस। इसे http://oll-libertyfund-org/title/1415/38938/104356 2010–08–23 पर प्राप्त किया जा सकता है।

39 एच. बी. एक्टन, द मोरल्स ऑफ मार्केट्स एंड रिलेटेड एसेज, डेविड गॉर्डन व जेरेमी शियरमर द्वारा संपादित (इंडियानापोलिसः लिबर्टी फंड 1993)

40 वॉल्टेयर, लेटर्स कन्सर्निंग द इंगलिश नेशन, निकोलस क्रॉक द्वारा संपादित (ऑक्सफोड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999), पृ. 43.

भारत की चुनौतियाँः आर्थिक स्वतंत्रता का असमान वितरण

41 सुधारों के बाबत कुछ अर्थशास्त्रियों ने दशकों पूर्व ही घोषणा कर दी थी, जिनमें से प्रमुख प्रोफेसर बी. आर. शिनॉय थे। आर. के. अमीन व पार्थ जे शाह द्वारा संपादित व सेंटर फॉर सिविल सोसायटी द्वारा प्रकाशित बी. आर. शिनॉय के लेखों के संग्रहों के दो भागों को देखें।

42 हुसैन व कथूरिया 2003.

43 http://www-trai-gov-in/WriteReadData/trai/upload/PressReleases/859/Press_Release_Nov11-pdf

44 सुरजीत भल्ला, 2003. उतना गरीब नहीं, उतना असमान नहीं जितना कि आप सोंचते हैं। पोवर्टी, इनइक्वालिटी एंड ग्रोथ इन इंडिया, 1950–2000. भारत सरकार के योजना आयोग के एक प्रोजेक्ट की अंतिम रिपोर्ट।

45 नेक्स्ट बिग स्पेंडर्सः इंडियाज मिडिल क्लास http://www-mckinsey-com/Insights/MGI/In_the_news/NeÛt_big_spenders_Indian_middle_class

46 भारत के विभिन्न शहरों के रेहड़ी पटरी वालों (स्ट्रीट एन्टरप्रेन्योर्स) से संबंधित अन्य समान अध्ययनों के लिए देखें, पार्थ जे शाह व नवीन मांडवा द्वारा संपादित (2005) व सेंटर फॉर सिविल सोसायटी, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित लॉ, लिबर्टी एंड लाइवलीहुडः मेकिंग ए लिविंग ऑन द स्ट्रीट।

47 लेट वालमार्ट इनः इंडियाज गवर्मेंट शुड फेवर शॉपर्स, नॉट द मिडिल मैन हू सर्व देम सो पुअरली http://www-economist-com/node/21541024

48 विस्तृत व्याख्या और ऑनलाइन याचिका बांबू इज नॉट ए ट्री के लिए देखें http://jeevika-org/livelihood&freedom&campaign/advocacy/bamboo/

49 फ्रेडर इंस्टिच्यूट, कनाडा द्वारा प्रकाशित आर्थिक स्वतंत्रता से संबंधित वैश्विक रिपोर्ट के विभिन्न संस्करणों के लिए देखें www-freetheworld-com

बाजार आधारित अर्थव्यवस्था और धन का वितरण

50 प्रोफेसर माइसेस के ग्रंडप्रोब्लेमी डेर नेशनलोकोनॉमी में पृ. सं. 201–14 दास फेस्टेंजलेटे कैपिटल द्वारा विचारों के अच्छे सौदे के अनुसरण से संबंधित तर्कों का प्रस्तुत प्रथम समुच्चय। 'एपिस्टेनोलॉजिकल प्रॉब्लेम्स ऑफ इकोनॉमिक्स' (न्यूयॉर्कः डी. वान नॉस्त्रांद, 1960 का अंग्रेजी अनुवाद) पी. पी. 217–31,

वैश्वीकरण के द्वारा मानव की भलाई

51 द फाऊंडेशन फॉर इकोनॉमिक एजुकेशन। www.fee.org

यथोचित नामों की सूची

(चीनी नाम, परिवार के नाम से सूचीबद्ध हैं)

एक्टन , एच. बी , 70
एप्पलब्वॉय, जॉइस , 9
ऐयर, अल्फ्रेड, 62
बास्तियात, फ्रेडरिक, 124
बॉडलेयर, चार्ल्स, 130
बिलॉदे, विक्टर आंद्रेस, 133
ब्लांक, लुइस, 12
बोएज, डेविड, 16, 37
बोस्किन, माइकल, 11
बोव, जोस, 130
ब्राडेल, फरनांड, 12
बुफेट, वारन, 127
बुश, जॉर्ज डब्लू, 33, 135
काल्डेरोन, फ्रांसिसको गारसिया, 133
कार्नेजी, एंड्रयू, 34
डेंग, झायोपिंग, 110, 111
डेस्कार्टिस, रेने, 130
डियोनी, ई. जे., 38
एंजेल्स, फ्रेडरिक, 12, 13
फ्रैंकलिन, बेंजामिन, 34
फ्रीडमैन, मिल्टन, 11, 18, 37
गांधी, महात्मा, 127
गांधी, राहुल, 98
गार्सिया लोर्का, फेडेरिको, 132
गेट्स, बिल, 25, 34, 70
गोर, अल, 38, 125
गुवेरा, अर्नेस्टो, ची, 130
ग्रूनर, शर्ले, 14
हेर, रिचर्ड, 62
हायक, एफ. ए., 110
होल्म्स, स्टीवन, 67
ह्यूम, डेविड, 39, 62, 121, 128
जीसस, 83
कांत, इम्मेनुअल, 61, 62
क्रॉथेमर, चार्ल्स, 38
कुमार, नितीश, 97, 98
ली, फेंग, 53, 54
ली, मिंग, 59
ली, रूझेन, 49,50, 52
लॉक, जॉन, 5, 39
मन्डेविले, बर्नार्ड, 73
मिल, जॉन स्टुअर्ट, 127
मोन्टेने, माइकल डे, 130
माओ, जेडांग (चेयरमैन), 49
मार्क्स, कार्ल, 12, 61
मैकक्लोस्की, डारड्रे, 31, 33
मेलामेड, लियो, 17
माइसेस, लुडविग वॉन, 41, 100
मोलिएरे (जीन–बापटिस्ट पोक्वेलिन), 130
मॉकेर, जोएल, 36
मूरे, जॉर्ज, 62
मुगाबे, रॉबर्ट, 108
मुरे, चार्ल्स, 38
नॉर्बर्ग, जॉन, 116
नॉजिक, रॉबर्ट, 9, 18, 79
ओबामा, बराक, 30, 31, 73
ऑस्ट्रॉम, एलिनर, 9
पायने, थॉमस, 72
पारेटो, विल्फ्रेटो, 105
पेरोट, एच. रॉस, 11

प्राऊस्ट, मार्सेल, 132
रैसिने, जीन, 130
रैंड, आयन, 18, 24, 72, 74, 80
राव, नरसिम्हा, 90
रावलिंग्स, जेरी, 115
रॉल्स, जॉन, 78
रीगन, रोनाल्ड, 31
रिवा, एगुवेरो, जोस, डे, ला, 132
रॉबेसपियरे, मैक्सिमिलिएन, 108
रोमन्स, हुमबर्ट डे, 67
सैंडल, माइकल, 18
श्चामा, साइमन, 127
श्चमिट, बर्टेल, 111
शुम्पीटर, जोसेफ, 9, 15, 106
श्वाब, डेविड, 9
सिंह, मनमोहन, 90
स्मिथ, एडम 5, 8, 19, 39, 67, 71, 73, 127
सोमबार्ट, वर्नर, 12, 14
सोरोस, जॉर्ज, 37, 39, 70
सोटो, हर्नान्डो डे, 118
स्टोन, ओलिवर, 69
टावने, आर. एच. 77, 79
त्स्वांगिराइ, मॉर्गन, 108
वॉल्टेयर (फ्रैंक्वायस– मेरिए– एरोटे), 71
विकस्टीड, फिलिप, 69
विलियम्स, वाल्टर, 111
विन्फ्रे, ओप्रा, 68
वुल्फ, वर्जिनिया, 132

फ्रेडरिक न्यूमन स्टिफटुंग फर डी फ्रेहाइट

फ्रेडरिक न्यूमन स्टिफटुंग फर डी फ्रेहाइट उदारवादी राजनीति के लिए फाउंडेशन है। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पहले जर्मन राष्ट्रपति बने थियोडोर हिस और अन्य लोगों ने मिलकर 1958 में इसकी स्थापना की। यह फाउंडेशन दुनियाभर के साठ देशों में लिबर्टी के विचारों को प्रोत्साहित करने और स्वतंत्रता के लिए रणनीति बनाने के लिए काम करता है। नागरिक शिक्षा, राजनीतिक सलाह और राजनीतिक संवाद हमारे साधन हैं।

फ्रेडरिक न्यूमन स्टिफटुंग फर डी फ्रेहाइट अपनी विशेषज्ञता को स्वतंत्रता, लोकतंत्र, बाजार अर्थव्यवस्था और कानून के शासन को मजबूत और शक्तिशाली बनाने के लिए उपलब्ध कराता है। विश्वभर में अपनी तरह के अकेले उदारवादी संगठन होने के नाते फाउंडेशन स्वतंत्रता के भविष्य के लिए जमीन बनाने की भूमिका निभाता है। यह भावी पीढ़ियों के प्रति उसकी जिम्मेदारी है।

दक्षिण एशिया में सहिष्णुता की सशक्त परंपरा और एक बढ़ता हुआ मध्यम वर्ग है जो अपने को प्रतिपादित कर रहा है और उदारवादी अर्थव्यवस्था को विकसित कर रहा है।

इस माहौल में फाउंडेशन कई भागीदार संगठनों के साथ लोकतंत्र की संरचना, कानून के शासन के लिए काम कर रहा है। एफएनएफ के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए देखें – www.southasia.fnst.org

सेंटर फॉर सिविल सोसायटी के बारे में

सेंटर फॉर सिविल सोसायटी लोकनीतियों के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देता है। शिक्षा, आजीविका व नीति प्रशिक्षण के क्षेत्र में हमारे द्वारा किये जाने वाले कार्य सार्वजनिक व निजी क्षेत्र में विकल्प व जवाबदेही को प्रोत्साहित करते हैं। नीतियों को व्यवहार में लाने हेतु हम शोधकार्यों, पायलट प्रोजेक्ट्स व एडवोकेसी की सहायता से पॉलिसी लीडर्स और ओपिनियन लीडर्स को संबद्ध रखते हैं।

हमारी परिकल्पना समाज के प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत, आर्थिक और राजनैतिक जीवन में विकल्प उपलब्ध कराना व सभी संस्थाओं को जवाबदेह बनाना है।

शोध। पहुंच। हिमायत

सभी के लिए शिक्षाः शिक्षा सुधार पहल

आजीविका के क्षेत्र की बाधाओं को दूर करनाः जीविका अभियान

नव विचारों से युक्त नए नेतृत्व का विकास करनाः सीसीएस एकेडमी

हिंदीभाषियों के लिए सर्वश्रेष्ठ उदारवादी विचारधारा प्रस्तुत करनाः www.azadi.me आजादी.मी

सार्वजनिक शासन में बेगारी, धोखाधड़ी व दुरुपयोग को कम करनाः गुड गवर्नेंस

"कुछ बातें शीर्षक के बारे में। पूंजीवाद की नैतिकता का एक निश्चित क्रम है। पुस्तक में सम्मिलित निबंध अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र, इतिहास, साहित्य व अन्य विषयों पर आधारित हैं। 'पूंजीवाद' शब्द से तात्पर्य यहां केवल वस्तुओं और सेवाओं के विनमय से युक्त बाजार प्रणाली से नहीं है, जैसा कि अत्यंत प्राचीन समय से अस्तित्व में रहा है। बल्कि इसका तात्पर्य नवाचार, धन के सृजन और सामाजिक परिवर्तन की उस प्रणाली से है, जिससे करोड़ों लोगों का जीवन समृद्धि युक्त हो सका और जो पूर्व की पीढ़ियों के लिए अकल्पनीय था।

मुक्त बाजार युक्त पूंजीवाद की सर्वश्रेष्ठ आलोचनाओं को पढ़ें। मार्क्स, सोम्बार्ट, रॉल्स, सैंदल को पढ़ें। उनके द्वारा सहमत होने के लिए भी तैयार रहें। उनके बारे में विचार करें। यहां जो प्रस्तुत किया गया है वह बहस का दूसरा पहलू है, वह पहलू जिसके अस्तित्व में होने की बात को वास्तव में यदा कदा ही स्वीकार किया जाता है। तो, आगे बढ़ें, एक मौका लें। इस पुस्तक में प्रस्तुत निबंधों में दिए गए तर्कों के साथ गुत्थम गुत्थी करें। उनके बारे में सोच विचार करें। तत्पश्चात अपनी राय कायम करें।"

टॉम जी. पॉमर
प्रस्तावना का एक अंश

"पूंजीवाद, सदैव से सामाजिक सहकारिता का जबर्दस्त माध्यम रहा है। और यही वह फ़साना है जिसे बताने की जरूरत है। हमें रिवायत को परिवर्तित करने की जरूरत है। नैतिक दृष्टि के आधार पर हमें पूंजीवाद के फ़साने के वर्णन को परिवर्तित करने की जरूर है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि पूंजीवाद से तात्पर्य विनिमय मूल्यों का सृजन करना है, न केवल कुछ लोगों के लिए बल्कि सभी लोगों के लिए। यदि लोग उस नजरिए से इसे देख सकें जिससे कि मैं इसे देखता हूं, लोग पूंजीवाद को उतना ही अधिक प्रेम करेंगे जितना कि मैं करता हूं।"

जॉन मैक्केय
व्होल फूड्स मार्केट के सह संस्थापक

ATLAS NETWORK
FÜR DIE FREIHEIT